पंजीयन : UTTHIN/2012/48352

अविरामसाहित्यिकी

समग्र साहित्य की समकालीन त्रैमासिक पत्रिका

।।सामाजिक–राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के उन्नयन को समर्पित।।

श्री मधुदीप (स्मृतिशेष)

(01 मई 1950 – 11 जनवरी 2022)

खंड (वर्ष) : 11/अंक : 4
जनवरी–मार्च 2023

लघुकथा विशेषांक :

लघुकथाकार (स्मृतिशेष) मधुदीप जी के योगदान पर केन्द्रित

प्रधान सम्पादिका : **मध्यमा गुप्ता**

अंक सम्पादक : **डा. उमेश महादोषी**

।।माइक पर/उमेश महादोषी।।

■ मधुदीप जी दैहिक रूप में आज हमारे बीच नहीं हैं किन्तु क्या हममें से कोई कह सकता है कि मधुदीप जी आज हमारे बीच नहीं हैं? निश्चित रूप से नहीं! एक सुगन्ध है, जिसमें वे हैं। एक भावना है, जिसमें वे हैं। और भावना का प्रेरक जो यथार्थ है, उसमें भी वे हैं। वास्तविकता तो यह है कि यथार्थ ने ही उन्हें जीवन देकर भावना के उन्नयन और सुगन्ध के विस्तार में समाहित किया। यदि ऐसा नहीं होता तो इक्कीसवीं सदी में किसी ने उनका नाम नहीं सुना होता। सेतु, हेतु और परिणाम के पड़ावों से गुजरती यात्रा के साक्षी बिरले ही बन पाते हैं। मधुदीप जी के सन्दर्भ में लघुकथा श्रृंखला 'पड़ाव और पड़ताल' उतना महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण दिशा प्रकाशन, दिशा सम्मान भी नहीं हैं, महत्वपूर्ण 'नमिता सिंह' के माध्यम से लघुकथा के पात्रों की सक्रियता एवं साहस का रेखांकन भी नहीं है, 'लघुकथा के समीक्षा–बिन्दु' के माध्यम से लघुकथा को विभिन्न कोणों से समझने का आधार भी महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह भी नहीं है कि उन्होंने लघुकथा में कितनी प्रतिभाओं को रेखांकित किया या उन्होंने अपने सृजन एवं सम्पादन से लघुकथा में कितने सरोकारों को उभारा। अधिक महत्वपूर्ण है इस सबकी आवश्यकता को समझना और उस समझ को एक वेगवान प्रवाह का आकार देने के लिए साहस की आवश्यकता को दर्शाना। महत्वपूर्ण है– जो नहीं है, उसकी कल्पना करना। महत्वपूर्ण है– संकल्पों और सिद्दत की परिधि को विस्तार देना। 1995 में चादर तानकर सो गये मधुदीप जी 2013 में जिस बेचैनी की मुद्रा में वापस लौटे थे, अक्षत ऊर्जा–भण्डार के साथ उस बेचैनी के पीछे ये और ऐसी ही महत्वपूर्ण चीजें थीं। मधुदीप जी को हम इसी के लिए जानेंगे। इसी के लिए वे हमारे बीच रहेंगे। भले मेरा अध्ययन बहुत व्यापक नहीं है तदापि मेरी जिज्ञासा यह जानने में रहेगी कि ऊर्जा, समझ और साहस का यह सम्मिश्रण भारतेन्दु हरिश्चंद के बाद और किन–किन साहित्यिक व्यक्तित्वों में रहा होगा।

■ मधुदीप जी की योजनाओं में अनेक मित्र सहभागी बने, अनेक मित्रों का अविस्मरणीय सहयोग उन्हें मिला किन्तु एक सहयोगी, प्रेरक व प्रोत्साहक की भूमिका में डॉ.बलराम अग्रवाल उनके साथ कदम–कदम पर देखे गये। एक बात और, मधुदीप जी मुझसे कई बार साझा करते थे, श्रद्धेय डॉ. कमल किशोर गोयनका साहब ने जैसा और जितना प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन इस यात्रा में दिया, वह अतुलनीय है। लघुकथा के सच्चे हितैषी डॉ.गोयनका साहब ने 'लघुकथा का समय' पुस्तक में मधुदीप जी व लघुकथा के बारे में कई महत्वपूर्ण बातें कही हैं, इसी दृष्टि से उनके आलेख को उनके ग्रंथ से साभार प्रस्तुत किया है।

■ लघुकथा में मधुदीप जी का महत्व सम्पादन एवं अन्य योजनाओं तक ही सीमित नहीं है, लघुकथा–सृजन में उनकी प्रतिभा एवं मौलिकता भी असंदिग्ध है। उसे कमतर नहीं आँका जा सकता। उनकी शैली और प्रस्तुतीकरण अन्यों से बहुत भिन्न है। इस पर अधिकांश मित्रों ने अपने आलेखों में प्रकाश डाला है। येनकेन प्रकारेण मधुदीप जी से जुड़ी सभी आवश्यक बातें किसी न किसी आलेख का हिस्सा बन गयी हैं। 'मधुदीप : लघुकथा–सृजन के विविध आयाम' ग्रंथ से भी कुछ आलेखों के प्रमुख अंशों (संक्षिप्तीकरण के रूप में) का उपयोग इस अंक में किया गया है, उनके लेखकों सहित सहयोग के लिए सभी मित्रों का आभार!

■ आर.एन.आई. का पंजीयन समय पर समर्पित हो सका तो यह अंक अविराम साहित्यिकी का अंतिम अंक होगा। किन्तु इण्टरनेट पर अविराम ब्लॉग, यूट्यूब (अविरामवाणी) एवं अन्य योजनाओं के माध्यम से हमारा रिश्ता बना रहेगा। जो आजीवन सदस्य अपना आनुपातिक शुल्क वापस लेना चाहें, वे ईमेल या ह्वाट्सएप 9458929004 पर संपर्क कर सकते हैं। ■

अविरामसाहित्यिकी

समग्र साहित्य की समकालीन त्रैमासिक पत्रिका

खंड (वर्ष) : 11/अंक : 4
जनवरी–मार्च 2023

युवावस्था में मधुदीप जी जीवनसंगिनी शकुन्तल दीप जी के साथ

प्रधान सम्पादिका : **मध्यमा गुप्ता**
अंक सम्पादक : **डॉ. उमेश महादोषी**
संयुक्त सम्पादिका : **डॉ. संध्या तिवारी**
सह सम्पादिका : **ज्योत्स्ना कपिल**

संपर्क (प्रकाशन/रचना सामग्री प्रेषण हेतु):
ई–मेल : aviramsahityaki@gmail.com
121, इन्द्रापुरम, निकट बीडीए कॉलोनी, बदायूँ रोड, बरेली–243001, उ.प्र./मो. 09458929004**(सूचना हेतु)**

स्थायी कार्यालय :
एफ–488/2, गली सं. 11, राजेन्द्र नगर, रुड़की, जिला–हरिद्वार–247667, उ.खण्ड
न्यायिक क्षेत्र : रुड़की (हरिद्वार)

इन्टरनेट पर उमेश महादोषी संचालित ब्लाग :
http://aviramsahitya.blogspot.com
सम्पादन परामर्श : **डॉ. सुरेश सपन**
मुद्रण सहयोगी : **पवन कुमार**

कृपया अगली सूचना तक कोई शुल्क न भेजें।

अविराम साहित्यिकी की प्रकाशन तिथियाँ हैं– क्रमशः 14 मई, 14 अगस्त, 14 नवम्बर व 14 फरवरी। सभी संबन्धितों को प्रेषण प्रकाशन तिथि के एक सप्ताह में। प्रकाशित सामग्री से संपादक/प्रबंधन की सहमति आवश्यक नहीं है। रचनाओं पर पारिश्रमिक देय नहीं। ईमेल से रचनाएँ मेल बाक्स में पेस्ट करके या वर्ड 2007 या पेजमेकर में ही भेजें। पीडीएफ या स्केन (फोटो) रूप में रचनाएँ स्वीकार्य नहीं होंगी।

आवरण चित्र :
डॉ. बलराम अग्रवाल

एक प्रति का मूल्य : रु. **25/–**, पाठक सदस्यता : त्रैवार्षिक रु. **300/–**, आजीवन रु. **1100/–**
(पाठक सदस्यता शुल्क 'अविराम साहित्यिकी' के अंकों की एक–एक प्रति साधारण डाक से भेजने का शुल्क है, रचनाओं के प्रकाशन से शुल्क का कोई संबंध नहीं है। प्राप्त शुल्क वापस नहीं किया जायेगा।)
(सभी राशियाँ 'अविराम साहित्यिकी' के पक्ष में ही बरेली पर देय सी.टी.एस.–2010 चैक या माँग ड्राफ्ट या विवरण की सूचना हमें देते हुए पंजाब नेशनल बैंक, बायपास रोड, बरेली में 'अविराम साहित्यिकी'के खाता 03401131002357 (आईएफएस कोड PUNB0223410) में नकद जमा या इलेक्ट्रानिक अन्तरण द्वारा ही भेजें। धनादेश द्वारा राशि कदापि न भेजें। विज्ञापन हेतु उमेश महादोषी से पूछताछ करें।)

सम्पादन/प्रकाशन/प्रबन्धन पूर्णतः अव्यवसायिक व अवैतनिक

प्रैस लाइन

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक श्रीमती मध्यमा गुप्ता द्वारा पवन ऑफसैट प्रिंटर्स, 60, पूर्वा दीनदयाल, रुड़की, जिला हरिद्वार (उत्तराखण्ड) से मुद्रित करवाकर एफ–488/2, गली संख्या 11, राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला–हरिद्वार (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।

।।सामग्री।।

लघुकथा में (स्मृतिशेष) मधुदीप जी के योगदान पर केन्द्रित आयोजन

भावभूमि की पृष्ठभूमि (3)

विशेष आलेख

डॉ. कमल किशोर गोयनका (4)

मित्रों के स्मृति पटल पर

भगीरथ परिहार (8)
डॉ. बलराम अग्रवाल (9)
प्रो. बी. एल. आच्छा (13)
प्रो. प्रबोध कुमार गोविल (17)
कुमार नरेन्द्र (18)
अशोक वर्मा (21)
सन्तोष सुपेकर (22)
डॉ. चन्द्रेश कुमार छतलानी (23)
डॉ.लता अग्रवाल 'तुलजा' (25)
अंतरा करवड़े (27)
सुधीर (28)

संस्मरणात्मक कहानी

मधुकान्त (29)

लघुकथा–सृजन के आयाम

डॉ. सतीश दुबे (33)
सूर्यकान्त नागर (35)
डॉ. अनीता राकेश (38)
डॉ. शोभा जैन (42)
डॉ. जितेन्द्र 'जीतू' (47)
डॉ. ध्रुव कुमार (52)
डॉ. पुरुषोत्तम दुबे (56)
डॉ. शील कौशिक (60)
शराफत अली खान (63)
शशि बंसल गोयल (65)
दिव्या शर्मा (68)
डॉ. संध्या तिवारी (71)
ज्योत्स्ना कपिल (74)

छाया दृष्टि

मधुदीप जी की साहित्यिक यात्रा के कुछ चित्रात्मक पड़ाव (76 व आवरण 4)

मधुदीप जी का लघुकथा सृजन

'मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ'एवं 'मधुदीप : लघुकथा–सृजन के विभिध आयाम' से मधुदीप की 20 लघुकथाएँ (80)

कथा प्रवाह (कुछ लघुकथाएँ)

कुमार नरेन्द्र / संतोष सुपेकर (92)
पुष्पा मेहरा (93)

स्तम्भ

माइक पर : संपादकीय (आवरण 2)
गतिविधियाँ (95)
प्राप्ति स्वीकार (आवरण 3)

↑ जीवन के हर कदम पर साझीदार : दिशा प्रकाशन के स्टाल पर भाभीजी श्रीमती शकुन्त दीप एवं भाई साहब मधुदीप जी

{मधुदीप जी अपने व्यक्तित्व, रचनात्मकता और सम्पादन सभी स्तरों पर लघुकथा की सभी पीढ़ियों के मध्य न केवल लोकप्रिय हुए, सभी के चहेते और प्रेरक भी बने। ऐसे में उनके जैसे शिखर पुरुष के परिचय की औपचारिकता का उद्देश्य शोधादि के दृष्टिगत अकादमिक सन्दर्भ की अपेक्षा–पूर्ति से अधिक कुछ नहीं हो सकता। हम इसी विनम्र भाव को हृदयस्थ करके उनके संक्षिप्त जीवन–वृत्त को प्रस्तुत कर रहे हैं।}

मधुदीप

पारिवारिक/अभिलेखीय नाम : महावीर प्रसाद गुप्ता

t ƛe : 01.05.1950 को दुजाना, हरियाणा में।

देहावसान : 11.01.2022, दिल्ली के एक अस्पताल में।

शिक्षा : स्नातक (कला)।

माता : श्रीमती धनवन्ती देवी/**पिता** : श्री भगवान दास

जीवन सहचरी : श्रीमती शकुन्तला गुप्ता उर्फ शकुन्त दीप

भाई–बहनें : स्वयं सहित दो भाई व छः बहिनों में सबसे बड़े।

परिवार : इष्ट–मित्र और सम्बन्धी।

लेखन/प्रकाशन/योगदान :

मूल लेखन विधा : लघुकथा/**अन्य प्रमुख विधाएँ** : कहानी, उपन्यास एवं कविता।

मौलिक प्रकाशित पुस्तकें : लघुकथा संग्रह– मेरी बात तेरी बात, समय का पहिया... एवं मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ (पुस्तकाकार अनुवाद– बृज भाषा में : रजनीश दीक्षित/अंग्रेजी में : डॉ. हेमंत गहलोत)। मधुदीप की 66 लघुकथाएँ और उनकी पड़ताल (लघुकथा संग्रह व मूल्यांकन, संपादक डॉ.उमेश महादोषी/अंग्रेजी में 66 laghukathas by Madhudeep, Translated by Dr Hemant Gahlot)। छोटा होता आदमी (कहानी संग्रह), हिस्से का दूध (कहानी व लघुकथा संग्रह)। एक यात्रा अन्तहीन, उजाले की ओर, और भोर भई, पराभव, लौटने तक एवं कल की बात/अंग्रेजी में It was Yesterday (उपन्यास), ऐसे बनो बहादुर (बाल उपन्यास)। शुभ प्रभात, Love You! (कविता संग्रह, अंग्रेजी अनुवाद : कल्पना भट्ट)।

संपादन : तनी हुई मुट्ठियाँ व नई सदी की धमक (लघुकथा संकलन), पड़ाव और पड़ताल (लघुकथा एवं समालोचना संकलन श्रृंखला) के प्रकाशित 31 में से 24 खण्डों का सम्पादन, दो सम्पादित खण्ड अप्रकाशित। सभी 33 खण्डों का संयोजन। तीसरा महायुद्ध, आसरा व एक कदम और (कहानी संकलन)। लघुकथा के समीक्षा–बिन्दु (समालोचना सिद्धान्त), 'लघुकथा की पडताल' खण्ड–1 (पड़ाव और पड़ताल के पहले 15 खंडों की समीक्षा)। दूसरा खण्ड अप्रकाशित। 'विश्व हिन्दी लघुकथाकार निर्देशिका' (सक्रिय लघुकथाकारों का सम्पर्क–संचयन)। 'विश्व हिन्दी लघुकथाकार कोश' (लघुकथाकारों का परिचय–कोश, सम्पादन डॉ.बलराम अग्रवाल के साथ)।

विशेष : 1. मधुदीप की नमिता सिंह (लघुकथा 'नमिता सिंह' की 53 समीक्षकों द्वारा समीक्षाएँ, सम्पादक : डॉ.मधुकान्त)। 2. मधुदीप : लघुकथा–सृजन के विविध आयाम (मधुदीप के लघुकथा–सृजन एवं सम्पादन कर्म का मूल्यांकन, सम्पादक : डॉ. उमेश महादोषी)। 3. लघुकथा के उन्नयन हेतु 'दिशा सम्मान' (वरिष्ठ लघुकथाकारों को देय) तथा 'युवा दिशा सम्मान' (नए लघुकथाकारों को देय) की स्थापना। 4. दिशा प्रकाशन के माध्यम से लघुकथा के उन्नयन हेतु लघुकथा संकलन श्रृंखला 'मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ' को प्रोन्नत किया। 5. नये लघुकथाकारों के लिए 'शकुन्तदीप स्मृति लघुकथा संग्रह प्रकाशन योजना' क्रियान्वित।

शेष पृष्ठ 28 पर

{इस खण्ड में 'लघुकथा का समय' पुस्तक से साभार प्रस्तुत मधुदीप जी के सन्दर्भ में श्रद्धेय गोयनका साहब का आलेख अत्यंत महत्वपूर्ण है। लघुकथा की 'पड़ाव और पड़ताल'श्रंखला को आगे बढ़ाने में मधुदीप जी को गोयनका साहब से मिली प्रेरणा, आशीर्वाद और सहयोग अतुलनीय था। इस आलेख में गोयनका साहब ने जो कुछ कहा है, आलोचकीय दृष्टि से मधुदीप जी को समझने में बहुत सहायक होगा।}

डॉ. कमल किशोर गोयनका

लघुकथा और मधुदीप

साहित्य का क्षेत्र सभी के लिए समान रूप से खुला है। संभवतः अपनी इसी धारणा के अंतर्गत मधुदीप एक ऐसा प्रस्ताव लेकर मेरे सामने आए थे जो मेरे लिए तब सर्वथा नया न होकर भी नया ही था। यह 1988 के मध्य किसी माह की बात है जब मधुदीप 'पड़ाव और पड़ताल' नाम की एक स्वयं द्वारा संपादित पांडुलिपि लेकर मेरे पास आये थे। उनका आग्रह था कि मैं उस पांडुलिपि के आधार लेख के रूप में लघुकथा पर कुछ लिखकर दूँ। उनके इस आग्रह से पहले मैंने डॉ. सतीश दुबे के लघुकथा–संग्रह 'सिसकता उजास' पर एक समीक्षात्मक टिप्पणी ही लिखी थी, बस। नवलेखन को सहानुभूतिपूर्वक देखना प्रारंभ से मेरे आचरण में रहा है। लेकिन यह नवलेखन के साथ–साथ नई विधा का भी मामला था। सर्वथा नई विधा पर आधार लेख लिखना निश्चित रूप से एक चुनौतीपूर्ण कार्य था; इसलिए मधुदीप के आग्रह को एकाएक टाल देना मैंने उचित नहीं समझा। 'हाँ' कर दी। लघुकथा के कुछेक तत्कालीन रुझानों और रवैयों का अध्ययन करके मैंने तब 'लघुकथा : कुछ विचारणीय प्रश्न' शीर्षक लेख लिखा जो 'पड़ाव और पड़ताल' (प्र.सं. 1988) में प्रकाशित हुआ।

मधुदीप के उस समय तक 6 उपन्यास और एक कहानी–संग्रह प्रकाशित हो चुके थे; यानी वह भी ठीक–ठाक लेखन के बाद लघुकथा में आये थे, नये मुल्ला नहीं थे। देखा जाए तो इस तरह 'पड़ाव और पड़ताल' का संपादक और भूमिका लेखक दोनों ही लघुकथा से बाहर के व्यक्ति थे। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ कि बाद के अनेक वर्षों तक कुछ कूप–मंडूकों ने आलोचक के तौर पर लघुकथा में मेरे प्रवेश को 'बाहरी व्यक्ति' की घुसपैठ करार दिया। दुर्भाग्य से, वे आज जीवित नहीं हैं; होते तो देखते कि लघुकथा के बाहरवाले दो व्यक्तियों का रोपा वह पौधा आज 25 महत्त्वपूर्ण शाखाओं वाला ऊँचा और घना वटवृक्ष बन चुका है जिसकी 100 से ऊपर हरी–भरी शाखाओं पर विभिन्न रंग, रूप और स्वरवाले परिंदे चहचहा रहे हैं और जिसकी विस्तृत छाँह तले भविष्य में भी कितने ही प्राणी बहुत कुछ सीख और गुन सकेंगे।

मधुदीप पहली मुलाकात से ही मुझे संकल्पवान व्यक्ति लगे। वह उपन्यास और कहानी–लेखन से लघुकथा–लेखन में आए थे; लेकिन लघुकथा को उन्होंने कभी भी अपने लेखन की तीसरी विधा नहीं माना, इसके प्रति प्रारंभ से ही समर्पण–भाव रखा। लघुकथा–लेखन में वह कब आये, मुझे नहीं मालूम। मैं बस इतना जानता हूँ कि उन्होंने अपने समय के बहुत–से लघुकथाकारों की तरह धड़ाधड़ लघुकथाएँ नहीं लिखीं। उन्होंने अपनी लघुकथाओं

की संख्या पर कम उनकी गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित रखने का प्रयास अधिक किया। सन् 1995 में प्रकाशित उनके लघुकथा–संग्रह 'मेरी बात तेरी बात' में मात्र 30 लघुकथाएँ थीं। उन लघुकथाओं से अलग उस संग्रह के बाद उनकी कोई लघुकथा किसी पत्र–पत्रिका में प्रकाशित हुई हो, उसका मुझे ज्ञान नहीं है। मेरा अनुमान है कि ये ही लघुकथाएँ 1988 में प्रकाशित उनके कथा–संग्रह 'हिस्से का दूध' में उनकी कुछ कहानियों के साथ संगृहीत थीं; तात्पर्य यह कि 1988 से लेकर 1995 तक की अवधि में उन्होंने कोई नई लघुकथा नहीं लिखी थी।

अब, संभवतः 2013 से, उन्होंने लघुकथा–लेखन की दूसरी पारी शुरू की है। 25 साल के लम्बे अन्तराल के बाद उनका तन–मन और धन ही नहीं, मजबूत कलम के साथ पुनः लघुकथा विधा के उन्नयन के लिए कूद पड़ना ही वह कारण है जिसकी वजह से मेरे इस विश्वास को बल मिला कि मधुदीप एक संकल्पवान व्यक्ति हैं। दूसरी पारी में लिखित नई लघुकथाओं के साथ वर्ष 2015 में प्रकाशित उनका लघुकथा–संग्रह 'समय का पहिया...' इस बात का प्रमाण है कि प्रकाशन और संपादन के साथ–साथ वे लघुकथा–लेखन में भी पूरी शक्ति के साथ संलग्न हैं।

उनकी पहले दौर की जिन लघुकथाओं के कथ्य मुझे अभी भी प्रिय हैं, उनमें 'अस्तित्वहीन नहीं', 'ऐलान–ए–बगावत' और 'हिस्से का दूध' का नाम मैं विशेष रूप से लेना पसन्द करूँगा। समाज में व्यक्ति की स्थिति को जितना त्रासद बेरोजगारी बनाती है, अल्प वित्त पोषण भी उसे उतना ही दीन–हीन बनाता है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि भारतीय समाज की आधे से अधिक आबादी आज भी अल्प वित्त पोषित आबादी है। बहुत से परिवारों में आज भी बच्चे को 'हिस्से का दूध' अतिथि की चाय की भेंट चढ़ाना पड़ जाता है। मधुदीप की अधिकतर लघुकथाओं के कथ्य आर्थिक अभावों की पीड़ा को शब्द देते हैं, तथापि तत्कालीन राजनीति के घिनौने हो चुके चेहरे पर से नकाब हटाने का प्रयास भी उनकी कुछेक लघुकथाओं में हुआ अवश्य है।

मैं प्रारम्भ से ही लघुकथा को 'लेखकविहीन विधा' कहता और मानता आया हूँ। अध्ययन सम्बन्धी किंचित् अस्पष्टता के कारण बलराम अग्रवाल ने इसका गलत अर्थ ग्रहण किया और 'अवध पुष्पांजलि' पत्रिका के एक अंक में लेख लिखकर 'लेखकविहीनता' की मेरी अवधारणा पर अपना विरोध जताया; लेकिन बाद में मेरे समझाने पर इस सिद्धान्त से वह सहमत हो गया। आज स्थिति यह है कि वह स्वयं मेरी इस अवधारणा का अर्थ और लघुकथा में उसके प्रभाव से दूसरे लेखकों को परिचित कराने का यत्न करता है। इधर, अपने दूसरे लघुकथा–संग्रह 'समय का पहिया...' की कुछेक लघुकथाओं में मधुदीप ने कथा–कथन की 'सूत्रधार शैली' का प्रयोग किया है। यथा, ''तो पाठको! यह चालीस वर्ष का किस्सा यहीं समाप्त होता है। अब आप इसे लघुकथा मानें या न मानें, इसका निर्णय मैं आप पर ही छोड़ता हूँ।'' (समय बहुत बेरहम होता है)। ''तो पाठको! आप मुझे कौन–से विकल्प की सलाह देते हैं? शायद आपकी सलाह ही मुझे उलझन से बाहर निकाल सके।'' (विकल्प)। ''तो पाठको! यह किस्सा यूँ समाप्त होता है कि...'' (किस्सा इतना ही है)। यह शैली कुछ पाठकों को उक्त लघुकथाओं में लेखक के आ उपस्थित होने का भ्रम दे सकती है। मैं स्पष्ट कर दूँ कि लघुकथा में लेखक का आ उपस्थित होना इससे एकदम अलग स्थिति होती है। लेखक द्वारा पाठक से एकत्व स्थापित करने के

प्रयास को रचना में उसका उपस्थित होना नहीं माना जाता है। लघुकथा में लेखक इससे अलग, एक नहीं अनेक प्रकार से आ उपस्थित होने की गलती अक्सर ही कर बैठता है। उनमें से एक यह है कि उसकी कथा के पात्र अपनी नहीं, लेखक की भाषा बोलते हैं; अपने स्तर के अनुरूप नहीं, लेखक की विद्वता के अनुरूप शब्द बोलते हैं। दूसरी यह है कि रचना के अन्त में लेखक एक समाधानपरक टिप्पणी लगाकर आलोचक की भूमिका अपना बैठता है। लेखक कब रचना में आ उपस्थित हुआ, इस बात का पता कभी–कभी स्वयं को भी नहीं चल पाता है। उदाहरण के लिए, मधुदीप की लघुकथा 'वजूद की तलाश' का यह समापन वाक्य देखें– ''मुझे लगता है, मेरी तलाश पूरी हो गई है।'' लघुकथा को क्योंकि आत्मपरक शैली में लिखा गया है, इसलिए लेखक के आ उपस्थित होने का खतरा किंचित् बढ़ गया है। अन्य नामधारी पात्रों की तुलना में लेखक 'मैं' में स्वयं को अधिक इनवॉल्व पाता है, पात्र को स्वयं में करने या पात्र की काया में प्रवेश करने में उसे सुविधा महसूस होती है। 'वजूद की तलाश' का यह पात्र यदि 'मैं' की बजाय, मान लीजिए 'राम' होता तो इस अंतिम वाक्य को यों लिखा जाता– 'राम को लगता है, उसकी तलाश पूरी हो गई है।' इस तरह के वाक्य निश्चित रूप से आलोचक के अधिकार क्षेत्र में दखल के नाते लघुकथा में त्याज्य होने चाहिए। निःसंदेह, 'किस्सागोई' कथा कहने की एक लोकप्रिय और मनभावन शैली है, तथापि 'नैरेशन' को 'किस्सागोई' अथवा 'किस्सागोई' को 'नैरेशन' नहीं समझ लिया जाना चाहिए। मधुदीप की दूसरे दौर की लघुकथाओं में यह सावधानी नजर भी आती है और अधिकतर प्रभावित भी करती है; तथापि मेरा मानना है कि लघुकथा जैसी लघुकाय कथा–रचना के लेखक को मात्र नैरेशन अथवा उसके आधिक्य से यथासंभव बचना चाहिए। 'किस्सागोई' शैली में लिखी गई रचनाओं के कथ्य और भाषा को भी मुख्यतः संवाद ही प्रभावशाली, प्रवहमान, आकर्षक और संप्रेषक बनाते हैं। मधुदीप की दूसरे दौर की लघुकथाओं में मेरे अनुसार, मुख्यतः 'ऑल आउट', 'एकतंत्र', 'ठक–ठक... ठक–ठक', 'दौड़', 'मुआवजा', 'मुक्ति', 'मेरा बयान', 'महानायक', 'धर्म' का जिक्र स्तरीय रचनाओं के रूप में किया जाना चाहिए। उन्होंने इस दौर में शैलीपरक कुछ अन्य प्रयोग भी अपनी लघुकथाओं में किए हैं। यथा– 'डायरी का एक पन्ना' को डायरी–शैली में, 'महानगर का प्रेम–संवाद' व 'साठ या सत्तर से नहीं' को संवाद शैली में तथा 'समय का पहिया घूम रहा है' को नाट्य–शैली में लिखा है। मधुदीप की लघुकथाओं में विषय वैविध्य प्रभावित करता है जो कि इस दौर के कुछ बड़े लघुकथाकारों में भी कम ही देखने को मिलता है। उनकी लघुकथाओं के शीर्षकों पर अलग से बात की जा सकती है।

मधुदीप के व्यवहार में कुछ महत्त्वपूर्ण भाव मुझे देखने को मिलते हैं। इनमें पहला है– कुछ अच्छा कर दिखाने की जिद। अब से लगभग 28 वर्ष पहले, 1988, में मैंने विक्रम सोनी और उनके लेखन पर एक समीक्षात्मक टिप्पणी लिखी थी। उसके एक अंश को यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ, ''प्रत्येक साहित्य–आंदोलन में कुछ वास्तविक प्रतिभा सम्पन्न लेखकों के साथ लेखक बने अलेखकों की भी एक भीड़ होती है, जिसमें कुछ कदम चलकर पुराने लोग अदृश्य होने लगते हैं और नए सम्मिलित होते रहते हैं। ऐसे अलेखक, निष्ठाहीन रचनाकार एक भीड़ बन जाते हैं और प्रतिभा सम्पन्न रचनाकारों को अपनी संख्या की शक्ति से छिपा देना चाहते हैं, किन्तु यह भीड़ धीरे–धीरे छँटने लगती है, क्योंकि दूर तक चलने की क्षमता इसमें नहीं होती। यह भीड़ आन्दोलन को अपयश का भागी

बनाती है, रास्ते में काँटे बोती है, किन्तु अनजाने में लाभ भी पहुँचाती है; और वह यह कि यह भीड़ ही साहित्यिक आंदोलन अथवा नई साहित्यिक प्रवृत्ति को देश के कोने–कोने तक, जन–जन तक पहुँचाती है और पाठकों का एक बड़ा वर्ग निर्मित करती है।'' लघुकथा–लेखकों की इस भीड़ में हम अनेक ऐसे नाम गिना सकते हैं जो प्रतिभा दिखाने के बावजूद या तो इस विधा में नहीं टिक पाए या समूचे लेखकीय परिदृश्य से ही गायब हो गए। लम्बे समय तक स्वयं मधुदीप उक्त भीड़ का हिस्सा बने रहे; लेकिन उनके अंदर के वास्तविक लेखक ने अंततः अँगड़ाई ली और आगे की मुहिम के लिए उठ खड़ा हुआ। उनके अन्दर के इस भाव को ही मैंने 'कुछ अच्छा कर दिखाने की जिद' कहा है। इस जिद के चलते ही अपने संयोजन और सम्पादन में प्रकाशित 'पड़ाव और पड़ताल' के प्रथम 15 खंडों में उन्होंने भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर अब तक के लगभग समूचे इतिहास को किसी–न–किसी रूप में समेट लिया है। दूसरा है– लघुकथा के लिए समर्पण भाव, जिसके बारे में अब अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं रह गई है। तीसरा और अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भाग है– अहंकारविहीनता और सम्पादकीय स्पष्टता। यह लेख लिखे जाने तक 'पड़ाव और पड़ताल' के 19 खंड मुझ तक पहुँच चुके हैं। मैं हैरान हूँ उनमें आए 'समर्पण पृष्ठ' और सम्पादकीय स्वरूप लिखे प्रारंभिक पृष्ठों की सामग्री को देखकर। इतने बड़े काम का श्रेय स्वयं लेने की बजाय इस व्यक्ति ने उसे विभिन्न रचनाकारों को अर्पित किया है। सामान्य चलन जबकि यही है कि कार्य का यथायोग्य श्रेय कोई भी व्यक्ति किसी अन्य को देना ही नहीं चाहता, सब–कुछ स्वयं लूट लेना चाहता है। इतिहास में नाम लिखाने की इस लिप्सा से मधुदीप को मैं दूर खड़ा पाता हूँ। इतिहास साक्षी है कि लिप्सा से यह दूरी ही किसी व्यक्ति को इतिहास में बनाए रखती है। मैं देख रहा हूँ कि 'पड़ाव और पड़ताल' श्रृंखला के जिन खंडों का संपादन मधुदीप ने किया है, एक नजर उनके समर्पण पृष्ठों पर डालते हैं– ''उन सभी लघुकथाकारों को जो इस पड़ाव तक मेरे सहयात्री रहे हैं'' (खंड– 1); ''यह खंड 2013 ई. के नाम जिसने मुझे इस विधा में पुनः सक्रिय किया'' (खंड–3); ''यह खंड 1976 ई. के नाम जहाँ से मैंने लघुकथा का सफर शुरू किया था'' (खंड–5); ''यह खंड भाई बलराम अग्रवाल को समर्पित, जिन्होंने 'पड़ाव और पड़ताल' श्रृंखला को आगे बढ़ाने के लिए सबसे पहले सहयोग भरा हाथ आगे बढ़ाया'' (खंड–7); ''यह खंड मेरी दिनांक 29 नवंबर से 5 दिसंबर, 2014 तक इंदौर एवं उज्जैन की साहित्यिक–सांस्कृतिक यात्रा की मधुर स्मृति को समर्पित'' (खंड–9); ''यह खंड लघुकथा के सहयात्री भाई मधुकांत को समर्पित'' (खंड–11); 'लघुकथा के सहयात्री भाई कुमार नरेंद्र के लिए' (खंड–13); 'यह खंड नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला–2013 की उस शाम को समर्पित है जब (डॉ.) कविता सिंह 'पड़ाव और पड़ताल' के 1988 में प्रकाशित खंड को तलाश करती हुई दिशा प्रकाशन के स्टॉल पर आई थीं। शायद उसी समय ही मैंने इस श्रृंखला को आगे बढ़ाने का मन बना लिया था।'' (खंड–14); ''यह खंड शकुंतदीप को समर्पित है, जिसके मानसिक और आर्थिक सहयोग के बिना लघुकथा की इस श्रृंखला को आगे बढ़ा पाना संभव नहीं था।'' (खंड–15); ''यह खंड मैं अपने पूज्य पिताजी (स्व.) भगवानदासजी की पावन स्मृति को समर्पित करता हूँ। (खंड–16); ''यह खंड समकालीन लघुकथा के प्रारंभिक हस्ताक्षर रमेश बतरा की स्मृति को समर्पित है जिसके असमय चले जाने से लघुकथा विधा

शेष पृष्ठ 94 पर

(इस खण्ड में मधुदीप जी के निकट संपर्क में रहे कुछ मित्रों के संस्मरण शामिल किये गए हैं। इन संस्मरणों में मधुदीप जी के व्यक्तित्व, लघुकथा में उनके योगदान और उनके विविध कार्यों के सन्दर्भों पर प्रकाश डाला गया है। अन्यान्य कारणों एवं परिस्थितियोंवश कई मित्रों के विचार हम एकत्र नहीं कर पाए तदापि आशा है कि मधुदीप जी को स्मरण करने और उनके व्यक्तित्व एवं योगदान को समझने में प्रस्तुत सामग्री उपयोगी होगी।)

भगीरथ परिहार

मधुदीप की उपलब्धियाँ

मधुदीप की उपलब्धियों को संक्षेप में समेटना मुश्किल है लेकिन मेरी कोशिश है कि कम शब्दों में उनकी उपलब्धियों को समेट लूँ। मधुदीप ने बाल उपन्यास सहित कई उपन्यास और दो कहानी संग्रह लिखे, पर मन उनका लघुकथा में ही रमा रहा, पहचान भी लघुकथा से बनी। पड़ाव और पड़ताल 1988 में छपी, वही इस शृंखला की नींव बनी। इसी का दूसरा संस्करण 2013 में छपा, जिसके बाद लगातार 31 खंड छपे। इसका उद्देश्य सृजन को रेखांकित करते हुए लघुकथा समीक्षा पर जोर देना था। उनका विश्वास था कि लघुकथा की सही पहचान स्थापित करने में यह शृंखला समर्थ होगी। और ऐसा हुआ भी।

खंड एक से 15 तक सभी वरिष्ठ लघुकथाकारों की 11–11 रचनाएँ लेकर उन पर समीक्षा प्रस्तुत की गई। 31 खंड की इस शृंखला की कुल रचनाएँ 2000 से अधिक हैं। यह एक तरह का लघुकथा कोश है। अभी तक समीक्षाएँ लघुकथा लेखकों द्वारा ही की जाती थीं लेकिन मधुदीप ने हिन्दी के प्रोफेसरों व स्वतंत्र समीक्षकों को इस ओर प्रवृत्त किया।

खंड 16 से नई शृंखला आरंभ की, जिसमें प्रत्येक वरिष्ठ लघुकथाकार की चयनित 66 लघुकथाओं के संकलन के साथ समीक्षा प्रस्तुत की गई। यह क्रम 16 से 25 तक चला। 26, 28, 29 वें खंड में छः 'नई दस्तकों की 66 लघुकथाएँ' नवलेखन को प्रोत्साहित और रेखांकित करने के उद्देश्य से प्रस्तुत की गईं। उनकी केवल उन्हीं रचनाओं को सम्मिलित किया, जो लघुकथा के मानकों पर खरी उतरती थीं। उनकी सजगता और चिंता नवलेखन के साथ–साथ सही लघुकथाओं के चयन की रही।

खंड (27) हिन्दी की कालजयी लघुकथाएँ, खंड (30) 66 लघुकथाकारों की 66 लघुकथाएँ और उनकी पड़ताल जिनका सृजनकाल 2011 से 2020 तक यानी वे धरोहर को लेकर भी सजग थे। 31 वें खंड में वे नये विषय को लेकर उपस्थित हुए। हिन्दी की 66 लघुकथाएँ और उनके पात्रों की पड़ताल, चरित्र–चित्रण का लघुकथा में स्कोप नहीं होता है ऐसा नहीं है बहुत लंबा चौड़ा चरित्र चित्रण तो नहीं लेकिन पात्र के आधारभूत चरित्र को लघुकथा में दर्शाया जा सकता है; यह खंड इस बात का सबूत है। इस शृंखला के ज्यादातर खंडों का सम्पादन उन्होंने ही किया लेकिन अपने वरिष्ठ साथियों को भी सम्पादन का अवसर दिया।

उनके संपादकीय लघुकथा के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष को लेकर हैं।

कालदोष इत्यादि विवादित मुद्दों के बारे में उनका स्पष्टीकरण रेखांकन योग्य है। उनके संपादकीय आँख खोलनेवाले होते, जो लघुकथा की समझ को गहरा करते थे।

वे लघुकथा के शिखर पुरुष यों ही नहीं हैं, उनका काम बोलता है। लघुकथा को लेकर इतना बड़ा काम अभी तक किसी ने नहीं किया है। यह तभी संभव हुआ जब वे प्रकाशक के साथ–साथ लेखक भी थे तथा बिना हानि–लाभ की चिंता किए लघुकथा को लेकर समर्पित रहे। सबसे बड़ी बात कि उन्होंने सभी खंडों की पीडीएफ़ फाइल मुफ़्त उपलब्ध करवाई ताकि जिसके पास जो खंड न हो वे लिंक http://laghukathaduniya.blogspot.com/2021/08/1-31.html से डाउनलोड कर लें। पाठकों और शोधार्थियों के लिए ये लिंक बहुत ही उपयोगी है।

मधुदीप के व्यक्तित्व, कृतित्व, योगदान, पर 'मधुदीप : लघुकथा सृजन के विविध आयाम' में आकलन किया गया है।

लेखकों का सम्मान करने के लिए 'दिशा सम्मान' आरंभ किया। पहला 'दिशा सम्मान' मुझे मधुदीप और भाभी शकुन्तदीप के हाथों मिलने का गौरव प्राप्त हुआ।

लघुकथा की पड़ताल भाग–1 (पड़ाव और पड़ताल के पहले 15 खण्डों की समीक्षा) में 90 से अधिक कथाकारों की 1000 से अधिक कथाओं का 15 समीक्षकों द्वारा विवेचन।

दिल्ली के पुस्तक मेले में दिशा प्रकाशन की स्टॉल लघुकथा लेखकों का अड्डा बनी रहती। पुस्तकें बिकती कम पर लघुकथा का प्रचार ज्यादा करतीं। भाभी भी साथ रहती और कई बार उनकी स्टॉल पर घर के बने भोजन का स्वाद भी मिल जाता। यात्राओं में भी भाभी शकुनदीप कई तरह का खाने–पीने का सामान रखती और थोड़ी–थोड़ी देर में खाने को मिल जाता। वे क्षण बड़े आत्मीय होते, बड़े आग्रह से खिलाया जाता। मेरे अनुभव से बोल रहा हूँ।

अपने जीवन–काल के कुछ अंतिम वर्षों को लघुकथा के लिए समर्पित कर दिए, जिसमें उनका लेखन, सम्पादन, संपादकीय, पड़ाव और पड़ताल की 31 अंकों की लंबी शृंखला। पड़ताल के अंतर्गत लघुकथा की समीक्षा को उन्होंने खूब बढ़ावा दिया और आज यह स्थिति है कि लघुकथा समीक्षा को लेकर कोई शिकायत और चिंता नहीं है।

हिस्से का दूध, शासन, खुरंड, अपनी–अपनी मौत, लिव इन रिलेशनशिप, चैट कथा, तुम सड़कों पर नहीं थे, महानगर का प्रेम संवाद, सन्नाटों का प्रकाश पर्व, जनपथ का चौराहा, मेरा बयान, राजनीति, समय का पहिया घूम रहा है, उजबक की कदमताल, सन्यास, डायरी का पन्ना आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं, जो हमेशा याद की जाती रहेंगी।

अंत में उनके बहुप्रशंसनीय कार्य को याद करते हुए उनकी स्मृति को नमन करता हूँ।

■ माडर्न पब्लिक स्कूल, 228, नया बाजार, रावतभाटा, राजस्थान / मो. 09414317654

डॉ. बलराम अग्रवाल

लेखक अथवा प्रकाशक की तुलना में लघुकथा–मित्र अधिक थे मधुदीप

''मधुदीप हिन्दी लघुकथा के वरिष्ठ हस्ताक्षरों में गिने जाते हैं। उनका

पहला लघुकथा संग्रह 'हिस्से का दूध' सन् 1991 में आया था जिसमें उनकी 30 लघुकथाएँ, 'लघुकथा : एक विहंगम दृष्टि' शीर्षक से लघुकथा पर उनका एक लेख और 7 कहानियाँ संगृहीत थीं। उससे पहले उनके 6 उपन्यास, 1 कहानी–संग्रह तथा 1 बाल उपन्यास प्रकाशित हो चुके थे। इनके अलावा 2 लघुकथा–संकलनों का तथा 3 कहानी–संकलनों का सम्पादन भी वे तब तक कर चुके थे। तात्पर्य यह कि लघुकथा–लेखन के साथ–साथ कहानी व उपन्यास लेखन और सम्पादन का उन्हें यथेष्ट अनुभव है। सन् 2010 में सरकारी सेवा से मुक्ति पाने के बाद उन्होंने अपनी रचनाशीलता को नए सिरे से सँवारना शुरू किया है। इस मुहिम का पहला पुष्प पाठकों को सन् 1988 में उनके द्वारा सम्पादित लघुकथा–संकलन 'पड़ाव और पड़ताल' के पुनर्प्रकाशित संस्करण के रूप में प्राप्त हुआ जो 2013 में छपकर आया। इसके बाद उन्होंने 'पड़ाव और पड़ताल' को लघुकथा के स्तरीय एवं वरिष्ठ हस्ताक्षरों की प्रस्तुति का ऐसा मंच घोषित कर दिया जो अपने आपमें अभूतपूर्व है।''

उपर्युक्त पंक्तियाँ मधुदीप के दूसरे लघुकथा संग्रह 'समय का पहिया...' के 'विचार खंड' हेतु 'जिन्दगीभर हारता इन्सान और जीतने की जिद' शीर्षक लेख से उद्धृत हैं। 'समय का पहिया...' के प्रकाशन तक 'पड़ाव और पड़ाव' के मात्र 10 ही खण्ड आए थे। यह जानना रोचक हो सकता है कि 31 खंडों की लम्बी शृंखला के रूप में प्रकाशित 'पड़ाव और पड़ताल' शृंखलाबद्ध हुआ खंड 2 से, खंड 1 कभी छपा ही नहीं। वस्तुतः 2013 में पुनर्प्रकाशित 1988 के संस्करण को ही खंड 1 मान लिया गया था। खंड 2 के प्रकाशन की कहानी कुछ इस प्रकार है–

1 मई 1950 को जन्मे मधुदीप 2010 में सेवानिवृत्त हुए थे। सेवानिवृत्ति को अधिकतर लोग जश्न के रूप में मनाते हैं, मधुदीप ने भी मनाया। माता रानी की चौकी रखवाई। 250–300 मित्रों–रिश्तेदारों को भोजन भी कराया और यथाशक्ति उपहार भी बाँटे। उस जश्न में मैं भी शामिल हुआ था।

उस जश्न के बाद, टेलीफोन पर औपचारिक बातें तो होती रहीं, साहित्य का सन्दर्भ कभी नहीं आया। 2013 तक वह सिलसिला चलता रहा। तभी, एक दिन 'पड़ाव और पड़ताल' के नवीन संस्करण की प्रति लेकर उनका कार्यालय सहायक मेरे निवास पर आया। बोला, "अंकल जी ने यह भिजवाई है।"

मैंने पुस्तक को सरसरी तौर पर उलट–पलटकर देखा और मधुदीप को फोन मिलाया– "भाई, 'पड़ाव और पड़ताल' का पिछला संस्करण तो पड़ा है मेरे पास। यह दूसरा क्यों भेज दिया?"

"पहली बार 1988 में छपा था। अब 2013 में उसका सिल्वर जुबली संस्करण छापा है।" उन्होंने कहा।

"सिवा इसके कि इसे छपे पच्चीस वर्ष बीत गये, और क्या उल्लेखनीय बात है इस संस्करण में?" मैंने पूछा।

इस प्रश्न का उनसे उत्तर देते नहीं बना। मुझसे ही पूछ डाला, "उल्लेखनीय क्या हो सकता था इसमें?"

"इसमें संकलित कथाकारों से नयी कथाएँ लेते; नया सम्पादकीय लिखकर बताते कि लघुकथा की यात्रा 1988 से चलकर 2013 में यहाँ आ पहुँची है। असली सिल्वर जुबली

सेलिब्रेशन तो वह होता।" मैंने कहा।

बोले– "नई लघुकथाएँ तो उनमें से कई की मिलती ही नहीं।"

"जिनकी नहीं मिलती, उनकी इस संकलन से इतर दूसरी लेते। मेरी दृष्टि में तो संग्रह रिवाइज्ड लघुकथाओं का ही आना चाहिए था।" मैं बोला।

बात खत्म हो गयी। सहायक चला गया। पत्नी ने टोका– "हरेक के काम में मीन–मेख क्यों निकालते हो। तारीफ भी कर दिया करो कभी।"

उनकी इस शिकायत का मैंने कोई जवाब नहीं दिया। बहरहाल, कुछ दिन बाद ही मधुदीप का फोन आया। बिना किसी भूमिका के चुनौती देने वाले अंदाज में बोले, "ऐसा कर, 'पड़ाव और पड़ताल' का दूसरा खंड तू तैयार कर; लेकिन पैटर्न पहले जैसा ही रहेगा।"

और भी अनेक बातें हुईं, बहरहाल चुनौती स्वीकार कर ली गयी। समय मिला मात्र एक माह। आलोचक बन्धुओं का साथ मिला और एक माह के भीतर पांडुलिपि तैयार होकर मधुदीप जी की मेज पर जा पहुँची। इसके बाद तो सिलसिला चल निकला। और इस चल निकले सिलसिले में ही मधुदीप के भीतर का महत्वाकांक्षी सक्रिय हो उठा। मित्रवत् मैंने उन्हें कुछ योजनाओं पर काम न करने की सलाह दी, जिसे उन्होंने नहीं माना। दरअसल, लेखकीय दायित्व के साथ प्रकाशकीय महत्वाकांक्षा भी स्वाभाविक रूप से आ जुड़ी थी, ऐसा मुझे लगा। स्वयं के लेखन और रचना–विशेष पर स्वयं ही पुस्तकें प्रकाशित करने के उनके कार्य से मैं सहमत नहीं रहा। इसीलिए बाद में अपनी ओर से न केवल सलाह देना बन्द कर दिया बल्कि उनकी कुछ अन्य योजनाओं से विनम्रतापूर्वक स्वयं को अलग भी कर लिया। अपनी रचनाओं के प्रति इतना मोह प्रकट करने के बावजूद उन्होंने स्वयं को 'लघुकथा पुरुष' के रूप में प्रोजेक्ट नहीं किया; बल्कि हमेशा 'लघुकथा मित्र' अथवा 'लघुकथा हितैषी' ही बने रहे।

मधुदीप रचना चोरी को हेय मानते थे। रचना तो रचना, उन्होंने किसी अन्य के प्लॉट तक पर कभी हाथ साफ नहीं किया। मधुदीप की जितनी भी लघुकथाएँ हैं, उनकी भाषा, शिल्प, शैली और कथ्य, सब मौलिक हैं। 'मौलिकता' की उनकी और मेरी परिभाषाओं में बहुत अन्तर था और इसीलिए पुरातन साहित्य के अनेक उदाहरण देते हुए इस विषय पर मुझे एक लेख लिखना पड़ा था जो 'साहित्य अमृत' में प्रकाशित हुआ था। लेकिन वे अपनी जिद के पक्के थे, अड़े रहे।

लेखक मधुदीप की ओर मेरा ध्यान उनके द्वारा 1988 में सम्पादित 'पड़ाव और पड़ताल' की प्रति मिलने के बाद ही गया और तभी से पत्र–व्यवहार भी शुरू हुआ। उसके बाद तो लघुकथा सम्बन्धी उनकी अन्य पुस्तकें भी मिलती रहीं और संवाद बना रहा। 1984 से मैं कभी किसी तो कभी किसी कारण परिवार और नौकरी की अनेक भँवरों में फँसता–चकराता और निकलता रहा। मुख्यतः 1992 तक वह काल चला।

1999 में रमेश बतरा के देहांत के बाद सम्मान और स्नेहवश महेश दर्पण, इब्बार रब्बी, दिनेश त्यागी आदि पत्रकारिता और कहानी से जुड़े दिल्ली के अनेक मित्रों ने श्रद्धांजलिस्वरूप सभाएँ अलग–अलग स्थानों पर कीं। उनमें पहली श्रद्धांजलि सभा साहित्य अकादमी के बाहरी मैदान में घास पर बैठकर सम्पन्न हुई थी और दूसरी भजनपुरा के एक विद्यालय के कक्ष में। इन दोनों ही सभाओं में पृथ्वीराज अरोड़ा कुरुक्षेत्र से आए थे; लेकिन दुर्भाग्य, लघुकथाकार कहा जाने वाला दिल्ली का एक भी प्राणी उन सभाओं में उपस्थित नहीं था।

रमेश बतरा का उल्लेख इस संस्मरण में इसलिए हुआ क्योंकि मधुदीप के साथ रमेश बतरा के सम्बन्ध की शुरुआत बहुत अच्छी नहीं रही थी। यह उन दिनों की बात है जब 'समग्र' पत्रिका किसी अन्य (सम्भवतः प्रतिभा) नाम से निकला करती थी और मधुदीप उसके सम्पादक थे। मधुदीप का आरोप था कि रमेश बतरा के कहने पर उसके मालिक गौरीनन्दन सिंहल ने उन्हें हटाकर महावीर प्रसाद जैन को सम्पादक रखा था; हालाँकि मधुदीप भी मूलतः महावीर प्रसाद ही थे।

लेखन की दुनिया में हर व्यक्ति अपने जीवन के उपरान्त जीवन को देखता है। लेखक के तौर पर उसकी कोशिश यह रहती है कि मरने के बाद भी वह जीवित रहे, लोगों के साथ संवाद में बना रहे। यह एक ऐसी आकांक्षा है जिसमें सफल होने के लिए व्यक्ति को कलम से पहले अध्ययन का धनी होना आवश्यक है। अध्ययन सिर्फ किताबों का ही नहीं, जीवन का भी। लेखक का जीवनानुभवी होना अति आवश्यक है।

आकांक्षा का ही एक अन्य पायदान महत्वाकांक्षा है। यह अकेले नहीं आती, आशंका को साथ लाती है। महत्वाकांक्षी व्यक्ति आशंकित न रहे, हो नहीं सकता। महत्वाकांक्षा और आशंका– कमोबेश हर व्यक्ति में मौजूद रहते हैं। इनमें से किसी एक की या दोनों की जब अधिकता हो जाती है, तब ये दुर्गुण बन जाते हैं। इसी बिंदु पर मनुष्य को संयमित रहने की आवश्यकता होती है; लेकिन संयम भी एक साधना है, सब नहीं साध पाते हैं। जनक धरती के एक छोटे–से खंड 'मिथिला' के राजा होते हुए भी संयमी थे; इन्द्र देवताओं का राजा होकर भी संयमी नहीं रहा।

यह युग हो या कोई अन्य, हर युग व्यक्ति को प्रचार में बने रहने को प्रेरित करता है। प्रचारित होने के अनेक माध्यम वर्तमान समय में इस जगत में मौजूद हैं। कोई धन से मजबूत है, कोई बल से; कोई कलम से मजबूत है कोई करम यानी भाग्य से। कोई–कोई इन सबका भी धनी होता है तो कोई चतुर इतना होता है कि जीवन भर दूसरों के ही धन, बल और कलम पर जीवित रहने की कोशिश में लगा रहता है। सोशल मीडिया के विस्तार ने इस चतुराई को पंख लगा दिये हैं। कोई–कोई दुस्साहसी और दबंग भी होता है। महत्वाकांक्षा, दुस्साहस और दबंगई के चलते आए दिन रचना चोरी की खबरें पढ़ने को मिल जाती हैं। पकड़े जाने पर भी 'भाई' अथवा 'दीदी' लोग सीना ताने खड़े रहते हैं। न पकड़े गये तो बल्ले–बल्ले रहती ही है।

मधुदीप के जीवित रहते बहुत–से मित्रों ने आरोप लगाया कि वे 'पड़ाव और पड़ताल' के खंड खरीदने के लिए लेखकों पर दबाव बनाते हैं। मैं इस संभावना से इंकार नहीं करता; लेकिन क्या उन्होंने किसी भी लेखक से अपने प्रकाशन की लघुकथा से इतर किसी अन्य पुस्तक को खरीदने का दबाव कभी बनाया? शायद नहीं। 'पड़ाव और पड़ताल' के खंड खरीदने का दबाव बनाने वाली बात को क्या हम इस रूप में नहीं ले सकते कि वे अधिक से अधिक लेखकों तक 'पड़ाव और पड़ताल' के खंडों को पहुँचा देना चाहते थे। क्या यह सही नहीं है कि मधुदीप के जाने के बाद लघुकथा–साहित्य का निष्पक्ष चयन और प्रकाशन बाधित हुआ है। 'पड़ाव और पड़ताल' के बहाने लघुकथा साहित्य में जो आलोचनात्मक कार्य हो रहा था, रुक गया है। दैवयोग से उन्होंने डॉ. चन्द्रेश कुमार

छतलानी की सहायता से 'पड़ाव और पड़ताल' के 31 खंडों की पीडीएफ के रूप में निर्मूल्य एक ब्लॉग में सुरक्षित करा दी थी। क्या हिन्दी के किसी भी प्रकाशक अथवा लेखक में इतना साहस है कि वह ऐसा कर दिखाए। मेरा तो एक आश्रम तक के बारे में अनुभव है कि वह अपने संस्थापक आचार्य के प्रवचनों की ऑडियो और पीडीएफ इस डर से इंटरनेट पर नहीं डाल रहे हैं कि ऐसा करने से उनकी पुस्तकें फिर कौन खरीदेगा?

अपनी कुछेक आलोचनाओं से कभी–कभार मधुदीप हिल भी जाते थे, निराधार आलोचनाएँ सभी को परेशान करती हैं। फोन पर बताते थे कि फलां ओर से यह कड़वी आवाज आई है। ऐसे में उनसे मैं एक ही बात कहता था– "मधुदीप भाई, आलोचना सिर्फ काम करने वालों की हुआ करती है। जो व्यक्ति कुछ कर ही नहीं रहा, उसकी कोई क्यों आलोचना करेगा!"

ऑपरेशन टेबल पर जाने से पहले तक वह लघुकथा के बारे में सोचते रहे। इस बात का प्रमाण लघुकथा का 32वाँ और 33वाँ खंड हैं जिनके बारे में उन्होंने इन खंडों के लेखकों डॉ. बी. एल. आच्छा और डॉ. पुरुषोत्तम दुबे से कहा कि हॉस्पिटल से लौटते ही वह इन दोनों खंडों के फाइनल प्रूफ पढ़कर प्रेस में दे देंगे। मधुदीप ने गच्चा सिर्फ इस बिन्दु पर खाया कि वह न तो मौत के कदमों की आहट को पहचान पाए न स्वार्थपूरित कदमों की आवाजाही को। जिस कार्यालय सहायक सुधीर ने वर्षों तक पुत्र के समान उनकी सेवा की और लेखन–प्रकाशन में सहयोगी रहा, जिस कथाकार मित्र कुमार नरेन्द्र ने अपना घर त्यागकर चार माह तक लगातार रातों को रुककर उनके अकेलेपन को भरा, उनपर वह विश्वास नहीं कर पाये। करते तो मृत्यु के बाद का उनका सफर इतना खामोशी–भरा न रहता, हलचल लगातार बनी रहती। बहरहाल, मुझे विश्वास है कि मधुदीप न तो निःसन्तान ही गये हैं न बन्धु–बान्धव विहीन। अपने पीछे लघुकथा लेखकों, हितैषियों, आलोचकों और चिंतकों का भरा–पूरा परिवार छोड़कर गये हैं। उनके द्वारा कल्पित 'पड़ाव और पड़ताल' का 32वाँ और 33वाँ खंड तैयार हैं और शीघ्र ही छपकर आएँगे।

■ एम–70, निकट जैन मन्दिर, नवीन शाहदरा (उल्धनपुर), दिल्ली–110032 / मो. 08826499115

प्रो. बी. एल. आच्छा

लघुकथा का विराट मिशन : मधुदीप

मधुदीप हमारे बीच नहीं रहे! यह साधारण वाक्य नहीं है। एक गहरा उत्ताप इस 'बीच' में समाया है। यह उत्ताप एक मित्र के जाने का नहीं है। एक लेखक के अलविदा होने का नहीं है। यह कुछ खोने और पाने मात्र का नहीं है। एक समूचा मिशन है, लघुकथा विधा के विकास का। लघुकथा की ऐतिहासिकता की पहचान का। हिन्दी लघुकथा के लगभग डेढ़ सौ लघुकथाकारों की शीर्ष रचनाओं की पहचान का। समीक्षकों की सैद्धांतिक व्यावहारिक राह का। नये लघुकथाकारों के श्रेष्ठतर को प्रकाशित और पुरस्कृत करने का। संतानविहीनता के शून्य में इतनी बड़ी बिरादरी को समाहित करते हुए लघुकथा को बेटी की तरह समावेशी पोषण देने का।

मधुदीप से मेरा परिचय एक दशक से पहले का नहीं है। 'पड़ाव और पड़ताल'

के चौथे खंड में अशोक भाटिया की ग्यारह लघुकथाओं पर समीक्षात्मक आलेख के लिए भगीरथ जी का फोन आया। मैंने लिखकर भिजवा दिया। इसके बाद तो सिलसिला थमा ही नहीं। मधुदीप ने लघुकथा के सृजन और समीक्षा की हिमालयी श्रृंखला खड़ी कर दी, पड़ाव और पड़ताल के तब तक के पच्चीस खंडों में। मैंने पच्चीस खंडों की समीक्षा के लिए वीणा के संपादक राकेश शर्मा जी से सहमति चाही। संयोग से दो किश्तों में बहुत विस्तार के साथ समीक्षा का प्रकाशन हुआ। संयोग यह भी कि 'लघुकथा कलश' के संपादक योगराज प्रभाकर जी ने भी उसे प्रकाशित किया। हिन्दी में किसी विधा पर इतने बड़े आकार में, इतने लेखकों और उनकी दो हजार लघुकथाओं का आयोजन देखने में नहीं आया। अलबत्ता चयन की अपनी कसौटी पर जितने लघुकथाकारों को लिया, उससे कई गुना लघुकथाकारों की रचनाओं का प्रकाशन न करने की विवशता को भी व्यक्त करना पड़ा।

मधुदीप अकेले के लिए जीने वाले प्राणी नहीं थे। हाँ, यह जरूर है कि पड़ाव और पडताल के कुछ खंडों का संपादन अन्य मित्रों ने किया। मगर अधिकतर का चयन और संपादन स्वयं मधुदीप का। इस चयन में समीक्षकों की तलाश। दिवंगत लघुकथाकारों के संकलनों की तलाश। उनके साक्षात्कारों–आलेखों का धरोहर के रूप में समायोजन। आरंभिक पंद्रह खड़ों में छह–छह लघुकथाकारों की ग्यारह–ग्यारह रचनाएँ। और प्रत्येक की समीक्षा। बाद के इन खंडों में एकल लघुकथाकारों की 66–66 लघुकथाओं पर तीन–चार समीक्षकों के विस्तृत आलेख। मगर संपादकीय में न अपना मतवाद, न वैचारिक आग्रह। एक खुली छूट स्वयं के लिए, रचनाओं के चयन की। और खुली छूट समीक्षकों के अपने नजरिए की। इसीलिए मधुदीप इन सबके साथ खड़े हैं, सबके साथ हैं, विधा के संजीवन के लिए। लघुकथा की नयी पीढ़ी को प्रोत्साहित करने के लिए।

मधुदीप अस्पताल में जाँच करवाने भर्ती होते रहे। घर में करनेवाला भी कौन? एक कर्मचारी सुधीर और लेखक मित्र कुमार नरेन्द्र। पर इसकी तुलना में अस्पताल में ही उन्होंने ऐसी आत्मीयता पैदा कर ली कि डॉक्टर और परिचारकों का परिवार ही उनके लेखन से जुड़ गया। अस्पताल से ही अंत–अंत की दो–तीन पुस्तकें प्रेस में जाती रहीं। कभी लगता है कि इस अकेले प्राणी को सालभर में ही इतने आघात लगे हों, उसकी हृदय–लिपि कितनी वायब्रेट होती होगी। पत्नी को कैन्सर और बिछुड़ने का आघात। माँ की मृत्यु। भाई का अंतिम संस्कार। बेहद सूना घर और खुद को कैन्सर। यह कैसी जीवट–लिपि है, जो लगातार जूझते हुए भी प्रेस, प्रूफ, पुस्तक, मित्र–संवाद और भविष्य की योजनाओं से मुक्त होती ही नहीं थी।

अस्पताल पहुँचने से पहले मुझे फोन किया। ऑपरेशन के लिए जा रहा हूँ। महीना भर तो ठीक होने में लगेगा। कीमोथेरेपी के उपचार तो करवाता रहा। मगर ऑपरेशन की बात और है। अभी पड़ाव और पड़ताल के तैंतीसवें खंड के प्रूफ अच्छी तरह देख नहीं पाया। इसलिए भिजवा दिये हैं आपको। पर जब घर लौटूँगा, तभी वापस भेजना। वरना घर पर डाक लेनेवाला तो कोई होगा ही नहीं। अब कितना पिघलाने वाला क्षण है। जिस हृदय–लिपि से लघुकथा के मिशन को गढ़ रहे थे, ऑपरेशन के दौरान ही भूचाल आ गया। इस आघात ने उनके लघुकथा संग्रह को सामने ला दिया– 'समय का पहिया'। और पहिया ऐसा थमा कि जीवन्त मुद्रा में घर भी नहीं लौट पाए। अब भारतेन्दु से लेकर

2020 तक के 132 रचनाकारों की लघुकथाओं की लगभग 180 पृष्ठों की समीक्षा किसे पहुँचाता? लघुकथा का चितेरा पाखी तो आकाशमार्गी हो चला था।

संभवतः 2015 में इन्दौर के अहिल्या पुस्तकालय में आयोजित एक गोष्ठी में उनसे पहला साक्षात्कार–संवाद हुआ। लघुकथा पर केन्द्रित इस गोष्ठी में लघुकथा का पूरा इन्दौरी संप्रदाय हाज़िर। संवाद मेरा भी। समापन के बाद मधुदीप बोले– 'आच्छा भाई, अब छोड़ेंगे नहीं। खूब लिखना है।' बस यही पहली और अंतिम प्रत्यक्ष भेंट। मगर संवाद और विमर्श बने रहे। पच्चीस खंडों के बाद महिला लघुकथाकारों और नवोदित लघुकथाकारों पर संग्रह की तैयारी हो रही थी। एक दिन मैंने भी फेसबुक पर लिख दिया कि भारतेन्दु या प्रेमचन्द से लेकर आज तक की श्रेष्ठतम सौ लघुकथाओं का चयन संग्रह के रूप में प्रकाशित हो। और अच्छी–सी भूमिका भी, जो कालक्रमिक बदलावों को रेखांकित कर सके। पाँच मिनट बाद ही संदेश आ गया। इस शर्त के साथ स्वीकार कि इसकी पचास पेज की समीक्षात्मक भूमिका लिखेंगे। पड़ाव और पड़ताल का सत्ताईसवाँ खंड इस रूप में ऐतिहासिक बन गया। क्योंकि 1876 से सन 2000 तक की 66 लघुकथाओं का चयन और रचना केन्द्रित समीक्षा के 85 पृष्ठ प्रकाशित होकर आए। 'हिन्दी की कालजयी लघुकथाएँ' पुस्तक में। इसी का दूसरा भाग 2001 से 2020 तक की 66 लघुकथाएँ प्रूफ बनकर ही आए। भविष्य में इसका प्रकाशन भी संभव हो जाए। कम से कम भारतेन्दु से लेकर 2020 तक की लघुकथाओं का ऐतिहासिक–सा ग्रंथ हिन्दी की धरोहर बन जाए।

दिल्ली में मधुदीप नौकरी के दौरान ही लिखते रहे। बाद में दिशा प्रकाशन के निदेशक। एक यात्रा अन्तहीन, उजाले की ओर, और भोर भई, पराभव, लौटने तक, कल की बात उनके उपन्यास हैं। छोटा होता आदमी कहानी संग्रह के साथ संपादित कथा संग्रह भी। तनी हुई मुट्ठियाँ, मेरी तेरी उसकी बात, समय का पहिया के साथ अंतिम समय में 'बिना सिर का धड़' लघुकथा संग्रह भी प्रकाशित हुआ। मगर पड़ाव और पड़ताल के बत्तीस खंडों में उन्होंने लघुकथा को श्रेष्ठतम चयन के साथ समीक्षात्मक धरातल दिया। वैचारिक विमर्श की चौपाल दी। लघुकथा के ऐतिहासिक आधार को रेखांकित किया। दिवंगत लघुकथाकारों के लिए दीपशिखा बने। समकालीन लघुकथाकारों को समीक्षा की पट्टभूमि के साथ प्रतिष्ठित किया। शीर्ष दस लघुकथाकारों पर स्वतंत्र पुस्तकें प्रकाशित कीं। महिला लघुकथाकारों पर स्वतंत्र पुस्तक। नवोदित लघुकथाकारों पर स्वतंत्र पुस्तक। दिशा प्रकाशन से नवोदित लघुकथाकार एवं लघुकथा समालोचना सम्मानों का आयोजन किया। सम्मान–निधि के साथ प्रतिवर्ष एक श्रेष्ठतम लघुकथाकार की पांडुलिपि का प्रकाशन भी। अतीत, वर्तमान और भविष्य की लघुकथा को गढ़ती पीढ़ी को जोड़ना और समीक्षात्मक धरातल पर मूल्यांकित करवाने के प्रयास। असाधारण समर्पण और जीवट का व्यक्तित्व ही कर सकता है। धनराशि का व्ययन भी और प्रकाशन का दायित्व भी।

अलबत्ता मधुदीप पर मैंने कुछ लिखा ही नहीं। जबकि सुकेश साहनी, अशोक भाटिया, कमल चोपड़ा, श्यामसुन्दर अग्रवाल पर लंबे आलेख प्रकाशित हुए। पर जब योजना बनी उमेश महादोषी के संपादन में 'मधुदीप : लघुकथा–सृजन के विविध आयाम'। पुस्तक छपकर आई। नील वर्ण के कवर में 728 पृष्ठों का महाग्रंथ। कोई चालीस–पैंतालीस लेखकों के आलेख। शोध–ग्रंथ की तरह विषयों के अलग अलग परिप्रेक्ष्य और पड़ताल।

प्रशंसा–अभिनंदन के लिए कोई जगह नहीं। पर इतने लेखकों का यह महाआयोजन मधुदीप के लिए अंतरंग स्नेह और लेखकीय अस्मिता का द्योतक नहीं है? आश्चर्य तो तब भी हुआ, जब उनकी एक पृष्ठ की लघुकथा 'नमिता सिंह' पर तीन सौ पृष्ठों की पुस्तक में पचास–साठ लेखकों के समीक्षात्मक आलेख पुस्तकाकार होकर आए।

मधुदीप जितने 'सृजन के अनेकान्त' के चितेरे हैं, उतने ही लघुकथा की पड़ताल की दिशाओं के भी। इसीलिए वे हिन्दी कहानी के प्रख्यात चरित्रों की तरह हिन्दी लघुकथा के प्रख्यात चरित्रों का विश्लेषणात्मक आयोजन भी करते हैं। पता नहीं, 66 संख्या उनके प्रकाशन के गणित की चौखट बन गयी। इस पुस्तक में भी 66 लघुकथाओं के चरित्रों की परख समीक्षकों द्वारा की गयी है। यही नहीं, एक कथा समीक्षा की आधारभूमि तैयार करने के लिए स्वतंत्र पुस्तक का प्रकाशन किया– 'लघुकथा के समीक्षा बिन्दु'। यह कोई शास्त्रीय पुस्तक नहीं। मगर सैद्धांतिक–व्यावहारिक समीक्षा की दिशा–दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कदम। कई लेखक हैं, मगर मधुदीप सबके सामने खुला आकाश रखते हैं। संपादकीयों में कोई मतवाद नहीं। बल्कि दृष्टियों के अनेकान्त का खुला मंच।

इस सारी अकादमिक–सृजनात्मक प्रकाशन यात्रा के बीच उनका हृदय धड़कता था, जीवन–सहचरी शकुन्त जी के लिए। दैनंदिन रूप से प्रभु राम और सहचरी शकुंत के लिए अलग–अलग दो पोस्ट। करुणा से परिपूर्ण भावों का द्रवणांक मित्रों को भी तरल कर देता था। उच्छवासों की यह भाषा एक पुस्तक बन गयी– 'लव यू' शीर्षक से। अंग्रेजी अनुवाद भी कल्पना भट्ट ने किया। पढ़कर लगता है कि खिड़की का काँच उच्छवास से बाष्पित हो गया हो!

लेकिन मधुदीप इस तरलता में ही अपनी भाव–लिपि को लघुकथा में रच लेते थे। उनकी लघुकथा 'हिस्से का दूध' पहली बार 'वीणा' में ही प्रकाशित हुई थी श्यामसुन्दर व्यास जी के संपादकत्व में। आर्थिक विषमताओं की यह कसमसाहट इन रचनाओं में पारिवारिक पृष्ठभूमि का समाजशास्त्र रचती थी। फिर तो वे मातृत्व के संवेदन, दाम्पत्य के टकराते–बनते रिश्तों, वृद्धावस्था के विस्थापन, जैसे अनेक परिदृश्यों से लघुकथा को बुनते रहे। पर उनकी रचनाओं में रिश्तों का सगुण पक्ष है और मूल्यों की आकांक्षा। विषयों की समकालीनता और प्रयोगधर्मी विन्यास के कारण वे सोशल मीडिया तक भी आए। फेसबुकिया चैट में रिश्तों का बदलता रूप। यथार्थ, मनविज्ञान और समाजशास्त्र की अंदरूनी बनावट बदलते परिदृश्यों में सामाजिक मूल्यों को तलाशती है। यों कई सारे कोण हैं इन लघुकथाओं के। पर सचेत विन्यास और भाषिक सजगता में तो उनका कौशल है ही। मधुदीप की लघुकथाओं का अंग्रेजी में अनुवाद डॉ. हेमंत गेहलोत ने किया है। अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद प्रकाशित हुए।

अब इतने बड़े विस्तार को संक्षेप में कहने के बावजूद यह लगता नहीं कि मधुदीप हमारे बीच नहीं है। लघुकथा के ऐतिहासिक विकास का एक जीवन्त अध्याय। नयी पीढ़ी के साथ नये परिदृश्यों के रचाव की आकांक्षा। सांस्कृतिक–सामाजिक मूल्यों की चिंता। मधुदीप लघुकथा विधा के लिए इतने अपरिहार्य हैं कि किसी भी दिशा में शोध कार्य किया जाए, 'पड़ाव और पड़ताल' में वे हर कहीं नजर आएँगे। मधुदीप लघुकथा के सामूहिक तेवर हैं। उनके इस विराट संपादन की तहों में वे हमेशा झाँकते मिलेंगे। अलबत्ता काया तो विनश्वर है, मगर लघुकथा का मधुदीप जाग्रत शब्दों का सामूहिक स्वर। विनम्र श्रद्धांजलि!

■फ्लैट नं.701, टॉवर–27, स्टीफेंशन रोड (बिन्नी मिल्स), पेरंबूर, चेन्नई–600012,तमिलनाडु/मो. 09425083335

प्रो. प्रबोध कुमार गोविल

क्या पता चल गया था उन्हें?

एक दिन उन्होंने फ़ोन किया और सीधे कहने लगे– यार, मेरा एक प्लॉट पड़ा है, उसे बेच दूँ क्या?

''अरे क्यों? क्या हो गया? ऐसी क्या ज़रूरत आ पड़ी?'' मैंने कहा।

''कभी उस पर कुछ बनायेंगे, ये तो अब सोचना भी बेकार है। बाद में जल्दबाजी में औने–पौने दाम बिकेगा, इससे तो अच्छा है कि अच्छी तरह देख–भाल कर ठीक से बेच दें।'' वो बड़ी तसल्ली से बोले।

''क्या करेंगे इतने पैसे का?''

''यार पैसे फूँकने की कोई समस्या होती है क्या कभी। कुछ भी कर लो। तुम्हारी भाभी की तबीयत ठीक नहीं रहती। मेरा मन भी उचाट रहता है।''

''इलाज तो चल ही रहा है, सब ठीक हो जायेगा।'' मैंने उन्हें आम दुनियादार की तरह सलाह दी।

''नहीं भाई, मैं सोच रहा हूँ कुछ बड़ा करें।''

''क्या?''

''मेरा मन तो अब लघुकथा में रमता है!'' वे बोले।

देखते–देखते समय गुज़र गया। भाभी (शकुंतदीप जी) नहीं रहीं। कुछ दिन बाद सोते लघुकथा, जागते लघुकथा... एक के बाद एक संकलनों की तैयारी युद्ध स्तर पर शुरू हो गई। मुझसे भी एक बार कहा– ''लगातार तीन उपन्यास छाप दिए मैंने तुम्हारे, अब एक लघुकथा संग्रह दे दो।''

मैंने कहा– ''इतनी लघुकथाएँ तो अभी मेरे पास नहीं हैं।''

''कितनी हैं?''

''अप्रकाशित तो बिल्कुल नहीं।''

''फिर 'पड़ाव और पड़ताल' शृंखला का एक खंड संपादित कर दो।'' वे कहने लगे।

''मुझे इतना समय नहीं मिलता, यूनिवर्सिटी का डायरेक्टर बनने के बाद।''

''आसान काम देता हूँ, तुम तो राजस्थान के लघुकथाकारों पर ही काम कर दो!'' उन्होंने सुझाया।

''ये तो और भी मुश्किल है, आपको छः चाहिए, मैं कैसे चुनूँगा। पिछले आठ सालों से उपन्यासों पर काम कर रहा हूँ।'' मैंने बहाना बनाया।

वो सीधे अपने हरियाणवी रूप में आ गए, गरजकर बोले– ''ओए यार गोविल, शुरू तो कर... मैं कर दूँगा तेरा काम... तेरी ग्यारह किताबें छापी हैं दिशा प्रकाशन ने, अपना नाम नहीं देगा क्या शृंखला को???''

और बस, पड़ाव और पड़ताल के खंड आठ की भूमिका बन गई। उन्होंने अपना वचन निभाया। जब भी मैं किसी भी मुद्दे पर कहता कि मैं नहीं कर पाया, जैसे लोगों से आलेख मँगवाना, समीक्षा करवाना, किसी आलेख का संपादन...। वो झट कहते– मुझे भेज दो, मैं कर लूँगा!

सबको मालूम है कि उनकी ये कालजयी शृंखला किस बुलंदी तक पहुँची। ये सब अब इतिहास है। उनकी याद को नमन!

■ बी 301, मंगलम जाग्रति रेजीडेंसी, 447–कृपलानी मार्ग, आदर्श नगर, जयपुर–302004, राजस्थान / मो. 09414028938

कुमार नरेन्द्र

लघुकथा के प्रहरी : मधुदीप

हर प्राणी किसी अज्ञात लोक से इस पृथ्वी–लोक पर सुकृतकृत्य के लिए आता है; इस लोक को जिसे मृत्युलोक भी कहते हैं। प्राणी इस लोक का भ्रमण करता है, अवलोकन करता है और लोक–कल्याण की इच्छा लिए भाँति–भाँति के प्रयोग एवं सृजन करता है। ऐसे ही लेखक मधुदीप ने, अपने जीवन–काल में अनेक साहित्यिक कृतियों की रचना की है। इन्होंने मुख्य रूप से उपन्यास और कहानी विधा में काम किया है, लेकिन इसी के बरअक्स लघुकथा–विधा पर अपना ध्यान विशेष रूप से केंद्रित किया– यह सन 1977 की बात है। उस समय अशोक जैन, मधुकान्त, श्रीमती इंदिरा स्वप्न (भटनागर), हरनाम शर्मा, कमल चोपड़ा और मैं; सबने साथ–साथ लघुकथा–विधा के उन्नयन के लिए कार्य करना प्रारंभ कर दिया था। सन 1972 में मेरे वरिष्ठ साथी साहित्यकार एवं कामरेड सुरजीत गाँधी ने मधुदीप जी के प्रथम उपन्यास (एक यात्रा अंतहीन) के बारे में चर्चा की; वह सर्दियों की एक दोपहर थी, धूप खिली हुई थी और हम दोनों ने त्रिनगर (दिल्ली–35) की वाटिका में चहल–कदमी करते हुए साहित्य सम्बन्धी कई बातें की थीं। उन्हीं दिनों त्रिनगर से एक साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका (कजरारी) का प्रकाशन हो रहा था, जिसके संपादक पं. रघुनंदन शर्मा जी थे। मैं उन दिनों गणित (विशेष) के प्रथम वर्ष में था। बस, उसके बाद मधुदीप जी से अगले 50 वर्षों अर्थात 11 जनवरी 2022 की प्रभात बेला तक साथ बना रहा। भाभी शकुन्त दीप जी का देहांत 20 जनवरी 2021 को हो चुका था और वे अकेलेपन को झेल नहीं पा रहे थे।

सन 1976 में हम दोनों ने एक कहानी संकलन (एक कदम और) का संपादन किया, जिसकी भूमिका आदरणीय गंगाप्रसाद विमल जी ने लिखी थी। उन्हीं दिनों त्रिनगर के नए–पुराने लेखकों द्वारा एक साहित्यिक संस्था 'कृतिकार' भी बनाई गई, जिसके मंत्री मधुदीप जी थे और कोषाध्यक्ष मैं था और मासिक शुल्क दो रुपये मात्र।

शरद ऋतु 1980 में भाभी श्रीमती शकुंत दीप और मैंने 'दिशा प्रकाशन' का आधार रखा। मधुदीप जी प्रकाशन के निदेशक बने और निश्चय किया कि किसी भी लेखक की प्रथम पांडुलिपि को प्रकाशित करने के लिए प्राथमिकता देंगे। प्रकाशन की पहली चार पुस्तकों के सेट में कथाकार संजीव का कहानी संग्रह (तीस साल का सफरनामा) भी था, जिसके दो संस्करण प्रकाशित हुए थे। दूसरी पुस्तक मुझ द्वारा संपादित लघुकथा संकलन (साँझा हाशिया) 1981 ई. थी, जिसमें 17 लघुकथाकारों की पाँच–पाँच लघुकथाएँ थीं। इसके बाद सन् 1982 में 'अश्वगंधा' के संपादक विकेश निझावन का प्रथम कहानी संग्रह (हर छत का अपना दुःख) प्रकाशित किया। उसी वर्ष वरिष्ठ लेखकों में कथाकार

मुद्राराक्षस जी का प्रथम कहानी संग्रह (मेरी कहानियाँ) छापने का गौरव हमें प्राप्त हुआ।

पुस्तक मेला में तो हम लोग बड़े उत्साह के साथ भाग लेते थे और भाभी जी तो हमसे भी अधिक उत्साहित रहती थीं। पर्यटन में मधुदीप और शकुंतदीप– दोनों ही अग्रणी थे। यात्राओं में तो उनके जैसे प्राण बसते थे। मधुदीप जी अनेक–अनेक अच्छाइयों के भंडार थे; यह कहना सर्वदा उचित होगा कि नीम के पेड़ के ऊपर आम का पेड़ थे। जो भी उनके पास गया, वह खाली हाथ नहीं लौटा। दिल्ली नगर निगम में क्लर्क भर्ती हुए थे और 30 अप्रैल 2010 को अधीक्षक के पद से सेवानिवृत्त हुए और 1 मई को संध्या समय श्री सुंदरकांड का पाठ हुआ, तदोपरांत रात्रि–भोज। उस दिन उनका जन्मदिन भी मनाया गया।

जीवन में सब कुछ सामान्य गति से चलने लगा, लेकिन उन्हें संतान का अभाव खलने लगा था; लेकिन प्रभु की इच्छा सर्वोपरि होती है– ''जाहि विधि राखे राम, ताहि विधि रहिए।''

वे अक्सर कहा करते थे– नरेन्द्र! मुझे हार से बड़ा डर लगता है, मैं कभी हारना नहीं चाहता। संभवतः इसीलिए सुरक्षा–चक्र में रहते थे। सुरक्षा–चक्र में एक चक्र आर्थिक होता है; किसी भी योजना में अर्थ की सबसे अधिक भूमिका होती है और उससे भी अधिक निश्चय की। गुरु गोविंद सिंह जी ने कहा भी है कि 'निश्चय कर अपनी जीत को प्राप्त करो'। ऐसे ही मान्यता मधुदीप जी की भी थी, उन्होंने जिस काम को हाथ में लिया तो उसे निश्चित समय में पूरा करके ही दम लिया।

जैसा कि मैंने प्रारंभ में कहा है कि उन्होंने लघुकथा–विधा पर ही अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर लिया था। सन 1988 में 'पड़ाव और पड़ताल' का पहला खंड प्रकाशित होकर पाठकों के सामने आया; जिसमें छह लोगों की ग्यारह–ग्यारह लघुकथाएँ थीं। अशोक वर्मा, कमल चोपड़ा, कुमार नरेन्द्र, मधुकान्त, मधुदीप और विक्रम सोनी। समय का पहिया अपनी धुरी पर घूमता रहा और पच्चीस वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद सन् 2013 में पहले खंड का पुनर्प्रकाशन हुआ और उसके बाद तो खंड– 2– 3– 4– ....33 तक इनकी संख्या जा पहुँची। मैं समझता हूँ कि यह लघुकथा–विधा पर सबसे बड़ा कार्य हुआ है। इसको छू पाना हर किसी के लिए सम्भव नहीं होगा। इस विशाल कार्य को मेरा कोटिशः नमन।

उनके जीवन के अंतिम पड़ाव में दिशा प्रकाशन से चार पुस्तकों के नए सेट में एक महत्वपूर्ण ग्रंथ का प्रकाशन हुआ– 'मधुदीप : लघुकथा–सृजन के विविध आयाम', इसका संपादन अविराम साहित्यिकी के कुशल संपादक डॉ. उमेश महादोषी ने किया है; उनका ग्यारह पृष्ठीय संपादकीय 'लघुकथा की निरंतरता का पथ वाया मधुदीप' वास्तव में उच्च कोटि की श्रेणी में आता है। महादोषी जी ने ग्रंथ को आठ खण्डों में बाँटा है। ग्रन्थ का विवरण इस प्रकार है– प्रथम संस्करण : 2022, पृष्ठ संख्या 728, मूल्य रु. 1000/– मात्र।

मधुदीप जी ने अपने जीवन–काल में 125 लघुकथाएँ लिखीं और उनका मूल स्वर था कि जो शक्तिहीन है, उसे बल प्रदान करना और उसके साथ खड़े होना है– ऐसा ही उन्होंने अपने जीवन में अपनाया भी, सिद्धांत और प्रयोग में कोई अंतर नहीं रखा। उनके भीतर का लेखक एक आम आदमी था, एक मजदूर था, एक परोपकारी था, एक सच्चा मित्र था और न जाने क्या–क्या...। मधुदीप जी ने लघुकथा के क्षेत्र में कई प्रकार के प्रयोग किए और सफल हुए। अब मैं इनकी केवल पाँच लघुकथाओं की चर्चा करना चाहूँगा–

1. हिस्से का दूध, 2. लौहद्वार, 3. सन्यास, 4. वजूद की तलाश और 5. मुक्ति।

पहली लघुकथा (हिस्से का दूध) एक निर्धन परिवार की व्यथा है, जो ऋणी भी है। दूध उनके जीवन–संघर्ष का प्रतीक है और साथ ही सभ्याचार का द्योतक भी। एक महाजन उनके घर में ब्याज की वसूली के लिए आया है और पति के कुर्ते की जेब खाली है। पैसे कहाँ से देगा, क्या बहाना बनाएगा, कैसे उस महाजन को पटायेगा– इसी उधेड़बुन में वह शिष्टाचार को भूला नहीं है। वह अपनी पत्नी से बैठे हुए गले से कहता है– सुनो, जरा चाय रख देना!

दूसरी लघुकथा (लौहद्वार) एक प्रयोगधर्मी रचना है। इसमें महिलाओं के हितों के पक्ष में मिले अधिकार का मिसयूज का वर्णन है। हाल के वर्षों में 'लिव–इन' का प्रयोग बढ़ा है। विवाह जैसे पवित्र संस्कार की प्रतिष्ठा को धक्का लगा है। 'लिव–इन' का पालन सहज और सरल है– दूध पियो और कुल्हड़ फेंको, आप और हम अपने–अपने घर, भाड़ में जाएँ दीन–दुनिया और मर्यादा। पर समस्या यहीं समाप्त नहीं हो जाती। लौहद्वार तो निर्जीव है लेकिन लेखक ने उसमें प्रवेश कर उसे संवेदनशील बना दिया है। अब प्रश्न यह है कि उच्च न्यायालय ने न्याय तो कर दिया लेकिन सत्र न्यायालय के आदेश ने पुरुष पात्र का तीन वर्षों में बखिया तो उधेड़कर रख दिया; लेकिन लौहद्वार चीख भी नहीं सका! झूठे मुकदमे, झूठा न्याय! जै–जै न्याय की देवी!

तीसरी कथा (सन्यास) व्यापार धर्म के आडंबर का कच्चा चिट्ठा है। दीनदयाल जी सेवानिवृत्ति के उपरांत अपनी सारी पूँजी और संपत्ति अपने परिवार में यथोचित ढँग से बाँटकर सन्यास के लिए उद्यत होते हैं। ''आश्रम के लिए कितनी व्यवस्था की वत्स!'' स्वामी जी की दृष्टि दीनदयाल के मुख पर स्थिर हो गई। ''क्या....?'' दीनदयाल जी हत्प्रभ थे। ''उसके बारे में मैंने कुछ सोचा ही नहीं, गुरुदेव!'' ''सोचना चाहिए था, वत्स!'' स्वामी रामाधार जी ने बस इतना ही कहा। इसी के साथ बड़ी–बड़ी गाड़ियों वाला स्वामी जी का लाव–लश्कर धूल उड़ाता हुआ हरिद्वार की ओर लौट गया।

चौथी लघुकथा (वजूद की तलाश) व्यक्ति के अस्तित्व की रचना है। लेखक तीस वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद अपने गाँव में किसी परिचित की तलाश में पहुँचता है। प्रतीत होता है कि लेखक का कोई सगा सम्बन्धी गाँव में नहीं रहा, सिवाय मित्रों और गलियों के; संतोष इस बात का है कि लेखक के दार्शनिक अंदाज से परिचित प्रेम भाई समझ जाता है कि वह दीप भाई है, ''मैंने पहचान लिया दीप भाई।'' और दीप भाई निहाल हो गए। यूँ वास्तव में देखा जाए तो परिवर्तन सृष्टि का नियम है; पुराने पत्ते झड़ते हैं, नए पत्ते आते हैं। सबसे बड़ा प्रश्न है अपने अस्तित्व को बचाए रखना और नगरों–महानगरों में अपने वर्चस्व की रक्षा कर पाना एक चुनौती है क्योंकि धन का बोलबाला है।

पाँचवी लघुकथा (मुक्ति) सत्तर वर्ष के रामबाबू और समीप ही अलग रहने वाले उनके इकलौते पुत्र एवं पुत्रवधू पर केंद्रित है। रामबाबू की पत्नी कैंसर से पीड़ित है। पिछले चालीस दिनों से वह रोगी की सेवा–टहल में लगे हुए हैं। सभी लोग कहते हैं कि रामबाबू को जैसे कोई दैविक–शक्ति मिल गई है, पत्नी की सेवा में दिन–रात एक कर दिया परन्तु विधि का विधान तो अटल है। घर के सामने दरिया बिछी हैं; नीम के पेड़ की पत्तियाँ

झर–झरकर दरियों के ऊपर फैल रही हैं। उनके एक मित्र कहते हैं कि भाई! भाभी मरी नहीं है, उसे तो मुक्ति मिली है। इसके प्रत्युत्तर में रामबाबू कहते हैं कि यह तो पता नहीं कि उसे मुक्ति मिली है या नहीं, मगर हम–सबको तो अब मुक्ति मिल ही गई है। उनका कहने का आशय यही था कि शारीरिक रूप से तो मुक्ति मिल गई है उसे लेकिन आध्यात्मिक रूप से हम सांसारिक लोग कहाँ मुक्त हो पाते हैं। यहाँ उनकी खीझ भी उभरती है।

मधुदीप जी की वर्णन शैली, शब्दों का चयन, शीर्षक, कथ्य का चुनाव और लघुकथा का अंत अद्वितीय होते थे। उनके जीवन–कोश में केवल एक शब्द नहीं था, और वह शब्द है समझौता। मुझे गर्व है कि हम तीनों ने मिलकर प्रकाशन के क्षेत्र में यथासंभव काम किया है और विशेषतः लघुकथा विधा में; वे वास्तव में लघुकथा के प्रहरी थे। उन्हें शत–शत नमन!

■ पारुल प्रकाशन, 35, प्रताप एनक्लेव, मोहन गार्डन, दिल्ली–110059 / मो. 09654935499

अशोक वर्मा

मधुदीप और मैं

''तुम्हें नहीं पता अशोक वर्मा तुमने अनजाने में क्या लिख दिया है।''

उपरोक्त उद्‌गार मधुदीप ने चौंकते हुए तब कहे थे, जब वर्ष 1983 में मैंने 'खाते बोलते हैं' लघुकथा लिखी थी। सुनकर एकबारगी मैं भी सन्न रह गया था। उनकी बात बिल्कुल सत्य निकली। इस लघुकथा को मैंने दैनिक ट्रिब्यून में प्रकाशन हेतु भेजा था और उन्होंने इसे पहले पृष्ठ पर प्रकाशित किया था। फिर क्या था– देखते ही देखते इसे अनेक संपादकों ने अपने संग्रहों तथा लघु पत्रिकाओं में स्थान दिया। यह जैसे एक प्रयोगवादी लघुकथा बन गई थी। अनेक वक्ता समय–समय पर इसकी चर्चा करते रहे हैं। मधुदीप ने इसे कालजयी लघुकथा के रूप मे 'पड़ाव और पड़ताल' संग्रह शामिल किया।

खैर यह बात तो वर्ष 1983 की है लेकिन इससे पूर्व 1978 में मेरी ज़िंदगी में नया मोड़ आया। मधुदीप स्थानांतरित होकर मेरे ही कार्यालय में आये थे। उनकी सीट मेरे साथ ही थी। एक सहकर्मी के नाते बातचीत में उन्होंने अपनी साहित्यिक अभिरुचि के बारे में बताया। इसी दौरान उन्होंने लघुकथा विधा के बारे में मुझे बताया। तब मैंने 'गुल्लक' शीर्षक से एक लघुकथा लिखी, जो इंदौर की पत्रिका वीणा में छपी। फिर तो लघुकथा लेखन का सिलसिला चल निकला। अभी तक उपन्यास, कविता और ग़ज़ल लिखने वाला मैं अब लघुकथा से भी जुड़ गया। 1984 में मधुदीप की प्रेरणा से ही मैंने 'अनकहे कथ्य' लघुकथा संग्रह संपादित किया और फिर 1995 में मेरा निजी संग्रह 'खाते बोलते हैं' दिशा प्रकाशन से प्रकाशित हुआ।

मधुदीप की लेखन यात्रा उपन्यास से शुरू हुई और कहानी से होती हुई लघुकथा तक पहुँची। उनके उपन्यास– लौटने तक, उजाले की ओर तथा कल की बात बेहद चर्चित रहे। कल की बात का अनुवाद अंग्रेज़ी में it was yesterday शीर्षक से छपा। उन्हें कहानी पर हिमप्रस्थ पुरस्कार से भी नवाज़ा गया।

वर्ष 1988 में मधुदीप ने पड़ाव और पडताल शीर्षक से छह लेखको की 11–11 लघुकथाओं का विशेष संग्रह संपादित किया। उसके 25 वर्षों के बाद 2013 में इसकी

श्रृंखला शुरू हुई। आज पड़ाव और पड़ताल के 30 से अधिक खण्ड लघुकथा साहित्य की धरोहर बन चुके हैं। नए लेखकों को अवसर देने के लिए 'नई सदी की धमक' शीर्षक से लघुकथा संग्रह संपादित किया। जिस पर विस्तृत आलेख भाई उमेश महादोषी ने लिखा है।

मधुदीप एक प्रयोगवादी लेखक रहे हैं। लघुकथा के विकास हेतु उन्होंने नए शिल्प और तेवर की लघुकथाएँ लिखी हैं, जिनमें तनी हुई मुठ्ठियाँ, समय का पहिया घूम रहा है, ऑल आउट, चैट कथा, नरभक्षी आदि प्रमुख हैं। जहाँ 'हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ' आज के मनुष्य के जीवन का सच्चा आईना है, वहीं 'नमिता सिंह' नारी सशक्तिकरण की सटीक मिसाल है। आठवें दशक में लिखी मधुदीप की लघुकथा 'हिस्से का दूध' एक कालजयी लघुकथा है।

मधुदीप की तमाम लघुकथाओं से गुजरने पर आभास होता है जैसे आप विराट जीवन–जगत की यात्रा कर रहे हैं।

उनकी अनेक रचनाओं पर शोध कार्य भी हुआ है तथा पाठ्यक्रम में भी शामिल हैं।

उनका निवास स्थान त्रिनगर तो मित्रों के लिए लेखक अड्डा था, जहाँ भाभी शकुन्त दीप मुस्कान के साथ सभी की आवभगत करती थीं। लघुकथा के विकास की दिशा में मधुदीप द्वारा किया गया कार्य एक उदाहरण के रूप में याद किया जाएगा।

भाई मधुदीप का अचानक हम सबसे बिछुड़ना लघुकथा साहित्य के लिए एक बड़ी क्षति है ही, मेरे लिए तो व्यक्तिगत क्षति है। अपना ही एक शेर भारी मन से यूँ कह रहा हूँ–

''जाते–जाते कैसा मंज़र दे गया/आँख में सातों समन्दर दे गया''

■ 110, लाजवन्ती गार्डन, नई दिल्ली–110046/मो. 09250909592

सन्तोष सुपेकर

तटस्थ, जुझारू और सत्यान्वेषी सर्जक : मधुदीप जी

समकालीन हिन्दी लघुकथा आज साहित्य की केंद्रीय विधा के तौर पर देखी जाने लगी है तो इसके पार्श्व में कुछ हस्तियों का अति महत्वपूर्ण योगदान है। दिशा प्रकाशन, 'पड़ाव और पड़ताल' श्रृंखला के जरिये, 33 महत्वपूर्ण खंडों (जिनमें से 31 प्रकाशित हो गये और दो प्रकाशन की प्रक्रिया में रह गये) का प्रकाशन कर लघुकथा को अपार शक्ति प्रदान करने वाले मधुदीप गुप्ता जी का आकस्मिक देहावसान लघुकथा ही नहीं, समस्त साहित्यिक जगत के लिए अपूरणीय क्षति है।

लघुकथा सम्बन्धित इन खंडों में से 15 को 'पड़ाव और पड़ताल' के रूप में प्रकाशित कर एक वितान–सा तान दिया था मधुदीपजी ने। पड़ाव और पड़ताल के लिए लघुकथाकारों का चयन वे कसे हुए मापदंडों से करते थे, इसके लिए बड़े नामों की कभी परवाह नहीं की उन्होंने। लघुकथा साहित्य में जब कभी तटस्थ, सत्यान्वेषी, जुझारू सर्जकों की बात उठेगी तो मधुदीप जी का स्मरण सबसे पहले किया जाएगा।

लेखन की अपनी दूसरी पारी में (2013 से) अपने अंदर के उपन्यासकार और कहानीकार को भी उन्होंने लघुकथा के लिए समर्पित कर दिया था। अपने अंतिम दिनों में अस्पताल के वार्ड में बैठकर भी वे लघुकथा पर काम कर रहे थे। ऐसा लघुकथा तपस्वी,

विधा को कदाचित ही फिर प्राप्त हो।

उनकी अपनी लिखी लघुकथाएँ पारिवारिक पृष्ठभूमि से निकलकर समाज, राजनीति और बाज़ारवाद तक जाती हैं। अपने समय के त्रासद सच को वे सामने लातीं हैं। उनकी लघुकथाओं में सहजता, प्रवहमानता होती थी। रचना की आंतरिक बुनावट पर वे पर्याप्त ध्यान देते थे। पंचलाइन भी अक्सर पाठक को प्रभावित कर देती थी। 'योद्धा पराजित नही होते' की अंतिम पंक्ति देखिये– ''छोटा बड़े के गले लगकर सुबक–सुबककर रोया है और बड़े का सूखा काँधा आज भीग गया है।'' लघुकथा में प्रयोग के भी वे जबरदस्त समर्थक थे।

उनकी लघुकथाओं के संवाद छोटे, सटीक और तार्किक होते थे। कथ्य और शिल्प के अलावा वे हिन्दी भाषा और व्याकरण पर भी पूरा ध्यान देते थे। कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी कि हिन्दी शब्द जाँचना हो तो दिशा प्रकाशन की पुस्तकें सबसे अच्छा मापदण्ड हैं। लघुकथा की परिधि को विराट बनाने में मधुदीपजी का अपार योगदान है, लघुकथा इससे कभी उऋण नहीं हो सकती।

मेरा उनका 2012 से परिचय है, जब वे उज्जैन आये थे। तब से लगभग हर महीने उनसे बात हो जाती थी। उन्हें जब भी मेरा कोई आलेख या रचना पसंद आती तो फोन करके डाक से मँगवा लेते थे। 'पड़ाव और पड़ताल' के पन्द्रहवें खण्ड में उन्होंने मेरी लघुकथाएँ शामिल की थीं। इस हेतु उनका सदैव आभारी रहूँगा। गत वर्ष अगस्त 2021 में दिल्ली गया था तो उनसे मिला था। लगभग दो घण्टे बातचीत हुई, उन्होंने स्वयं उठकर मेरे लिए चाय बनाई थी। उस दिन संवेदना पर बात चली तो उन्होंने एक विशेष बात मुझे कही थी जो मैंने नोट कर ली थी– लघुकथा में संवेदना महत्वपूर्ण है पर कुशल शिल्प और मँजी हुई भाषा के अभाव में संवेदना पक्ष पूरी तरह उभर नहीं पाता, लेखक पाठक को प्रभावित करने में सफल नहीं हो पाता और ऐसी लघुकथा सतही बनकर रह जाती है।

लघुकथा को उर्जस्वित, पल्लवित करने वाले लघुकथा महर्षि को सादर अश्रुपूरित नमन।

■ 31, सुदामा नगर, उज्जैन–456001, म. प्र./मो. 09424816096

डॉ. चंद्रेश कुमार छ्तलानी

विस्तृत से अणु की ओर यात्रा

समय के चक्र को उल्टा नहीं घुमाया जा सकता। (उजबक की कदमताल/लघुकथा : मधुदीप)

सच है कि हम मनुष्यों के पास यह सामर्थ्य नहीं कि पीछे समय में जा सकें, बल्कि हम केवल समय के पिछलग्गू हैं। जहाँ समय ले जाए, वहीं जा पाते हैं। लेकिन हममें से ही कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो समय के साथ चलते–चलते भी रास्तों में मील के पत्थर स्थापित करते जाते हैं और जब दूसरे व्यक्ति उसी राह पर निकलते हैं तो मील के पत्थरों को देखते ही उन्हें स्थापित करने वालों से स्वतः ही उनका परिचय हो जाता है। लघुकथा लेखन में 'पड़ाव और पड़ताल' शृंखला सरीखे मील के पत्थर स्थापित करने वाले मधुदीप गुप्ता जी जैसे व्यक्ति किसी परिचय के मोहताज नहीं, बल्कि उनका परिचय उनके द्वारा किया गया महती कार्य है, जो जगह–जगह दिखाई देता है। मुझ सहित हममें से कई रचनाकारों को

उन्होंने न केवल 'पड़ाव और पड़ताल' द्वारा बल्कि फोन, फेसबुक और अन्य साधनों द्वारा भी व्यक्तिगत रूप से कई बार लघुकथा लेखन को बेहतर करने हेतु अमूल्य सुझावों से धन्य किया।

"विस्तृत से अणु की ओर यात्रा", उन्होंने अपने एक लेख 'लघुकथा : रचना और शिल्प' में यह पंक्ति लघुकथा के लिए कही थी, लेकिन मुझे लगता है कि यह बात केवल लघुकथा तक ही सीमित नहीं है। हम सभी एक दिन विस्तृत से अणु की ओर यात्रा करेंगे। आज मधुदीप जी स्वयं इस तरह की एक पंक्ति हैं, जिनके नाम का विस्तार तो बहुत है लेकिन वे स्वयं किसी अणु से भी सूक्ष्म। किसी लघुकथा की तरह ही उनका जीवन भी एक घटना था और अब वे एक रचना हैं।

'पड़ाव और पड़ताल' के खण्डों के जरिये आपने लघुकथा के बहुत से रचनाकारों को एक बैनर तले लाने का ऐसा कार्य किया है, जो शायद ही कोई कर सके। इस शृंखला को पढ़ने के पश्चात मेरे अनुसार 'पड़ाव और पड़ताल' 'लघुकथा का बाइबिल' है, जिसमें लघुकथा सम्बन्धी लगभग सारी जानकारी मय उदाहरण और लघुकथाकारों की श्रेष्ठ रचनाओं के साथ उपलब्ध है। मेरा सौभाग्य यह भी रहा कि 'पड़ाव और पड़ताल' के खण्डों और कुछ अन्य पुस्तकों को ऑनलाइन करने का दायित्व मैं उनकी संतुष्टि की हद तक निभा पाया। उनकी एक लघुकथा को उद्धृत करते हुए, उसी रचना पर कुछ कहना चाहूँगा,

<u>हिस्से का दूध / मधुदीप</u>

उनींदी आँखों को मलती हुई वह अपने पति के करीब आकर बैठ गई। वह दीवार का सहारा लिए बीड़ी के कश ले रहा था।

''सो गया मुन्ना....?''

''जी! लो दूध पी लो।'' सिल्वर का पुराना गिलास उसने बढ़ाया।

''नहीं, मुन्ने के लिए रख दो। उठेगा तो.... ।'' वह गिलास को माप रहा था।

''मैं उसे अपना दूध पिला दूँगी।'' वह आश्वस्त थी।

''पगली, बीड़ी के ऊपर दूध–चाय नहीं पीते। तू पी ले।'' उसने बहाना बनाकर दूध को उसके और करीब कर दिया।

तभी–

बाहर से हवा के साथ एक स्वर उसके कानों से टकराया। उसकी आँखें कुर्ते की खाली जेब में घुस गई।

''सुनो, जरा चाय रख देना।''

पत्नी से कहते हुए उसका गला बैठ गया।

<u>उपरोक्त रचना पर मेरी प्रतिक्रिया एवं पसंद का कारण :</u>

किसी भी पाठक की सबसे पहले दृष्टि लघुकथा के शीर्षक पर जाती है। इसलिए लघुकथाकार शीर्षक ऐसा चुनते हैं जो पाठकों को वह लघुकथा पढ़ने के लिए प्रेरित करे। शीर्षक रोचक भी हो सकता है तो व्यंग्यनुमा भी। इस लघुकथा 'हिस्से का दूध' का शीर्षक पाठकों के मस्तिष्क में उत्सुकता जगाता है। उत्सुकता यह उठती है कि लघुकथा में कहीं किसी के हिस्से का दूध गिर गया या फिर बच्चे दूध का भी हिस्सा कर रहे, आदि–आदि। यह शीर्षक कलात्मक भी है और भावात्मक भी; क्योंकि 'हिस्सा' शब्द पढ़ते ही कहीं न

कहीं परिवार हमारे दिमाग में आता है। इसलिए भावों से जुड़ ही रहा है और साथ–साथ ही दूध के हिस्से को शीर्षक दर्शाना मधुदीप जी के कलात्मक कौशल का परिचय है।

लघुकथा के कथ्य पर बात करें तो एक परिवार जिसकी माली हालत अच्छी नहीं, अपने बच्चे को अच्छी तरह पालना चाहते हैं। हम भारतीयों की यह खासियत तो है ही कि बच्चे हो जाने के बाद हम खुद के लिए कम और अपने बच्चों के लिए ज्यादा जीते हैं। यह मार्मिक लघुकथा कथोपकथन और वर्णनात्मक दोनों का मिश्रित शिल्प लिए हुए है। भाषा की दृष्टि से आम व्यक्ति को भी समझ में आने योग्य है। मेरी समझ से लघुकथाकार ने लघुकथा को इस तरह कहने का प्रयास किया है ताकि एक घटना पाठकों के दिमाग में चित्रित भी हो। जैसे इन पंक्तियों पर गौर कीजिये– उनींदी आँखों को मलती हुई/दीवार का सहारा लिए बीड़ी के कश ले रहा था/वह गिलास को माप रहा था। –आदि।

इस लघुकथा की एक पंक्ति मुझे बहुत अच्छी लगी, वह है– वह आश्वस्त थी।/माँ होकर एक पत्नी यह कहती है कि– मैं अपने बच्चे को अपना दूध पिला दूँगी और चाहती है कि उसका पति दूध पी ले। एक नारी के तीन रूप एक ही पंक्ति में बता दिये हैं मधुदीप जी ने। माँ होकर बच्चे को दूध पिलाना, पत्नी होकर पति की चिंता और गृहिणी होकर आश्वस्त होकर घर की ज़िम्मेदारी। हालांकि लघुकथाकार ने पति से भी यह कहलवाया है कि वह पत्नी को दूध पीने को कह रहा है, यह आदर्शवाद तो है लेकिन रचनाकार ने इसके जरिये भी एक परिवार की आर्थिक स्थिति दर्शाते हुए समाज के एक वर्ग के हालात भी दर्शाने का सफल प्रयास किया है।

पति का पहले यह कहना कि ''पगली, बीड़ी के ऊपर दूध–चाय नहीं पीते। तू पी ले।''/और बाद में यह कहना कि ''सुनो, जरा चाय रख देना।'' कुछ समीक्षकों को खल सकता है लेकिन मेरी दृष्टि में यह है कि यह एक भूखे व्यक्ति जो पति भी है और पिता भी है, की भावनाओं को दर्शा दिया है और साथ ही यह संदेश दिया है कि त्याग करना केवल नारी का ही कार्य नहीं, पुरुष को सहभागी होना ही चाहिए। समय के अनुसार समाज के बदलाव को भी इंगित किया है यहाँ रचनाकार ने।

लघुकथा का अंत करना लघुकथाकार का कौशल है और इस कार्य में भी यह लघुकथा सफल है। पुरुष भूखा है लेकिन भूख मिटाने के लिए खुद के लिए कुछ माँगते हुए उसका स्वर भर्रा जाता है क्योंकि वह स्वयं से पहले अपने परिवार की भूख मिटाना चाह रहा है। अंत स्वतः ही पाठकों के हृदय को मार्मिक कर देता है। इस रचना की एक विशेषता यह भी है कि अंत में पाठकों को विवश करे कि यदि वे सक्षम हैं तो इस तरह के परिवार की सहायता ज़रूर करें और यह विशेषता भी एक कारण है जो यह रचना मेरी पसंद की है।

■ 3 प 46, प्रभात नगर, सेक्टर–5, हिरण मगरी, उदयपुर–313002, राज./मो. 09928544749

डा. लता अग्रवाल 'तुलजा'

लघुकथा को बेटी माना तो निभाया भी

स्मृतिशेष वरिष्ठ लघुकथाकार मधुदीप जी से परिचय लगभग छह वर्षों पूर्व हुआ था। मैं उन्हें एक स्पष्ट वक्ता के रूप में देखती हूँ।

अगर आपकी कोई बात उन्हें अपने तर्कों पर स्वीकार नहीं है या फिर आपकी कोई विशेषता उन्हें पसंद है तो, वे स्पष्ट कह देते थे। झूठी प्रशंसा या छद्म व्यवहार उनकी फितरत नहीं।

यूँ उनसे सामान्य परिचय और कभी–कभार फोन पर ही चर्चा होती थी किंतु जब उन्होंने पहली बार बताया कि लता तुम्हारी भाभी को कैंसर है तब से लगभग हर हफ्ते उनसे बात होती, फोन पर भाभी के हालचाल लेती। भाभी के जाने के बाद वो बोले तुम्हारी भाभी का नियम था बेटियों को खाली हाथ नहीं भेजते इसलिए वो जाते–जाते भी रख गई फलां बेटी को यह, फलां बेटी को ये देना, खाली हाथ मत जाने देना। उनकी जुबान पर अपनी कम, हमेशा भाभी की बातें रहती। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है, दोनों में कितना प्रेम था। पुस्तक 'शुभ प्रभात, Love You!' ने इस पर मोहर लगा दी।

मुझे याद है, अजमेर शकुन दीदी के यहाँ लघुकथा की लंबी चर्चा और सहभोज के दौरान बलराम अग्रवाल जी ने उन्हें कहा कि लता के घर जाओगे तो लजीज भोजन मिलेगा मगर लहसुन वाला। तो बोले, ''हम लता से बिना लहसुन वाला खाना बनवा लेंगे। बेटियों के हाथ का भोजन तो लजीज ही होता है।'' तब उन्होंने बताया था कि लता लघुकथा मेरी बेटी है। जिस तरह हम ब्याह करने के बाद भी समय–समय से बेटियों को बुलाकर सम्मान से विदा करते हैं। मैं लघुकथा पर खर्च करता हूँ। तब से जब भी उनकी कोई नई बुक आती, मैं बधाई देते हुए हँसते हुए कहती, ''बेटी आ गई भाई साहब?''

खैर, कहना एक बात है, उसे निभाना एक। मधुदीप जी ने 'लघुकथा को न केवल अपनी बेटी माना, यह भाव ताउम्र निभाया भी।' 'पड़ाव और पड़ताल' की जो शृंखला उन्होंने तैयार की, वह लघुकथा के लिए एक उपहार है। मुझे खुशी है कि मुझे न केवल इस शृंखला में स्थान दिया बल्कि लघुकथा को लेकर मेरे जो नवाचार हुए उस दौरान उस पर भी वे मुझसे चर्चा करते, जो उन्हें उचित लगता उसकी प्रशंसा करते।

एक शाम उनका फोन आया, लगा बड़ी जल्दी में थे, ''ऐसा है लता, इस बार नव लघुकथाकार शकुंतदीप सम्मान हेतु मैंने तुम्हारा नाम चयनित किया है। मुझे जल्दी से अपनी स्वीकृति मेल करो, मुझे सुबह परिणाम की घोषणा करना है।'' मैं असमंजस में पड़ गई। फौरन शकुन दीदी से बात की तो बोलीं, ''अरे ये तो बड़ी खुशी की बात है, इसमें सोचना कैसा? जल्दी से अपनी स्वीकृति भेजो।'' दूसरे दिन फेसबुक पर यह सम्मान मेरे नाम घोषित हो चुका था।

उनका बिंदास अंदाज में बात करना, यहाँ तक कि स्वयं के कैंसर की सूचना भी मुझे उन्होंने खुद ही दी बोले, ''ऐसा है लता, मुझे डाक्टर ने कैंसर बताया है लेकिन चिंता की कोई बात नहीं, प्रायमरी स्टेज है। छोटा–सा ऑपरेशन करना है, ठीक हो जायेगा।'' मगर उनके भीतर का अकेलापन उनके शब्दों में झाँकता था जब वो कहते थे कि कोई चिंता नहीं, तुम्हारी भाभी की फोटो लगा रखी है। उससे बात करता रहता हूँ। रोज फेसबुक पर भाभी को उनका संबोधन उनकी वेदना बताता था। शकुन ये शकुन वो, अपनी जीवन संगिनी से कोई कितना प्यार कर सकता है, ये देखना है तो मधुदीप जी को देखा जा सकता है। अब वो अपनी शकुन के पास पहुँच गए।

ईश्वर उन्हें मुक्ति दे।

■ 30 सीनियर एम.आई.जी., अप्सरा कॉम्प्लेक्स, । सेक्टर, इंद्रपुरी, भेल क्षेत्र, भोपाल–462022, म.प्र.

अंतरा करवड़े

मधुदीप : अपनी ज्योति से विधा को प्रकाशित करता दीप

मधुदीप जी मिले कम और दिखे ज्यादा। लघुकथा के मंचों से खरी–खरी सुनाते और अपने प्रिय माध्यम फेसबुक से मन की बातें साझा करते हुए वे एक बेचैनी को अपने आप में दबाए चलते थे।

एक जुनून की तरह वे हमेशा विधा के प्रति समर्पण और अपने जीवन की चुनौतियों के मध्य संतुलन साधते रहे। फोन पर बतियाते, अपनी योजनाएँ साझा करने लगते, तो लगता था कि इनके लिए तो ईश्वर ने दो–तीन जीवन अवधियों का प्रावधान रखना था ... कितना कुछ सिर्फ तय किया हुआ रह गया!

उनकी लघुकथाओं के मराठी अनुवाद को लेकर अक्सर उनसे चर्चाओं का लंबा दौर चला। खास उसके ऑनलाइन विमोचन के लिए मुश्किल से गूगल मीट पर आये भी थे किसी की मदद से। लघुकथा विधा को कुल मिलाकर वे परिपूर्ण करना चाहते थे। संख्यात्मकता से इसका पोषण नहीं, क्षरण ही अधिक होगा और काफी मेहनत की ज़रुरत होती है एक छोटी–सी लघुकथा लिखने के लिए; ये उनके पक्के विचार रहे।

शुरुआती दौर में कन्टेन्ट वेबसाइट्स को लेकर सशंकित मधुदीप जी आगे चलकर प्रसिद्ध पोर्टल्स पर रचनाएँ भेजने लगे थे। उन पर आती प्रतिक्रियाओं और डाउनलोड की संख्याओं से पुलकित भी होते रहे। उनकी लघुकथा के भविष्य को लेकर योजनाएँ भी लंबी–चौड़ी थी। अनेकानेक विदेशी भाषाओं में लघुकथा का अनुवाद होना चाहिए लेकिन उसके द्वारा हमारी संस्कृति भी अनूदित होनी चाहिए, केवल विविध सम्मेलनों से नहीं बल्कि ज़मीनी काम करते हुए ही इस विधा को पोषित करना सही है, इस आशय को वे कई बार अभिव्यक्त कर चुके थे। उनकी लघुकथाओं में भी वर्तमान को लेकर एक अनकही बेचैनी प्रत्येक कोण पर उभरकर आती रही। स्त्री को उच्च स्तर पर देखने की उनकी सामयिक व पारिभाषिक उत्कटता के चलते ही 'नमिता सिंह' एक बड़े कैनवास पर आ पाई।

लघुकथा के किरदारों की बात हो या 'पड़ाव और पड़ताल' के विविध अंकों में समाहित लघुकथा का 'मानसरोवर', मधुदीप जी एक ही जीवन में अनेक समयावधियों को जीवंत कर गये हैं। वे लघुकथा के इंद्रधनुष के समान प्रतीत होते हैं, जो विधा के चमकते सूरज और उसकी भावनाओं की आर्द्रता के संवाद के मध्य पार्श्वभूमि में अपनी दैविक उपस्थिति दर्ज करवाते रहते हैं। वास्तविक जीवन में अनेक प्रकार से उतार–चढ़ावों को झेलते हुए वे कई बार विधा के माध्यम से मुखरित भी होते रहे। रहा सवाल इन समस्याओं के मध्य भी विधा को लेकर समर्पण की बात का, तो हमेशा ही उनका जवाब रहा है, कि यह विधा मुझे जीवन–प्रबंधन सिखाती है, कई बार प्राणवायु देती है।

अपनी सशक्त रचनाओं के साथ, नवोदितों को दिए गये प्रोत्साहन के साथ और विधा को दिए गये आधार के ज़रिए, मधुदीप जी एक लंबे समय तक अपनी शब्द साधना का प्रकाश प्रसारित करते रहेंगे। कोटिशः नमन!

■ अनुध्वनि, 117 श्री नगर एक्स्टेन्शन, इंदौर–452018, म. प्र./मो. 09752540202

सुधीर

मेरा तो सब कुछ चला गया

(मधुदीप जी के सहायक के उद्‌गार)

आदरणीय मधुदीप अंकल जी, मैं आपको नमस्कार करता हूँ.... मैं आपके बारे में क्या कहूँ! जो कहूँगा वो सब कम होगा.... मैं आपसे जबसे मिला मैंने आपसे बहुत कुछ सीखा है....मेरा आपका रिश्ता ज्यादा पुराना तो नहीं पर कुछ दस पन्द्रह वर्षों का है। आपने और आंटी जी ने बहुत प्यार दिया। हालांकि कभी–कभी बहुत गुस्सा किया करते थे, टाइम के पक्के जो थे आप.... पर सोचता था.... कोई बात नहीं, आप दोनों के साथ रहते–रहते वक्त का पता नहीं चला कि आंटी जी ने माँ और आपने पिता की जगह मेरे मन में बन गई। कुछ आप अपने मन की कहते तो कभी मैं आपसे अपने मन की कहता था। आप मुझे दान पुण्य की बातें पूछा करते तो मैं अपनी बुद्धि के अनुसार आपको बताया करता पर शायद आपको मेरी बातें सही नहीं लगती थी। हमारे बीच पिता–पुत्र की तरह बहुत–सी बातें हुआ करती थीं। किसी से अब मैं क्या कहूँ। आपके जाने के बाद मेरा तो सब कुछ चला गया। दिल से कह रहा हूँ, आपको गये ग्यारह महीने हो गए पर एक दिन भी ऐसा नहीं गया कि आपकी याद ना आई हो, बस एक बात का बहुत दुःख है कि आपने जो अपने जीवन में जो कुछ भी नाम कमाया था वो अचानक से लुप्त–सा हो गया।

अब मुझे लगता है कि आप मुझे फोन करोगे और कहोगे कि सुधीर सुबह आ जाना। फिर एक ही बार में सब कुछ बिखर जाता है। आपको लेकर मैंने बहुत से ख्वाब देखे थे कि अंकल के लिए ये सब करूँगा पर आपसे कभी कह नहीं पाया.... अच्छा नमस्कार जी, मन में है तो बहुत कुछ जो आपसे कह सकता था पर अब मन की मन में रह.... गई फिर भी मुझसे आप दोनों की जितनी सेवा हो पायी मैंने करने की कोशिश की। आप दोनों जहाँ भी हों, अपना आशीर्वाद बनाए रखियेगा। राम राम जी!

■ सम्पर्क : मोबाइल 08447119476

आवरण पृष्ठ 3 (भावभूमि की पृष्ठभूमि) **का शेष...**

इण्टरनेट पर मधुदीप जी की पुस्तकें : इण्टरनेट पर डॉ. चन्द्रेश कुमार छतलानी के सहयोग से 'पड़ाव और पड़ताल' के सभी प्रकाशित (31) खण्डों की पीडीएफ इस लिंक पर निःशुल्क उपलब्ध हैं– http://laghukathaduniya.blogspot.com/2021/08/1-31.html /अन्य पुस्तकें– http://booksdisha.blogspot.com लिंक पर हैं।

शोध कार्य : मधुदीप जी के उपन्यासों व लघुकथाओं पर कई लघु शोधप्रबंध एवं मधुदीप जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर पीएच.डी. हेतु शोधकार्य।

प्रमुख सम्मान : साहित्यकारों द्वारा पोषित/संचालित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

सम्प्रति : दिल्ली नगर निगम से 2010 में सेवानिवृत्ति के बाद पूर्णतः साहित्य सृजन, सम्पादन एवं दिशा प्रकाशन के माध्यम से अच्छे साहित्य के उन्नयन हेतु समर्पित रहे।

सम्पर्क : इष्टमित्र व सम्बन्धी, जिन्होंने उनके साहित्य और स्मृतियों को संजोकर रखा है। ■

।।संस्मरणात्मक कहानी।।

मधुकांत

पड़ाव की पड़ताल

हिन्दू कर्मकाण्डीय मान्यताओं के अनुसार मृत्यु के उपरांत प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा तेरह दिन तक उसके घर में निवास करती है। इन्हीं तेरह दिनों में परिवार के स्वजन उनकी आत्मा की शांति के लिए गंगाजी में अस्थियों का विसर्जन, दानदक्षिणा, पूजापाठ, गरुड़पाठ, पीपल का जलाभिषेक और यज्ञ आदि करके घर को पवित्र करते हैं। परंतु मुझे तो अपने नश्वर शरीर को त्याग किए केवल तीन दिन ही हुए थे कि तेहरवीं की रस्में पूरी करके मुझे घर से विदा करने का उपक्रम कर दिया गया।

तीन दिन में सिमटे मेरे तेहरवीं के कार्यक्रम में किसी स्वजन को सूचना नहीं दी गई। केवल पंडित को बुलाकर हवन सम्पन्न कराकर उसे भोजन कराया और दानदक्षिणा देकर खुश कर दिया। इतना सब भी इस भय से कर दिया कि कहीं मैं घर पर कब्जा करने वालों, मेरे सामान की लूटपाट करने वालों को भूत बनकर परेशान ना करूँ। भला सोचिए, अपने ही परिवार के खिलाफ मैं भूत क्यों बनता!

तीन दिनों में ही मेरे घर का कैसा कायाकल्प कर दिया गया। मेरे कमरे में पड़ी मेज–कुर्सी, अलमारी में भरी नई–पुरानी पुस्तकें, लेखकों की प्रकाशित–अप्रकाशित पांडुलिपियाँ, पत्र–पत्रिकाएँ, बड़े करीने से सहेजकर रखी प्रकाशित रचनाओं की कतरनें, पाठकों और मित्र साहित्यकारों के दिल से लगाकर रखे हुए पत्र– सब एक झटके में कबाड़ी को बुलाकर रद्दी में तुलवा दिए गये... मैं बस टुकर–टुकर देखता रहा...।

लोकलाज के भय से सबमें यही प्रचारित कर दिया कि कॉविड के कारण हमने किसी को कष्ट देना उचित नहीं समझा। कोविड की आड़ लेकर उन्होंने मुझको गुमनाम कर दिया... वर्षों से अर्जित... सृजित पूरे साहित्य को मिट्टी में मिला दिया।

परन्तु कोई भी साहित्यकार कभी पूर्णतया मटियामेट नहीं होता। स्वतंत्रता संग्राम के आंदोलन में सैकड़ों साहित्यकारों को जेल में डाला गया... उनके साहित्य की होली जलाई गई. ..फिर भी उनके लिखे आजादी के तराने आज भी नवयुवकों में जोश भरने का काम करते हैं।

शब्दों का, पुस्तकों का शाश्वत महत्व होता है। साहित्यकार कभी नहीं मरता... स्कूल कॉलेजों की अलमारियों के सेल्फों में बैठा झाँकता रहता है। अचानक कोई सुधि पाठक या शोधार्थी उसको जीवंत कर देता है। परिवार के लोग उन शब्दों का, साहित्य का अर्थ नहीं समझते बल्कि उनकी तो सदैव नकारात्मक दृष्टि रहती है और सच भी है उन्होंने उन शब्दों के लोथड़े से अपेक्षा की है... आशाएँ बाँधी हैं... सपने जोड़े हैं परंतु वह शब्दपुंज अपनी ही दुनिया में खोया... अपने ही पात्रों के दुःख–सुख साझा करता रहा। फिर मेरे वैश्य समाज के लोग तो सदैव मुझमें व्यापारिक दृष्टिकोण ही ढूँढते रहे हैं... अस्वस्थ होने के बाद तो सब मेरी वस्तुओं पर अपना स्वामित्व खोजने लगे हैं।

अब यह सब बताने में मुझे कोई संकोच नहीं है क्योंकि मेरा स्थूल शरीर यहाँ पड़ा है परंतु आत्मा इधर–उधर भटक रही है। अनेक अतृप्त इच्छाएँ, अंतर्निहित भलाई–बुराई

सब–कुछ स्पष्ट दिखाई दे रही है। चेहरे पर चढ़ाया हुआ झूठा नकली आवरण तो नष्ट हो चुका है, अब अंदर–बाहर का सब–कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

दिनभर तो सहायक के साथ बातचीत में व्यतीत हो जाता था परन्तु साँझ ढलते–ढलते मन उदास हो जाता। डाक्टर अंतिम राउंड पर आया तो मैंने पूछ लिया, ''डॉक्टर साहब, आज तो मेरी कैंसर की रिपोर्ट आनी थी...?''

''हाँ, शायद आ गई हो... कल अपने सहायक को भेज देना। उन्हें सब समझा दूँगा।'' कहता हुआ डॉक्टर मेरी फाइल पर हस्ताक्षर करके तुरन्त लौट गया।

डॉक्टर के शब्दों को सुनकर और चेहरे को देखकर मैंने अनुमान लगा लिया कि रिपोर्ट अच्छी नहीं है इसलिए आज डॉक्टर टका–सा जवाब देकर निकल गया अन्यथा तो वह मेरे कमरे में आकर 10–15 मिनट चर्चा अवश्य करता था। युवावस्था में उसने कुछ कविताएँ लिखी थीं। जब मैंने प्रेरित किया तो उसने अपना कविता संग्रह प्रकाशित कराने के लिए तैयार करना आरंभ कर दिया। फिर हम दोनों के बीच लेखक–प्रकाशक का रिश्ता बन गया।

कल प्रातः सहायक आएगा तो उसको डॉक्टर के पास भेजकर रिपोर्ट की जानकारी प्राप्त कर लूँगा। एक तो अकेलापन, दूसरा रिपोर्ट में कैंसर होने की संभावना से मन घबराने लगा। घबराहट से ध्यान हटाने के लिए मैं शकुन के विषय में सोचने लगा।

जीवन में पत्नी के महत्व का मुझे तब एहसास हुआ जब उसने चारपाई पकड़ ली। जीवन के यथार्थ को समझते हुए मैंने उससे पूछ–पूछकर चाय और खिचड़ी बनाना सीख लिया। बिना रस का शुष्क जीवन जैसे–तैसे व्यतीत होने लगा। मित्र ने एक दिन समझाया, ''पत्नी ने सारी उम्र तुम्हारी सेवा की है... कम से कम इनके अंतिम क्षणों में तो तुम्हें भी इनकी सेवा करनी चाहिए।''

इससे पूर्व मुझे ऐसे वाक्य अच्छे नहीं लगते थे। मैं समझता था, परस्पर सेवा करना केवल पत्नी का उत्तरदायित्व होता है, पति का नहीं। परन्तु धीरे–धीरे सब समझ में आने लगा। लगने लगा कि इनके न रहने पर जीवन बहुत कष्टपूर्ण हो जाएगा।

शकुन को एक तो शारीरिक कष्ट दूसरी ओर मुझसे यानी पति से सेवा लेने की आन्तरिक पीड़ा। जब यह सब सहन ना हुआ तो एक दिन उसने हमेशा के लिए आँख बन्द कर ली।

वह बीमार थी तो भी मैं बहुत परेशान था... कभी–कभी भगवान से दुआ करता– इसको अपने पास बुला ले परन्तु अब उसके न होने पर पता चला कि अस्वस्थ होते हुए भी वह मेरे लिए कितनी उपयोगी थी। लगता है, अब जीवन में कुछ शेष नहीं रहा। संपादन–लेखन–प्रकाशन में मन लगाने का प्रयत्न किया। अधूरे संकल्पित कार्य को करने का मन बनाया। मित्रों, साहित्यकारों से बातें होने लगीं। धीरे–धीरे जीवन पटरी पर लौटने लगा।

सारा जीवन लघुकथा की भाँति चंद शब्दों में सिमट गया। पत्नी के गुजर जाने के बाद नितान्त अकेला... न कोई बच्चा ना कोई बड़ा... कहने को परिवार के लोग साथ रहते हैं, परन्तु किराएदार की मानसिकता लिए। सब मेरी नाममात्र की सम्पत्ति पर ललचाए बैठे हैं। इनको प्रतिदिन कुछ देता रहूँ तो खुश अन्यथा नाराज... आखिर कितना दूँ... मुझे भी तो अपना शेष जीवन जीना है। भगवान की कृपा से आज इतना है कि मुझ

अकेले की तो गुजर–बसर होती रहेगी। किसी के सामने हाथ न फैलाना पड़ेगा; परंतु मेरे चारों और जो गिद्ध–दृष्टि लगाए बैठे हैं, इनको तो कुछ नहीं दूँगा...।

व्यक्ति को अपनी कमजोरी का भान नहीं होता। शकुन बहुत संस्कारित, पढ़ी–लिखी, धार्मिक व पतिव्रता थी। कोई भी घर पर मिलने आ जाता तो वह दिल से सत्कार करती। इसलिए सभी साहित्यकार मित्र उसे अन्नपूर्णा कहते थे।

मेरा परिवार सदैव पितृसत्ता का पक्षधर रहा और वही संस्कार मुझमें हस्तांतरित हो गए। मैं पत्नी पर अंकुश लगाए रहता, उसको दोयम दर्जे का स्थान देता और धीरे–धीरे वह मेरी इच्छा के अनुसार ढलती चली गई। प्रारम्भ में वह मेरे कटाक्ष और झिड़कियाँ सुनकर नाराज होती, बाद में धीरे–धीरे उसकी आदत बन गई। उस पर शासन करना मुझे अच्छा लगने लगा। एक बच्चा उत्पन्न करने का पोरस तो ईश्वर ने नहीं दिया, शायद यही खीझ बार–बार मुझे क्रोधित और कुंठित कर देती।

बड़े भाई समान साहित्यकार मित्र का आना–जाना निरन्तर रहता था। कभी मुझे गलत देखते तो टोक देते, ''तुम्हारे घर को और तुमको इसी ने सँभाल रखा है, इसलिए इसका सम्मान करना चाहिए...।''

मित्र सदैव नारी का पक्षधर रहता था। वह बड़ा था इसलिए तब तो मैं उसको कुछ नहीं कहता परन्तु मन ही मन बुदबुदाता, ''मुझे जोरू का गुलाम बनने का शौक नहीं है...।''

मित्र बहुत कम बोलता था परन्तु उसको लिखने का बड़ा जुनून था। शायद ईश्वर ने उसके मन में सृजनशीलता की कोई मशीन लगा रखी थी। बीस दिन में उपन्यास लिखकर वह सुबह–सुबह मेरे घर का कुण्डा खटखटा देता... उत्साहपूर्वक पाण्डुलिपि हाथ में सौंप देता। अगले दिन मैं उसको पढ़ने, सम्पादन करने में लग जाता। जब तक मैं उसे प्रकाशित कराने का जुगाड़ करता तो उनका पत्र आ जाता... कहानी संग्रह भी तैयार हो गया है...।

बनिया तो हम दोनों ही थे। बचपन में ही हम दोनों में लिखने का अंकुरण होने लगा था। फिर वह मधुर तथा मैं दीपक उपनाम से कविताएँ रचने लगे। अचानक एक दिन बैठे–बैठे साहित्यिक साझेदारी कर ली। मधुर और दीपक को मिलाकर मधुदीप बना दिया। 14 वर्ष तक दोनों का संयुक्त लेखन चला। 14 वर्ष बाद हम दोनों ने मिलकर उस साझेदारी को तोड़ना उचित समझा। उसने एक नई साहित्यिक फर्म का गठन कर लिया, मधुकांत एंड मधुकांत। स्वतंत्र अस्तित्व होने पर उसका साहित्य सृजन सिर चढ़कर बोलने लगा। वह शायद लिखने के लिए ही इस दुनिया में आया है।

मुझे बचपन से ही अधिक बोलने की आदत है। एक दिन मित्र ने टोक दिया, ''तुम्हें तो अध्यापक बनना चाहिए था। अपनी कक्षा में चिल्ला–चिल्लाकर बच्चों को अच्छी प्रकार से समझा देते।'' सुनकर मैं झेंप गया। बोला, ''और अध्यापक बन गए आप...।''

''देखो मित्र, हमारे शब्दों का बहुत मूल्य है। हमें इनको व्यर्थ नहीं करना चाहिए। अधिक बोलने से हमारी शक्ति और सृजनात्मकता का क्षय होता है।'' उन्होंने कहा।

''शायद तुम ठीक कहते हो, ''मैंने स्वीकार किया।''...

बचपन का मित्र मेरी रग–रग को जानता था। उसने सुझाया– ''तुममें रचनाधर्मिता की तुलना में व्यापारिक गुण अधिक प्रबल हैं। यदि व्यापार करने लगो तो अधिक सफलता

मिलेगी... ।''

''अरे नहीं भाई, कैसा व्यापार! यह क्लर्क की नौकरी भली है।''

''तुम एक सफल प्रकाशक भी बन सकते हो।'' उन्होंने कहा।

जाने के बाद भी उनके कहे शब्द कानों में गूँजते रहे– ''तुम एक सफल प्रकाशक बन सकते हो.... ।'' मन ही मन योजनाएँ बनने लगीं और सोचते–सोचते एक दिन 'दिशा प्रकाशन' का उद्‌भव हो गया।

मित्र की बात शत–प्रतिशत सच निकली। प्रकाशन द्वारा आर्थिक समृद्धि चाहे न हुई परन्तु समाज में प्रतिष्ठा बढ़ी और साहित्यिक मित्रों में कद ऊँचा हो गया। छोटे–बड़े साहित्यकार अपनी पुस्तक प्रकाशित कराने के लिए निवेदन करते तो बहुत संतुष्टि मिलती। घर का प्रकाशन था तो पुराने साहित्य का नया संस्करण, समीक्षा, चर्चा–परिचर्चा, गोष्ठी आदि करवाकर साहित्य जगत में अपना सितारा बुलंद कर दिया।

लेखन और प्रकाशन के दूसरे चरण में मैंने अपने–आपको लघुकथा विधा पर केन्द्रित कर दिया। मुख्य रूप से 'पड़ाव और पड़ताल' के माध्यम से। देश के अधिकांश लघुकथाकारों को प्रकाशित किया। मेरा मन कहता है– लघुकथा साहित्य में यह एक मील का पत्थर बनेगा। लघुकथाएँ लिखना, उनका संपादन करना, शोध, समीक्षाएँ, लेख लिखना, पुस्तक मेले में लघुकथाओं को सजाना, सभी साहित्यिक मित्रों को आमंत्रित करना मेरा शौक बन गया। परिणामस्वरूप इससे मुझे ख्याति और सुख दोनों मिले।

अस्पताल के बिस्तर पर अकेले पड़े जीवन के अनेक बिम्ब मेरे जेहन में उतर रहे थे। न जाने क्यों चारों ओर सन्नाटा पसरा पड़ा है। रात के 3:00 बजे हैं। शाम से बढ़ती हुई सीने की जकड़न धीरे–धीरे बढ़ती जा रही है... साँस लेने में कठिनाई होने लगी ... मैंने चिल्लाकर नर्स को बुलाना चाहा परन्तु गले से आवाज नहीं निकली... मैं घबराकर छटपटाने लगा। हाथ–पाँव पटकने लगा।

मुझे लगने लगा शायद मेरा अन्तिम समय आ गया। कोई भी पास नहीं... हे भगवान, यह घबराहट... एक–एक साँस लेने में तकलीफ.... कॉलबेल बजाने के लिए मैंने हाथ उठाया परन्तु वहाँ तक पहुँचा नहीं.... काश कोई पास बैठा सीना सहला रहा होता।.... शकुन की झलक दिखाई दी। वह पास नहीं आई। मैंने अपने दोनों हाथ उसकी ओर उठा दिए।

''चलो, चलना है क्या?'' उसके होंठ बुदबुदाए और मैं साथ जाने के लिए उठने लगा.... अचानक शरीर पत्थर–सा बन गया.... एकदम निर्जीव।

शरीर के बाहर निकलकर एक दृष्टि मैंने अपने निश्चल शरीर पर डाली... धीरे–धीरे चारों ओर देखने लगा। फिर मोहवश घर की ओर भागा। अरे, यह सलोनी घर के मेरे कमरे में क्या कर रही है... आश्चर्य...! परिवार वाले उसे जानते थे इसलिए टोका–टाकी का सवाल ही पैदा नहीं होता था। वैसे भी उन सबके बीच संवाद नहीं होता था। पहले कमरा, फिर अलमारी खोलकर उसने कीमती सामान निकाला और निकल गई। मुझे उसकी यह भागदौड़ और लालच देखकर आश्चर्य हुआ। जिसे हस्पताल में मेरे आगे से हटना नहीं चाहिए था, जिसे अपनी सम्पत्ति का राजदार बनाया, उसी के हाथ लुटा–पिटा... मैंने अपना सिर धुन लिया।

प्रतिदिन की भाँति सहायक प्रातः 6 बजे आया। एक उड़ती–सी नजर उसने मुझ

शेष पृष्ठ 79 पर

(इस खण्ड में 'मधुदीप : लघुकथा सृजन के विविध आयाम' ग्रन्थ के कुछ आलेखों के प्रमुख अंश (संक्षिप्तीकरण रूप में) साभार लिये जा रहे हैं। इन आलेखों में मधुदीप जी के लघुकथा–सृजन के विभिन्न पक्षों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण किया गया है। स्थान की सीमितता के कारण आलेखों को पूर्ण रूप में लेना संभव नहीं हो पाया है। मूल आलेख में से हटाये गए अंशो के स्थान पर तीन डाट्स (...) का उपयोग किया गया है। तीन से अधिक डॉट्स का उपयोग लेखक द्वारा मूल आलेख में किये गए अनुसार है। आलेखों के शीर्षकों में कोई बदलाव नहीं किया है। डॉ. पुरुषोत्तम दुबे का आलेख ग्रंथ में शामिल 'मधुदीप की सार्वकालिक लघुकथाएँ'आलेख का हिस्सा है। संक्षिप्तीकरण में हमने प्रयास किया है कि लेखक का मूल भाव/आशय आहत न हो, तदापि संक्षिप्तीकरण हेतु हम लेखकों से क्षमाप्रार्थी हैं। –संपादक)

डॉ. सतीश दुबे (स्मृतिशेष)

मधुदीप का रचना संसार

...लघुकथा के विकास के पच्चीस वर्षों बाद जिन कुबड़े चिह्नों ने लघुकथा की घेराबंदी की, वैसी सम्भावना प्रारम्भ में ही महसूस होने लगी थी। इस नागपाश से मुक्त कराने के लिए पहले दौर के जिन रचनाकारों ने गुणात्मक लेखन को महत्व दिया, उनमें मधुदीप का नाम सहज ही उभरकर सामने आता है। मधुदीप कथा–साहित्य से जुड़े रचनाकार हैं। लघुकथा के अलावा कथा–साहित्य की दो महत्वपूर्ण विधाएँ– उपन्यास तथा कहानी–लेखन से भी उनका रचनात्मक रिश्ता रहा है। छह उपन्यास तथा अनेक कहानियाँ रचकर उन्होंने इस भ्रम को तोड़ा कि जो लेखक के अन्य विधाओं में मिसफिट हैं, लघुकथा–लेखन की ओर अग्रसर हुए हैं। मधुदीप ने लघुकथाएँ लिखी ही नहीं, बल्कि लघुकथा के उन्नयन में महत्वपूर्ण योगदान भी दिया। सम्पादित संकलन 'तनी हुई मुट्ठियाँ' उन्होंने लघुकथा–जगत को तब दिया, जब स्तरीय संकलन का लम्बी गैप के बिना निरंतर पाठकों तथा लेखकों के बीच आना जरूरी था। 'पड़ाव और पड़ताल' के माध्यम से उन्होंने एक अभिनव प्रयोग करके लघुकथा को सर्वप्रथम पड़ताल के पलड़े में प्रस्तुत किया। पड़ताल का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा– ''इस विधा में जो कुछ हो चुका है उसकी पड़ताल होना आवश्यक है और मेरा मत है कि इस पड़ताल से लघुकथा का स्वरूप, विकास और भावी दिशा बिल्कुल स्पष्ट होकर सामने आ सकेंगे....।'' लघुकथा के प्रति उनकी इस सजग दृष्टि के परिणामस्वरूप ही भविष्य में ऐसे या इससे हटकर प्रयोग होते रहे। 'पड़ाव और पड़ताल' में ही डॉ. कमल किशोर गोयनका ने लघुकथा के सम्बन्ध में समीक्षात्मक आलेख लिखकर यह शोधपूर्ण मत व्यक्त किया कि माधव राव सप्रे द्वारा लिखित 'एक टोकरी भर मिट्टी' वर्तमान लघुकथा का ठीक आदि रूप है। साथ ही यह कि प्रेमचन्द ने उर्दू में छह तथा हिन्दी में एक लघुकथा लिखी। इस प्रकार लघुकथा जगत से दो महत्वपूर्ण नाम इस आलेख के प्रकाशित होने के बाद जुड़े। 'पड़ाव और पड़ताल' के बाद भी श्रेष्ठ कृतियों के प्रकाशन

का सिलसिला मधुदीप ने जारी रखा। एक रचनाकार के अलावा यह समर्पण–भाव लघुकथा के प्रति मधुदीप की निष्ठा का द्योतक है।

सामाजिक सरोकार के इर्द–गिर्द परिस्थितियाँ, घटनाएँ, अनुभव के ताने–बाने से बुना गया जीवन–सत्य मधुदीप की लघुकथाओं का वैशिष्ट्य है। समसामयिक यथार्थ से साक्षात्कार कराने वाली रचनाएँ, सम्वेदनाओं को झंकृत ही नहीं करतीं बल्कि पात्रों के चरित्र को बहुत निकट से देखने का एहसास भी कराती हैं। बदलते जीवन–मूल्यों के विभिन्न पक्षों से जुड़े महीन रेशों से मानवीय व्यवहार को कलात्मक स्पर्श देकर लघुफलक पर प्रस्तुत करना उनका अपना रचनात्मक कौशल है।

मानवीय व्यवहार का अच्छा या बुरा होना समसामयिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जब व्यवस्था चरमराने लगती है, मूक दर्शक बनकर खुलेआम अधिकारों का हनन होते देखने के लिए व्यक्ति मजबूर हो जाता है। तब आत्मकेंद्रित होकर बिखराव, विद्रोह, स्वार्थ या अनैतिकता की ओर अग्रसर होने लगता है। मधुदीप इस यथार्थ से परिचित रहे हैं, इसीलिए उनकी अधिसंख्य लघुकथाएँ इसी पृष्ठभूमि पर रची गई हैं।...

लघुकथा के कथानक जितने महत्वपूर्ण होते हैं, उतनी ही उसके अनुरूप भाषा भी। कहा तो यह जाता है कि भाषा की समृद्धि विधा और उसकी शैलियों को जन्म देती है। समृद्धि का यह भंडार शब्द हैं। भाषा की शब्द–सम्पदा जितनी समृद्ध होगी, दो टूक शब्दों में कथन की प्रस्तुति उतनी ही अधिक प्रभावशाली हो सकेगी। कथ्य की प्रस्तुति में शब्दों की कंजूसी नहीं मितव्ययता जरूरी है। दरअसल शब्दों की यह मितव्ययता ही लघुकथा है। कथ्य को तरासते हुए शब्दों की मितव्ययता से कसावट आ जाती है। नर्मदा की तरह कुँवारी भाषा पत्थर के समान कठोर कथानक रूपी चट्टान को भी आलिंगनबद्ध करके चमकीली बालूरूपी रचना में परिणत कर देती है। शब्दों का प्रयोग किसी अनुबन्ध के अन्तर्गत नहीं, प्रस्तुति के अनुरूप होता है। ईमानदार व्यापारी के तोल–काँटे जैसा न कम न ज्यादा। शब्दों के सावधानीपूर्वक किये गए प्रयोग से ही लघुकथा का आकार निर्धारित होता है। शब्द, लेखन की चमक हैं, उस पर कृत्रिम रूप से जड़े गये नगीने नहीं। इसीलिए लघुकथा की रचना–प्रक्रिया में शब्द कथ्य की भाषा के साथ चलते हैं।

आठवें दशक के प्रारम्भ में चुटकुलों या पुराने ट्रेक्चर के रूप में जिस लघुकथा को परिचित कराया गया, वह न केवल कथ्य बल्कि भाषागत स्तर पर भी लघुकथा के लिए परीक्षा की घड़ी का समय रहा है। यह लघुकथा की सही भाषा से पाठकों को दूर ले जाने की मासूम साजिश थी। दरअसल हो यह रहा था कि विसंगत परिवेश तथा समसामयिक स्थितियों को चित्रित करने के लिए जिस भाषा को इस्तेमाल किया जा रहा था, वह सतही होने की वजह से फूहड़ हास्य बनकर रह गयी थी। वस्तुतः लघुकथा जिन प्रसंगों से जुड़कर, जिस भाषा से लैस होकर आना चाहती थी, वह चमत्कार या मनोरंजन से हटकर मस्तिष्क के तन्तुओं को झंकृत कर चेतना को जागृत करना चाहती थी।...

लघुकथा की सही भाषा से जो रचनाकार जुड़े रहे, उनमें मधुदीप एक प्रमुख नाम है। मधुदीप ने कृतियों के अनुरूप भाषा को बुना। चूँकि लघुकथा का सम्बन्ध सामाजिक सरोकार से जुड़ा रहा, इसलिए व्यक्ति की संवेदना को तीव्रता से व्यक्त करने के लिए सीधी, सरल तथा प्रभावी भाषा का प्रयोग किया।...

रचनात्मक स्तर पर लेखक इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकता कि लेखन महज सपाटबयानी नहीं प्रत्युत शब्दों की कला है। लघुकथा का लेखक छोटे कथ्य तथा फलक पर भी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से इस तरह से करता है कि पाठक चमत्कृत भले ही नहीं हो, किन्तु भाषा की कलात्मकता से प्रभावित जरूर होता है। मधुदीप की अनेक लघुकथाओं में कलात्मकता का यह प्रवाह, कथ्य के विस्तार के साथ सहज रूप में मिलता है।...

मधुदीप की लघुकथाओं में आंचलिक शब्दों, लोकोक्तियों, मुहावरों का प्रयोग भी मिलता है। उन्होंने पात्रों तथा कथ्य की स्वाभाविकता के लिए उस भाषा से भी परहेज नहीं किया, जिसका प्रयोग हिन्दुस्तान का आम, अर्द्ध–शिक्षित या शिक्षित व्यक्ति करता है। भाषा की इस सुघड़ता का प्रयोग नहीं होने के कारण, लघुकथा की रचना से कई तथाकथित लेखक नहीं जुड़ पाए, जबकि मधुदीप जैसे लेखकों ने लघुकथा के क्रमिक विकास में भाषा के गुणात्मक स्तर को बनाए रखने की मिसाल कायम की।...

ऐसी लघुकथाएँ अधिक प्रभावक हो सकी हैं, जिनमें लेखन के कौशल का प्रयोग जीवन के मर्म को उद्घाटित करने, चेतना–बोध का एहसास कराने या चिंतन के आयाम को उजागर करने में हुआ है। मधुदीप की लघुकथाओं में इन तमाम बिंदुओं की मौजूदगी उनकी सृजनात्मक क्षमता तथा एक विकसित विधा के चेतनात्मक धरातल के संदर्भ में योगदान को रेखांकित करती है।

मधुदीप के पात्र जीवन की सच्चाईयों, यथास्थिति के विरुद्ध–संघर्ष चेतना तथा शोषण या विसंगत व्यवस्था के प्रति एलान–ए–बगावत से साक्षात्कार कराते हैं। बदलते मूल्यों के संदर्भ में पारिवारिक जीवन में आ रहे बदलाव की विभिन्न स्थितियों को चित्रित करते हुए मानवीय सम्बन्धों के कोमल पक्षों को उद्घाटित करना इन लघुकथाओं का उद्देश्य है। लघु कैनवास पर भाषा की कसावट ने कथ्य की संप्रेषणीयता को प्रभावी ही नहीं बनाया है बल्कि लघुकथा के रचना–विधान के आयाम भी कायम किए हैं। दफ्तर, बाजार, परिवार, स्कूल आदि के अनेक प्रसंग इन लघुकथाओं के विषय हैं, जो व्यक्ति की विवशता और उसकी स्थिति से परिचित कराते हैं। जीवन–दृष्टि के निकट होने के कारण मधुदीप की लघुकथाएँ पाठकीय रुचि का परिष्कार तथा साहित्य के उद्देश्य का निर्वाह करती हैं।...

■ परिवार संपर्क : श्रीमती मीना दुबे, 766, सुदामा नगर, इन्दौर–452009, म.प्र.

सूर्यकांत नागर

समकालीन यथार्थ के सजग रचनाकार मधुदीप

मधुदीप जितने बड़े लघुकथाकार हैं, उससे बड़े विधा के उन्नायक हैं। विधा के संवर्धन के लिए जुटे हैं, पूरे तन–मन–धन से, समर्पित भाव से। एक जुनून की भाँति। यह लघुकथा लिखने से अधिक महत्वपूर्ण काम है। जब तक विधा के स्वरूप और उसकी सीमा एवं शक्ति को ठीक से आत्मसात नहीं किया जाएगा, सार्थक लघुकथाओं का सृजन संभव नहीं है।... कई बार एक अच्छी कथा को सही आकार लेने में वर्षों लग

जाते हैं। प्रभावी लघुकथा के लिए गहन चिंतन और धैर्य की आवश्यकता होती है। धैर्य रचनात्मकता की राह की बड़ी पूँजी है।... लेखक उतना आजाद नहीं है जितना प्रायः समझा जाता है। उस पर अनेक दबाव हैं। इन दबावों से उबरकर ही कालजयी रचना का सृजन होता है। मधुदीप ने लघुकथा के आकार–प्रकार के अतिरिक्त उसके सिद्धान्त और विचार पक्ष पर गहराई से विचार किया है और विविध मंचों पर उनको प्रकट भी किया है। निजी लघुकथा–संग्रहों के अतिरिक्त अनेक लघुकथा संकलनों का सम्पादन–प्रकाशन भी किया है। उनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम है पड़ाव और पड़ताल के तीस से अधिक खंडों का सम्पादन–संयोजन–प्रकाशन। निश्चित ही यह अत्यंत श्रमसाध्य और व्ययसाध्य काम था। स्मरणीय है कि सृजनात्मकता केवल श्रम आधारित नहीं होती। श्रम के साथ दृष्टि, प्रतिभा, अनुभव और अभिव्यक्ति–कौशल का होना जरूरी है। दोनों की जुगलबंदी मधुदीप की रचनात्मकता में दिखाई देती है।... मधुदीप की रचनात्मकता के मूल में लोकमंगल का भाव है, जो हर विवेकशील रचनाकार में होता है। समाज में व्याप्त बुराइयों को उजागर कर बेहतर मनुष्य और प्रकारान्तर एक बेहतर समाज की रचना में योगदान करना। सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विसंगतियों–विषमताओं और विद्रूपताओं को देख मधुदीप के अंदर जो वाजिब गुस्सा उपजता है, उसे व्यक्त करने, उसे दूसरों के साथ बाँटने की छटपटाहट उनकी रचनाओं में देखी जा सकती है। उनके कृतित्व में समय की आहटों का प्रवेश है। समय सत्य से साक्षात्कार का जज्बा। मधुदीप की लघुकथाओं में समकालीन साहित्य की मुख्यधारा के लगभग सभी कथ्य मौजूद हैं। वे तीक्ष्ण संवेदनात्मक अनुभव की उपज हैं। एक तरफ विघटित होते जीवन–मूल्यों की चर्चा है तो दूसरी तरफ सामाजिक परिवर्तन में उनकी हिस्सेदारी। उनकी चिंता मानवता को बचाने की है। अविश्वास की चौड़ी होती खाई को पाटने की और मरती संवेदनाओं को बचाने की। जब बात समकालीन यथार्थ की हो रही हो तो यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि समकालीनता का अर्थ मात्र आज का वर्तमान नहीं है। उसका फलक विस्तृत है। जब मधुदीप समकालीन स्थितियों की चर्चा करते हैं तो उसमें एक बड़ा कालखंड समाया होता है। उसमें उस कालखंड की सामाजिक राजनीतिक आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियों का प्रतिबिंब होता है। उसमें निकट भूत और निकट भविष्य समाहित हैं। मधुदीप अपने अंदर एक विशाल दुनिया समेटे हैं। उनका अनुभव संसार व्यापक और जीवन दृष्टि सूक्ष्म है। वे इस तथ्य से अवगत हैं कि निजी का तब तक कोई महत्व नहीं है जब तक वह समष्टिगत न हो। अतः कला, कल्पना, संवेदना और अभिव्यक्ति–कौशल के द्वारा वे व्यक्तिगत अनुभव को सार्वजनिक और सार्वभौमिक बनाते हैं ताकि वह बहुसंख्य की संवेदना से जुड़ सके। यदि एक का भोगा यथार्थ अधिकांश के यथार्थ से भिन्न या विरोधी है तो ऐसे यथार्थ का क्या मतलब? मधुदीप जानते हैं कि लघुकथा केवल घटना में निहित नहीं होती; उसमें जो अंतर्विरोध होता है उसमें होती है।... मधुदीप की लघुकथाएँ घटना या अनुभव का विवरण मात्र नहीं होतीं; वे पाठक के साथ संवाद करती हैं। वे अंदरूनी पड़ताल करती व्यापक सरोकारों की रचनाएँ हैं। मधुदीप कहानी की शर्तों पर जीवन नहीं रचते, जीवन की शर्तों पर कहानी रचते हैं। यदि कथा जीवन से कटेगी तो पाठकों से भी कटेगी। वस्तुतः

समय का दबाव उसकी जरूरतें और लेखक की प्रतिभा और प्रयास ही विधा की दिशा तय करते हैं।

यह उल्लेख असंगत न होगा कि अनुभव जनित रचना अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय होती है। केवल जानकारी और कल्पना आधारित रचना में वह गहराई नहीं होती जो भोगे यथार्थ या अनुभव आधारित में होती है।... गर्म वस्त्र पहने व्यक्ति ठंड में ठिठुरते वस्त्र हीन व्यक्ति की फीलिंग को ठीक से महसूस नहीं कर सकता। मधुदीप की लघुकथाएँ गहरे अनुभव की रचनाएँ हैं।

समकालीन लघुकथा की विशेषताओं में एक है पक्षधरता। मधुदीप किसी राजनीतिक विचारधारा से बँधे लेखक नहीं हैं। तथापि उनकी पक्षधरता असंदिग्ध है। वह किसी विचारधारा विशेष की वैतरणी में बैठे रचनाकार नहीं हैं कि उसकी धारा में बह चलें। उन्हें पता है कि जीवन के संघर्ष में उन्हें किसके साथ खड़ा होना है। वर्तमान स्थितियों का विश्लेषण कर जब लेखक आम आदमी की चिंता से रचना को जोड़ता है तो वह उसकी पक्षधरता ही है। तटस्थता कायरता और अनैतिकता ही नहीं, छद्म पक्षधरता है। यदि लेखन सच्चा और खरा है तो वह प्रतिबद्ध है। देखना यह चाहिए कि विचारधारा लेखन की प्रामाणिकता को विछिन्न न करे।

मधुदीप को मनुष्य स्वभाव की अच्छी पहचान है। वे चेहरे के शिलालेख पढ़ने में दक्ष हैं। इसलिए चरित्र की भीतरी परत को तलाशकर उसे कथा में उतारते हैं। मधुदीप उन लघुकथाकारों में हैं जो आधुनिक जटिलता और उसकी सहज अभिव्यक्ति के बीच सार्थक पुल बनाते हैं। उनकी चिंताओं के केंद्र में जीवन–मूल्य और अन्य समसामयिक परिस्थितियाँ हैं।

रचना लेखक के व्यक्तित्व का दर्पण है। उससे लेखक के व्यक्तित्व का बोध होता है। लेखक के दृष्टिकोण की झलक आप उसकी रचना में पा सकते हैं। जैसी सादगी मधुदीप में है, वैसी ही उनकी रचनात्मकता में है। उस सादगी में संवेदनात्मक गहराई है। विराट जीवन की सूक्ष्म अनुभूति।

मधुदीप की कई लघुकथाएँ लोकतंत्र के प्रति आस्था और विघटित होते नैतिक और मानवीय मूल्यों पर केंद्रित हैं।...मधुदीप की कई लघुकथाएँ सांकेतिक और प्रतीकात्मक हैं।...

मधुदीप की रचनात्मकता की मुख्य चिंता घटती मानवीयता और हाशिए पर खड़े आदमी के दुःख–दर्द से साक्षात्कार कराने की है। पूँजीवादी व्यवस्था के चलते आम आदमी के शोषण और संघर्ष के खिलाफ आवाज उठाना वे अपना नैतिक दायित्व मानते हैं। वस्तुतः मधुदीप का लेखन प्रतिरोध का लेखन है। इसलिए वे अन्याय का विरोध करने का कोई अवसर नहीं छोड़ते। आसपास के परिवेश को खुली आँखों से देखते हैं और उसे शिद्दत से व्यक्त करते हैं। मनुष्य जीवन की जटिल समस्याओं की पड़ताल कर सामाजिक जागरूकता पैदा करना उनका अभिप्रेत है। उनकी रचनाओं में शहरी मानस का समाजशास्त्रीय अध्ययन है। उन्होंने खौलते (उबलते) हुए अनुभवों को परिपक्व किया है। बाजारवाद, नारी विमर्श, सांप्रदायिकता, सोशल मीडिया, भ्रष्टाचार, जातीयता जैसे ज्वलंत मुद्दे उनकी सृजनात्मकता की जद में हैं। मधुदीप किसी विचारधारा की बेड़ियो में बँधे लेखक नहीं हैं। उनके कृतित्व में लोक कल्याण का भाव निहित है। लोक–मंगल का भाव

रचना के मूल्यांकन का सही प्रतिमान है। दरअसल वे एक प्रयोगधर्मी रचनाकार हैं। व्यंजना–लक्षणा उनके सृजन का प्रबल पक्ष हैं। उनके अनुसार लघुकथा लिखना विस्तृत से अणु की ओर यात्रा है। इसीलिए वे शब्द–स्फीति से बचते हैं। पाठक को कम समय में अधिकाधिक देना चाहते हैं। उनके पास सतत प्रवाही, रवानगी वाली अर्थगर्भी भाषा है। उनकी शैली सजीव और शिल्प उन्नत है। उनकी रचनात्मकता में एक खास किस्म की खलिश नजर आती है।...

■ 81, बैराठी कॉलोनी नंबर 02, इंदौर–452014, म.प्र./मो. 09893810050

डॉ. अनीता राकेश

मधुदीप की लघुकथाओं में सूत्रधार की भूमिका

काल की यवनिका में सम्भावनाओं की अहर्निश हलचल परिवर्तनकारी परिणामों का आगाज होती है। ऐसी हलचल उसे उत्पन्न परिवर्तन क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं एवं कसौटियों की राह से परीक्षित होते हैं। साहित्य में अपनी सशक्त पैठ के कारण धूम मचाती लघुकथा–विधा के द्वार पर भी एक नूतन किन्तु मध्यम आवाज मुखरित होने को व्यग्र दिखती है– वह है परंपरागत नाट्य विधा में प्रयुक्त होते सूत्रधार की आवाज। सम्भवतः वह भी अपनी भूमिका में अन्य अग्रसर सोपानों पर अग्रसर हो प्रयोगों की विस्तृति की अपेक्षा करता है।

लघुकथा के प्रबल पोषक एवं सशक्त प्रहरी मधुदीप की लघुकथाओं के सन्दर्भ में सूत्रधार की भूमिका की तलाश एक नूतन प्रयास होगा।...

प्रसिद्ध रंगकर्मी हृषिकेष सुलभ ने ई–पत्रिका गर्भनाल के अक्टूबर–नवम्बर' 20 अंक में अपने एक आलेख में सूत्रधारों की बदलती एवं विविधरूपी भूमिका का उल्लेख किया है।... वे कहते हैं– ''संस्कृत रंगमंच के सूत्रधार सूचक और प्रस्तावक थे पर लोक रंगमंच ने सूत्रधार को वाचक भी बनाया। सूत्रधार यहाँ व्याख्याता और टिप्पणीकार भी बना। इतना ही नहीं, रूढ़िगत भूमिका से बाहर उसके जिस स्वरूप को उनके द्वारा इंगित किया जाता है वह अन्य कथात्मक विधाओं में उसके महत्व का द्वार प्रशस्त करता है.... नाट्य प्रस्तुति के गंभीर मार्मिक क्षणों को वह विश्लेषित करता तथा अपनी टिप्पणियों से सहजता के साथ विश्लेषण को सम्प्रेषित करता है।''... थोड़ा लीक से हटते हुए अथवा कहा जाए तो कालक्रम को भंग करते हुए यदि संस्कृत आचार्य एवं नाटककार भास की सुने तो वे भी सूत्रधार को प्रस्तावना, प्रस्तुति एवं समापन तीनों का नियामक मानते हैं। और, यह तभी संभव है जब वह नाटक के विभिन्न तत्वों का ज्ञाता हो। भरतमुनि ने भी सूत्रधार को गीत, संगीत बाद्य तथा पाठ्य में निष्णात माना है। वह प्रस्तुत किए जाने वाले नाटकों की कथावस्तु, नायक–नायिका एवं रसादि को सूत्र रूप में प्रस्तुत करता है तो उसकी कुशलता एवं विद्वता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।...

उक्त संक्षिप्त चर्चा के आधार पर मधुदीप की लघुकथाओं पर एक दृष्टि अपेक्षित है। इनकी बहुचर्चित लघुकथा 'नमिता सिंह' का प्रथम अनुच्छेद अथवा प्रारम्भ कहें या

प्रवेश, रचनाकार की उद्घोषणा या सूचना से होता है। मुख्य पात्र नमिता सिंह के चरित्र को तीन घटनाओं के संकेत द्वारा जिज्ञासापूर्ण बनाया जाता है। एक सूत्रधार की भाँति ही कथानक की प्रस्तावना प्रस्तुत की जाती है। सम्पूर्ण लघुकथा की अंतिम टिप्पणी भी रचनाकार की ही है– ''अब आप चाहें तो नमिता सिंह पर यह जुमला बेशक उछाल सकते हैं।'' रचनाकार की उपस्थिति निश्चित ही सूत्रधार शैली–सी है।

'समय का पहिया घूम रहा है' में लघुकथा के मुख्य पात्र नीलाम्बर दत्त की अन्तिम रंगमंचीय प्रस्तुति का संकेत तथा सभी चार दृश्यों में रोशनी के जलने–बुझने, पर्दे के उठने–गिरने की योजना द्वारा काल के विशाल फलक के योगक–तत्व के रूप में निर्देशक के रूप में रचनाकार उपस्थित है। कटु परिस्थितियों के शोक को अंतिम टिप्पणी द्वारा धारदार बनाया गया है– ''रोशनी में नहाया हाल स्तब्ध है। दर्शक ताली बजाना भूल गए हैं।'' नाटक में अन्त में छाये सन्नाटे एवं किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति को लघुकथा में सूत्रधार ही व्यक्त कर सकता है। इसी प्रकार 'लौटा हुआ अतीत' में रचनाकार ने ''बीस साल पहले की बात है....'' कहकर कथानक को वर्तमान की ओर धकेला है। वर्तमान और अतीत के योजक तत्व के रूप में रचनाकार की यह मध्यस्थता आवश्यक है। 'वानप्रस्थ' लघुकथा में भी कथानक और घटनाओं का संकेत एक सम्पूर्ण अनुच्छेद द्वारा दिया गया है। यद्यपि जब सूत्रधार की भूमिका की चर्चा होती है तो लघुकथा की लघु काया की दृष्टि से तनिक विस्तृत अवश्य है। किन्तु, उसके बिना लघुकथा अपना प्रभाव का स्वरूप ग्रहण नहीं कर पाती। ''अब मूल कथा शुरू होती है।....'' यह कहने के पूर्व एक भूमिका प्रस्तावना के तौर पर है। 'जागृति' लघुकथा में ''भारत के एक दूर देहात की लघुकथा'' वाक्य द्वारा एक सूत्रात्मक संकेत भी है और कथानक का प्रारंभ भी। 'अजन्मा लोकतंत्र' में भी लोकतंत्र की भ्रष्ट व्यवस्था को संकेत करने हेतु जिस युग में रचनाकार पहुँचना चाहता है उसकी पृष्ठभूमि को सूत्रधार शैली द्वारा ही प्रस्तुति मिलती है। वह पाठकों का कथानक के काल एवं उसकी परिस्थिति से परिचय कराता है– ''यह उस समय की कथा है....'' यह निश्चित रूप से सूत्रधार का वाचक रूप है। 'निदान' लघुकथा में रचनाकार कथा प्रवाह को विस्तार देता है– ''तो भाइयो, किस्सा अब आगे बढ़ता है।'' कथानक में प्रस्तुत दुविधा एवं द्वन्द्व का पूर्ण परिचय प्रस्तुत करने के उपरांत निर्णय का दायित्व पाठकों पर छोड़ा जाता है। मधुदीप ने रचनाकार के रूप में परिचय, प्रारम्भ एवं विश्लेषण का कार्य कर अपनी लघुकथाओं में नाटकीय संरचना को यत्र–तत्र अंगीकृत किया है। यथा– 'मेरा बयान' में पात्र का स्वगत लघुकथा के प्राण रूप में प्रस्तुत है। यह स्वगत मंच पर घूमते कथानक की भूमिका है, उसके विषय की पृष्ठभूमि है। तर्क–वितर्क युक्त यह प्रारम्भ नाटक की स्वगत शैली है– जहाँ मंच पर घूमते, परिचय कराते, पाठकों से रू–ब–रू होते सूत्रधार की याद दिलाती है। स्वगत के पश्चात चन्द संवाद एवं उसके उपरान्त अंतिम वाक्य सूत्रधार की भूमिका का ही संकेतक है। 'आलू के दाम' में भी ''बात उस समय की है....'' कथन द्वारा कथानक के काल एवं परिस्थिति से अवगत कराया गया है। अमेरिका में अपना परचम लहराकर आये प्रधानमंत्री की इस उपलब्धि की प्रतिक्रिया प्राप्त करने वाला पत्रकार है। विभिन्न वर्गों से प्राप्त प्रतिक्रियाओं पर आम आदमी की सहज प्रतिक्रिया भारी

है– ''आज ही आलू के दाम पाँच रुपये किलो बढ़ गये हैं। यहाँ लघुकथाकार एक सूत्रधार की भाँति उपस्थित है, जिसने यह व्यंग्यात्मक निर्ष्कष दिया कि प्रधानमंत्री के क्रियाकलाप छोटे हैं और उपलब्धियाँ आम आदमी के आलू के दाम से हल्की हैं।

राजनीति हो या समाज– सभी के क्रोड़ से निःसृत लघुकथाओं के कथानक में मधुदीप ने अपने प्रयोगों को सदैव क्रियमाण रखा है। सूत्रधार जिस प्रकार अभिनय के सूत्र का प्रारंभ कर देता है वैसे ही कथानक में परिलक्षित होते हैं। यथा– 'राजनीति' लघुकथा दृष्टव्य है– ''किसी भी फ्रेम पर क्यों न क्लिक किया जाय, चेहरा वही खुलेगा जो चौधरी प्रेम सिंह चाहें।'' अब चौधरी प्रेम सिंह क्या चाहते हैं तथा किस रूप में उनकी प्रस्तुति है, यह जिज्ञासा का विषय बन जाता है तथा इसी जिज्ञासा की राह पर लघुकथा आगे बढ़ती है। 'तनी हुई मुट्ठियाँ', 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त!', 'अस्तित्वहीन नहीं' जैसी लघुकथाएँ नकारात्मकता में सकारात्मकता का संदर्भ देती हैं। प्रथम में भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ते तीन पात्रों का परिचय एवं कथानक का संकेत मिलता है तो दूसरी में भी शीर्षक ही उसका संकेतक है। तीसरी कड़ाके की ठंड का जिक्र कर किसी ऊष्ण घटना का संकेत देने लगती है। तीनों का अन्त भरतवाक्य के समान सकारात्मक माना जा सकता है। एक में संघर्षशील धीमी पड़ती मुट्ठी को थामा जाता है तो दूसरी में ठंडी होती कॉफी में उबाल है, तीसरी में निकृष्ट समझे जाने वाले रिक्शेवाले की स्वाभिमान से फूली छाती– सभी में रचनाकार की सूत्रधार की भूमिका है जो दर्शकों की भावना के अनुरूप काम करती है। नाटकों का निर्देशन एवं संयोजन करती है। बुजुर्गों की सूनी पड़ी जिंदगी को प्रकाश एवं प्रशंसा से भरने वाली लघुकथा 'सन्नाटों का प्रकाशपर्व' में रचनाकार मानो 'रनिंग कमेंट्री' द्वारा वस्तुस्थिति से परिचय कराता हुआ कथानक को विस्तार देता है। 'मजहब' में भी मजहबी दीवार को ध्वस्त करने का कार्य सूचनात्मक टिप्पणियों के माध्यम से किया गया है। चंद पंक्तियों में प्रस्तुत लघुकथा 'ऐसे' भी सकारात्मकता का संदेश देती है। प्रारम्भ की पंक्तियाँ या कहा जाय तो आधी लघुकथा रचनाकार द्वारा संवादों के पूर्व प्रस्तुत प्रस्तावना ही है। पात्र एवं परिस्थिति का परिचय देने के उपरान्त अन्त भरतवाक्य–सा सार्थक एवं सकारात्मक– ''दोनों मजबूती से एक–दूसरे का हाथ थामें एक ओर बढ़े जा रहे थे।'' आत्महत्या की भावना का तिरोहन एवं मंगलभाव का आर्विभाव प्रदर्शित कर रचनाकार ने सूत्रधार की सम्पूर्ण जिम्मेदारियों का निर्वाह किया है।

सूत्रधार की भूमिका की दृष्टि से मधुदीप की लघुकथाओं के अंतर्गत 'विकल्प', 'सन्यास', 'समय बहुत बेरहम होता है', 'धर्म', 'पागल', 'एक तंत्र', 'ऑल आउट', 'किस्सा इतना ही है', 'अपनी–अपनी मौत' एवं 'दौड़' लघुकथाएँ महत्वपूर्ण हैं। 'विकल्प' में कथाकार पूर्णतः सूत्रधार की भूमिका में है। वह घटनाक्रम को स्पष्ट करने के उद्देश्य से बीच–बीच में पाठकों को संबोधित भी करता है। एक समस्यात्मक कथानक के प्रवाह को कतिपय निर्देशों निराकरणों की सम्भावनाओं के साथ गत्यात्मक बनाया गया है। अन्ततः पाठकों पर समाधान का दायित्व डालकर सूत्रधार की भाँति रचनाकार प्रस्थान कर जाता है। 'सन्यास' लघुकथा में समाप्ति के पश्चात अंतिम वाक्य ही निर्णयात्मक एवं निष्कर्षात्मक है। यही कथानक में व्यंग्यार्थ का समावेश भी करता है। ''अब बड़ी–बड़ी गाड़ियों वाला स्वामी जी का लाव–लश्कर वापस हरिद्वार की ओर लौट रहा था।'' –यह अंतिम वाक्य

रहस्योद्घाटन करता है, सम्पूर्ण लघुकथा के मर्म एवं भाव का उद्घाटन करता है। निश्चित ही कथानक से भिन्न वाक्य की प्रस्तुति कोई पात्र नहीं वरन् स्वयं रचनाकार करता है। कथानक को दिशा प्रदान करने एवं लक्ष्य तक पहुँचाने का कार्य सूत्रधार का होता है, जिसे मधुदीप ने सफलतापूर्वक सम्पन्न किया है। इसी प्रकार 'समय बहुत बेरहम होता है' में काल के प्रवाह को विपरीत दिशा में मोड़ने हेतु रचनाकार ने सूत्रधार शैली का प्रयोग किया है। अपनी अमर रचना 'उसने कहा था' में गुलेरी जी ने स्वप्न के माध्यम से पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग दो भिन्न कालों के अंतराल को जोड़ने के निमित्त किया उसी प्रकार मधुदीप ने सूत्रधार शैली द्वारा दीर्घ कालांतर को सरल एवं प्रवाहमय बनाया है। यहाँ भी रचनाकार सूत्रवाक्य द्वारा कथानक का संकेत तो करता ही है, उसकी उलझनों को विश्लेषित भी करता है, उन पर टिप्पणी भी करता है। उसके समस्त क्रियाकलापों में पाठकों को संबोधित भी किया गया है। उसी संबोधन के क्रम में वह निर्णय का दायित्व पाठकों पर छोड़ देता है। अत्यन्त प्रतीकात्मक लघुकथा 'धर्म' के मर्म एवं लक्ष्यार्थ को विश्लेषित करने हेतु सूत्रधार शैली यहाँ अपरिहार्य प्रतीत होती है। ''पाठको! मेरे विचार से यह लघुकथा यहीं पर समाप्त हो जानी चाहिए थी मगर त्रासदी मनुष्य का पीछा कहाँ छोड़ती है! यह लघुकथा मेरा हाथ पकड़कर मुझे आगे की राह पर ले गयी।'' यहाँ भी लोगों को आगे बढ़ाने एवं दोनों को जोड़ने का कार्य सूत्रधार की भाँति ही किया गया है। रचनाकार की यह घोषणा सूत्रधार के दायित्व का ही परिचायक है। पुनः, 'पागल' में भी सायरन बजाती एंबुलेंस का राज अन्तिम दो पंक्तियों में खुलता है। यदि रचनाकार ने उक्त पंक्तियों द्वारा घोषणा नहीं की होती, सूत्रधार शैली का प्रयोग नहीं किया होता तो सम्पूर्ण लघुकथा बेमानी एवं रहस्यमय बनकर ही रह जाती। 'एकतंत्र' में भी प्रतीकात्मकता अपना सार्थक प्रभाव छोड़ती है। इसके अधिकांश हिस्से में रचनाकार द्वारा प्रस्तुत वर्णनात्मक मंच पर घूमते, सम्बोधित करते एक सूत्रधार का चित्र सहजता से उभार देती है। 'ऑल आउट' निश्चित ही इस शैली की महत्वपूर्ण एवं सशक्त रचना है। लघुकथा के आकार–प्रकार के अनुरूप पात्र एवं परिस्थिति का परिचय तो दिया ही जाता है साथ ही भारत–इंग्लैंड के टी–20 क्रिकेट मैच के रोमांचक दौर में संवादों के साथ क्रिकेट की भाषा में ही सूत्रधार ने भी टिप्पणियों से कथानक को प्रवाहपूर्ण प्रभावोत्पादकता प्रदान की है। यहाँ एक नरेटर के रूप में रचनाकार ने सूत्रधार की भूमिका का ही निर्वहन किया है। 'किस्सा इतना ही है' का रचनाकार मंच पर आविर्भूत सूत्रधार की भाँति कथा का प्रारम्भ करता है। मथित मन की व्यथा पाठकों तक पहुँचाना आवश्यक हो गया है। नाटक एवं दर्शक के बीच के योजक तत्व की भाँति रचनाकार लघुकथा को पाठकों से जोड़ता है। उसके वाक्य द्रष्टव्य हैं– ''किस्सा कोताह यूँ देखें तो कतई नया नहीं है। मगर इसने मेरे मन को मथ दिया तो मैंने भी इसे पाठकों तक पहुँचाना जरूरी समझा''; ''पाठको, मैंने मदद के लिए इधर–उधर देखा, मगर व्यर्थ''; ''अब मैं अगर वह सब वर्णन करूँगा कि हस्पताल में कैसे क्या हुआ....। वैसे भी मेरे पाठक परिस्थितियों से अच्छी तरह परिचित हैं....।'' ''तो पाठको, यह किस्सा यूँ समाप्त होता है।....घर पर पत्नी और बच्चे मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'' यह सूत्रधार का प्रस्थान है जो पाठकों को अन्ततः प्रश्नों के बीच छोड़ जाता

है। 'अपनी–अपनी मौत' में लाल चौक पर पड़ी लाश से प्रारंभ होती लघुकथा वातावरण की मार्मिकता बयां करती है। व्यक्ति से लाश में तब्दील होने में लगते वक्त की सूचना दी जाती है– ''समय बीत रहा है''। लघुकथा में प्रवाह तो आता है किन्तु लाश की सद्गति होती नहीं देख रचनाकार की टिप्पणी– ''मुर्दा चीख रहा है'' –वैचारिक विडम्बना की तस्वीर खींचती है। निश्चित ही मुर्दा चीख नहीं सकता लेकिन मुर्दे की व्यथा को रचनाकार ने एक टिप्पणीकार बनकर व्यक्त किया है। कथाकार मधुदीप की रचना 'दौड़' प्रत्यक्षतः द्विपक्षीय वार्ता को प्रस्तुत करती है। दो व्यक्तियों के संवाद के साथ सृजित इस लघुकथा का अंतिम वाक्य भटका–सा देता है– ''मैं सिर उठाकर देखता हूँ, मगर सामने की कुर्सी पर तो कोई भी मौजूद नहीं है।'' दबे हुए स्प्रिंग की भाँति लघुकथा अनायास ही प्रारम्भ पर पहुँच जाती है और प्रश्न उठता है, वह दूसरा पक्ष या व्यक्ति कौन है? निश्चित ही वह रचनाकार ही है जो सूत्रधार शैली में उसके वक्तव्यों को जबान देता हुआ शीर्षक की सार्थकता तक पहुँचाता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि संस्कृत के नाटकों के अनिवार्य अंग सूत्रधार की भूमिका योगक तत्व, प्रस्तावक, विश्लेषक, टिप्पणीकार, परिचयकर्ता, सूत्रात्मक परिचय, प्रारम्भिक अभिनय आदि के रूप में है। यहाँ निःसंदेह सूत्रधार एक कुशल कलाकार, शास्त्रों का ज्ञाता, भाषाविद्, संगीतज्ञ आदि बहुत कुछ है। लघुकथाकार भी निश्चित रूप से लघुकथा की बारीकियों को समझता है। प्रतीकात्मकता का प्रयोग, द्विअर्थी प्रस्तुति, व्यंग्यात्मक के तीखे एवं अद्भुत प्रयोगों में वे निष्णात होंगे तो सम्भावनाएँ एवं प्रयोगों के द्वार प्रशस्त होंगे। जिस प्रकार एक सूत्रधार संपूर्ण नाटकों के निर्माण–निर्देशन आदि हेतु विविध शैलियों, उपकरणों एवं प्रयोगों का ज्ञाता होता है तथा सफल रंगमंचीय प्रस्तुति का आयोजन करता है; ठीक उसी प्रकार लघुकथाकार मधुदीप ने अपनी बहुक्षेत्रीय मेधा एवं कुशलता से रचना को आकार दिया है, पात्रों के संवाद एवं चरित्र सृजित किये हैं। नाटकेतर किसी भी कथात्मक विधा की अपेक्षा सूत्रधार की भूमिका के अध्ययन, विश्लेषण एवं संभावना लघुकथा में अधिक परिलक्षित होती है। किन्तु, यह भी उतना ही सत्य है कि यहाँ सूत्रधार नहीं सूत्रधार शैली की तलाश अधिक तर्कसंगत प्रतीत होती है। निश्चित ही ह्रषिकेश सुलभ जैसे रंगकर्मियों ने सूत्रधार की भूमिका में प्रयोगों की सम्भावनाओं से इनकार नहीं किया है। बहरहाल रचनाकार अपनी रचनाओं का सूत्रधार स्वयं है। हाँ प्रयोगों एवं सम्भावनाओं के द्वार सदैव खुले हैं। मधुदीप की लघुकथाओं में सूत्रधार की भूमिका की तलाश उन अपेक्षाओं का मार्ग प्रशस्त करे, ऐसी मंगल कामना एवं अपेक्षा है।

■ द्वारा श्री नरेश, आंगन अपार्टमेंट के सामने, कांग्रेस मैदान के पास, कदमकुँआ, पटना–800001, बिहार / मो. 09835093696

डॉ. शोभा जैन

मधुदीप की लघुकथाओं के पात्रों में द्वन्द्व और अंतर्द्वन्द्व

...अपने रचनात्मक अवदान के साथ–साथ बृहद् सम्पादन से लघुकथा को न सिर्फ समृद्ध करने वाले बल्कि इस विधा में

रचे–बसे इसे जीने वाले मधुदीप जी लघुकथा के इस स्वर्णिम युग की ऐसी अभिनव कड़ी हैं, जिन्होंने विस्मृत होते जीवन के शाश्वत मूल्यों को अपनी लघुकथाओं में व्यक्त किया है। उनकी लघुकथाएँ अर्थ उपार्जन का कौशल बढ़ाने वाले आदमी को अपनी आत्मा की आवाज सुनने पर विवश करती दिखाई देती हैं। लेकिन इस गुजरने में पात्र को जिस द्वन्द्व से गुजरना होता है वही जिजीविषा बनता है, जीवन को नया आयाम देता है।

...लघुकथा एकांतिक कथ्य की रचना है। इसमें पात्रों की अनावश्यक भीड़ जुटाने की जरूरत नहीं होती। द्वन्द्व तो एक के भीतर होकर भी पूरी कथा को आकार देने की क्षमता रखता है। कथाकार की संवेदनाओं के वाहक बने पात्र संख्या बल में भले ही नगण्य होते हैं पर अपने संघर्ष में, समझौतों में, विडंबनाओं में भीतर से जन्मे प्रतिरोध में पाठक को इतना समेट देते हैं कि उससे बाहर आने के बाद भी पाठक जूझता है। ये अलग बात है वैसी लघुकथाएँ, वैसे पाठक दोनों ही कम नसीब होते हैं। बेरोजगारी, गरीबी, भ्रष्टाचार, दोहरा चरित्र धारण किये बौखलाई राजनीति– ये सभी ऐसे विषय हैं जो जीवन का अभिन्न अंग हैं। इनसे जन्मी विषम परिस्थितियों, प्रतिशोधों को पात्रों में देखा जा सकता है, महसूस किया जा सकता है। बावजूद इनके बुनियादी संघर्षों की छाप पाठकों तक छोड़ पाने की कला, कथाकार का मूलभूत गुण कम ही देखने को मिलता है। ज्यादातर लघुकथाएँ घर–गृहस्थी, चौका–बर्तन तक सीमित रह जाती हैं। एक व्यापक सोच, विराट दृष्टि का नितांत अभाव है। जबकि एक कौंध हम सबके भीतर है, जो हमसे होकर गुजरती है, जिसका दायरा बहुत व्यापक है, एक बड़े बदलाव की जननी भी। आलोचक मानते हैं, कौंध रचनात्मकता का प्रस्थान बिन्दु है, वह उद्वेलित करती है, आंदोलित करती है। विध्वंस भी, पुनर्सृजन भी। इसलिए लघुकथा, कहानी या उपन्यास के पात्रों में द्वन्द्व का होना अपरिहार्य है। मधुदीप जी की लघुकथाएँ ऐसी ही कौंध से गुजरती हैं; जिसका दायरा व्यापक है, वैश्विक है। सामाजिक है। उतना ही अपने समय से सचेत भी।...

इनकी लघुकथाएँ उक्त तथ्यों का प्रतिनिधित्व करते हुए जीवन से जुड़ जाती हैं। जीवन से जुड़ी हैं, इसलिए द्वन्द्व और अन्तर्द्वन्द्व स्वतः इनमें विद्यमान हैं। हालांकि विधा कोई भी हो, कहानी हो या उपन्यास, नाटक हो या रंगमंच; वह जीवन की ही अभिव्यक्ति है। उसके पात्र किसी न किसी द्वन्द्व से, अन्तर्द्वन्द्व से गुजरते ही हैं।...

कहने की कला में निपुण संवेदना की धीमी आँच पर पकी मधुदीप जी की लघुकथाएँ अपने आत्मसंघर्ष में न सिर्फ प्रासंगिकता सिद्ध करती हैं बल्कि अपने समय के बड़े सवाल भी उठाती हैं। अपने छोटे आकार तथा तीव्र प्रभाव के कारण प्रत्येक संवाद एक स्थिति से गुजरता है जिसका क्रम आरंभ, विकास, चरमसीमा और अंत होता है। कथ्य इन सबसे होते हुए ही संघर्ष की स्थिति को पार करता है। विकास को प्राप्त कर कौतूहल को जगाता हुआ चरम–सीमा पर पहुँचता है। मधुदीप जी की लघुकथाओं में यथार्थ का मनोविज्ञान है। घटना–स्थान पर पात्र और उसका संघर्ष ही लघुकथा की मूल धुरी बन गये हैं, इसलिए संवाद भी सजीव ही लगते हैं। अपने वार्तालाप और क्रियाकलापों द्वारा अपने गुण–दोषों का संकेत देते चलते हैं जो उनकी मनःस्थिति भी दर्शाता है। यही वजह है कि पाठक उनकी कथा के परिसर में सहज ही प्रवेश कर पाता है।... इस विधा में

मधुदीप जी सामाजिक परिस्थितियों के साथ जीवन का संस्पर्श करते हैं। वे पात्रों के प्रति हमदर्दी के साथ खड़े हैं तो व्यवस्था की निर्ममता भी अभिव्यक्त करते हैं। उनकी लघुकथा के पात्र अपने संघर्ष में एक स्वतन्त्र छाप छोड़ते हैं।

पात्रों में संघर्ष के विविध आयाम मधुदीप जी की लघुकथाओं में देखे जा सकते हैं। लघुकथा के उत्कर्षकाल में उनकी रचनात्मक कृति की प्रासंगिकता को समझने के लिए हमें यह देखना होगा कि रचनाएँ अपने समय और समाज के साथ कैसा बर्ताव करती हैं। वस्तुतः लघुकथा का तो सम्पूर्ण मनोविज्ञान तीन बिंदुओं– यथार्थ, संवेदना और विडंबना या विसंगति पर टिका हुआ है। मधुदीप जी उससे बाहर कतई नहीं। विडंबना या विसंगति की तीव्रता ही इसे तीखा बनाती है जो उनकी लघुकथाओं में साफ तौर पर झलकती है। दरअसल उनकी लघुकथाओं के पात्र घर–परिवार के विषयों में ही उलझकर नहीं रहे, उन्होंने समय की नब्ज को पकड़ा है। उनकी लघुकथाओं में पात्रों का द्वन्द्व कई जगहों पर पारम्परिक संकीर्णता का पर्दाफाश करता दिखाई देता है तो कहीं–कहीं परम्पराओं का पुनर्जन्म भी।...

मधुदीप जी का लेखन सृजन के साथ आलोचना पक्ष का भी निर्वहन करता है। उनकी लघुकथाओं में पात्रों का जैसा भी और जहाँ भी घात–प्रतिघात उभरा उनमें आधुनिकताबोध भी है और इतिहासबोध भी। लघुकथा के शीर्षक द्वार से पाठक उनकी लघुकथा में प्रवेश करता है। भले ही उन्होंने एक लम्बे अंतराल के बाद इस विधा के लेखन में प्रवेश किया।...

आत्मकथात्मक शैली में स्मृतिजीवी, आत्मजीवी व्यक्ति के द्वन्द्व को कागज पर उतार देना सहज भी नहीं क्योंकि रचना की रोचकता के साथ उसकी जीवंतता भी चुनौती है जिसे मधुदीप जी ने बरकरार रखा।... वर्ष 2019 में 'मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ' शीर्षक से एक संग्रह आया, जिसमें कुल 66 लघुकथाएँ ऐसे विषयों पर हैं, जो आज के दौर में भी प्रासंगिक होते हुए समकालीन समय का संस्पर्श करती हैं। मसलन 'रात की परछाइयाँ', 'मुर्दाघर', 'हथियार', 'लौटा हुआ अतीत', 'सन्नाटों का प्रकाशपर्व', 'लौहद्वार', 'इज्जत का मोल', 'शोक उत्सव', 'राजनीति', 'मंदी', 'मेड इन चाइना', 'मेरा बयान', 'हालात काबू में हैं', 'अखबार में सुर्खी नहीं छपेगी' जैसी कई लघुकथाओं के पात्र हमारे अपने ही बीच में से जन्मे हैं; इसलिए ये समकाल की अभिव्यक्ति हैं।...

उनकी सभी शीर्षकों की लघुकथाओं को पढ़ते हुए पाठक पात्रों के संघर्ष में स्वयं को गुँथा हुआ महसूस कर पाता है। कथ्य के भीतर एक ऐसे ठहराव को महसूस कर सकता है, जिसके संवादों से गुजरकर उसे लगता है मानो द्वन्द्व उसके अपने ही भीतर चल रहा हो।... मधुदीप जी के पात्र एंगिल्स की पुस्तक 'लिटरेचर एंड आर्ट' के दो चरित्रों का सम्मिश्रण हैं– वास्तविक पात्र और यथार्थ। दोनों में अंतर है। कथाकार द्वारा प्रत्यारोपित किए जाने वाले उसके सत्य से विहीन चरित्र 'नेचुरलिस्ट' तो हो सकते हैं यथार्थ नहीं।

निश्चित ही लघुकथा के कथा–विन्यास में लेखक अपने ही मनोविज्ञान से चरित्रों में रंग भरता है, रंगों में द्वन्द्व भरता है तो अंतर्द्वन्द्व भी उभरता है। इन्हीं सबके बीच से विकारी या उदात्तरूप पात्रों का चरित्र–चित्रण करता है; फिर चाहे वह लघुकथा 'हिस्से का दूध' हो, जो मधुदीप जी की बेहद चर्चित लघुकथा है।... द्वंद और अंतर्द्वन्द्व दोनों ही अलग–अलग आशयों से उपजते हैं। प्रतिरोध या विरोध द्वंद्व है, जो परिस्थितियों से

उपजता है। लेकिन व्यक्ति इसमें तपता है। यह अपने सही स्वरूप को प्राप्त करने के लिए भी हो सकता है। एक–दूसरे के प्रति तटस्थता का भाव होने की स्थिति में जो संघर्ष होगा, वही द्वन्द्व है। अक्सर सीमित लक्ष्यों को अनेक व्यक्ति प्राप्त करना चाहते हैं तो संघर्ष स्वाभाविक ही है। लेकिन इसकी मूल जड़ में बाह्य और आंतरिक प्रतिक्रियाएँ हैं जैसा इस लघुकथा में दिखाई देता है।

हिन्दी की शायद ही ऐसी कोई विधा हो जिसमें पात्र द्वन्द्व अथवा अन्तर्द्वन्द्व से न गुजरा हो बल्कि यही विधा को जन्म देता है। किसी घटनाक्रम के कारण बदली हुई स्थिति पहले असहमति को, फिर विरोध से गुजरते हुए विद्रोह में बदलती है। यही द्वन्द्व से अन्तर्द्वन्द्व तक की यात्रा की परिणति है। अगर इसे फ्रायड के मनोविज्ञान के शब्दों में समझें तो यह इदम्, अहम् और परम अहम् चेतन और अचेतन मन की अवांछित इच्छाएँ इन्हीं से होकर गुजरती हैं। संघर्ष द्वन्द्व और भीतर का अन्तर्द्वन्द्व इसी की उपज है। मधुदीप जी की लघुकथा मानवीय चरित्रों का जिस तरह विश्लेषण करती है उसमें मानव व्यवहार का मनोशास्त्र निहित है। समकालीन सन्दर्भ असंगति–विसंगति और अंतर्विरोधों को भेदते हुए जीवन के व्याकरण का बोध दे देते हैं। मानसिक जीवन के दोनों छोरों के बीच से गुजरने वाला ययार्थ मधुदीप जी की लघुकथाओं में अन्तर्द्वन्द्व बनकर उभरता है; मसलन उनकी लघुकथा 'ऐसे' द्वन्द्व का एक बेहतरीन उदाहरण हो सकती है जिसमें संघर्ष तो है ही साथ ही एक गहन संदेश भी। रात के गहराते अन्धकार में दो मित्र सुनसान बेंच पर गुमसुम बैठे थे। इससे पूर्व वे काफी देर तक बहस में उलझे रहे थे। इस बात पर तो दोनों सहमत थे कि अब दुनिया में जिया नहीं जा सकता, इसलिए मरना बेहतर होगा। मगर मरें कैसे? काफी विचारने के बाद भी दोनों को आत्महत्या का कोई ढँग उपयुक्त नहीं लगा था। ''सुनो....!'' एक ने खामोशी तोड़ी। ''हूँ....'' ''मेरी मानोगे? क्यों न हम जिंदगी से लड़कर मरें।''

इस लघुकथा के संवाद को केवल यहीं तक समझें तो हमें पात्रों का द्वन्द्व दिखाई देगा, उनके आत्महत्या के रूप में जन्मे विचार से। पात्रों की ऐसी किसी स्थिति का जिक्र मधुदीप जी ने नहीं किया। इसे केवल इतनाभर लिखकर संकेत दिया, ''इससे पूर्व वे काफी देर तक बहस में उलझे रहे।'' लेकिन अन्तर्द्वन्द्व ने आत्महत्या के विचार को जन्म देते हुए संवादों में सार्थक संदेश संप्रेषित किया जो अन्त में अन्तर्द्वन्द्व को एक सही मोड़ देता है। जीवन ऐसे कई पड़ावों से गुजरता है जिसमें अन्तर्द्वन्द्व जीवन को एक नया मोड़ भी देते हैं। 'ऐसे' लघुकथा उसी का एक उदाहरण है।

संघर्ष या द्वन्द्व को परिवर्तन के संदर्भ में भी देखा जा सकता है। मधुदीप जी की लघुकथाओं में पात्रों का द्वन्द्व एक बदलाव से ही प्रेरित होकर जन्मा। लघुकथा 'गंदगी' एक ऐसे ही बदलाव की आहट है।... डॉ. जितेंद्र 'जीतू' ने सटीकता से इस लघुकथा पर एक प्रश्नवाचक वाक्य लिखा है– अन्याय का प्रतिरोध करती यह मामूली लड़की क्या किसी क्रांति का बिगुल फूकती नहीं दिखाई देती आपको?'' इसे मैं मधुदीप जी की बेहतरीन ही नहीं मुखाग्र याद रह जाने वाली लघुकथाओं में से एक मानूँगी, जिसमें विरोध और विडम्बना दोनों समान हैं। मधुदीप जी की लघुकथाएँ लोकोन्मुखी हैं, लोकगामी हैं। साहित्य का उद्देश्य भी यही है। यह जरूरी है कि लेखन में जिस द्वन्द्व को उकेरा जा रहा है वह भी सार्थक हो। जिन्दगी की जद्दोजहद उनकी लघुकथाओं में लगभग सभी

विषयों के साथ हुई है, चाहे वह राजनीति हो समाजशास्त्र हो या जीवन का अर्थशास्त्र। धारणाओं को धारदार स्वरूप देकर अंतर्द्वन्द्व ही नहीं अंतर्विरोधों के साथ उकेरा जाना एक कलाधर्मिता भी है। मधुदीप जी की लघुकथाएँ कलाधर्मिता के साथ उपजी हैं। उनकी बहुचर्चित ही नहीं बहुआयामी लघुकथा 'समय का पहिया घूम रहा है' एक व्यापक फलक का विस्तार करती है। कई कालखंडों से गुजरते हुए वैश्विक परिदृश्य से गुजरती है। ... एक वृहद कालखंड को लघुरूप देकर समेटना अपने आपमें चुनौतीपूर्ण है लेकिन अभिव्यक्ति की जिस कला के साथ इसका अंत हुआ वह भी अपने आपमें एक उद्धरण देने योग्य उदाहरण है। रंगमंच पर दर्शक किसी दृश्य में इतना डूब जाएँ कि ताली बजाना भूल जाते हैं; संभवतः यह सचेत समाज का भी सूचक है। ऐसी लघुकथाएँ बिरले ही देखने को मिलती हैं, जो अन्त में स्तब्ध कर देती हैं। कथा के किसी दूसरे भाग की जिज्ञासा छोड़ते हुए वैश्विक परिदृश्य को उद्घाटित करती इस लघुकथा में केवल पात्र नहीं, दर्शक के रूप में पाठक भी द्वन्द्व से गुजर रहे थे इसलिए इस लघुकथा के बहुत से पहलुओं पर बहुत अधिक विस्तार से लिखा जा सकता है।...

मधुदीप जी जितना सामान्य जीवन में संघर्ष करते हैं उतना ही राजनीतिक विषयों पर भी। उनके कथा पात्र सहज रूप में पाठकों से जुड़ाव पाते हैं। 'रात की परछाइयाँ' राजनीतिक विषयक लघुकथाओं की श्रेणी में सटीक होने के साथ संप्रेषणीय है। चिंता और बेचैनियों के बीच मनोविज्ञानक भय–ग्रंथि में पात्रों के माध्यम से शिल्प को इस रूप में गढ़ा है कि पूरे परिदृश्य में मौजूदा स्थितियों को सरेआम लाकर खड़ा कर दिया।... 'तुम बहरे क्यों हो गए हो' भी समकालीन समय का सही चित्रण करती एक ऐसी लघुकथा है जिसमें न सिर्फ संघर्ष के विषय समान हैं बल्कि बिडम्बनाएँ भी समान हैं। 'ऐलान–ए–बगावत' भी इसी क्षेत्र की एक ऐसी लघुकथा है जिसे पढ़ते हुए कहीं–कहीं पाठक के भीतर खीझ भी पैदा हो सकती है। भ्रष्ट अफसरों को अनावृत करती लघुकथा आम आदमी की पीड़ा के कारकों के साथ एक सरकारी दफ्तर के पूरे चक्र से पाठकों का भ्रमण करवाती है। 'तुम तो सड़कों पर नहीं थे' मेरे प्रिय शीर्षकों में से एक ऐसे समय का प्रतिनिधित्व करती लघुकथा है, जिससे हम सब गुजर रहे हैं।...

वास्तविक जीवन की सृजनात्मक कला के रूप में लघुकथा चरित्र–प्रधान हो या घटना–प्रधान, वह बिना किसी संघर्ष के आकार नहीं ले सकेगी। उसकी काया में केवल संप्रेषण नहीं होता, उस संप्रेषण में अंतर्द्वन्द्व होता है जो उसकी सार्थकता, उद्देश्य सुनिश्चित करता है। लघुकथाएँ केवल नीतिवाक्य नहीं हो सकतीं, विशेषकर समकालीन। नीतिबोध में चरित्र–चित्रण या चरित्र का विकास भी कथ्य के साथ अपना सामंजस्य बिठाते हुए कथा को पूरा करता है। यही वजह है उसके पात्र सामाजिक जीवन को संस्पर्श करते हुए यथार्थ ही लगते हैं। पात्रों के संघर्ष में पाठक स्वयं को खोजता है।... चेतस मन से लिखी मधुदीप जी की लघुकथाएँ समाज–संस्कृति के साथ राजनीति पर भी घटनाओं को पर्याप्त अर्थ देती हैं। उनकी लघुकथा 'टोपी' को ही लें तो हम पाएँगे कि कितना कुछ है इसमें। इसे एक जटिल रचना मानते हुए उसमें टोपी को बदलने के आशय में सत्ता परिवर्तन को बखूबी संप्रेषित किया है। बहुत गंभीर बात लिखी है इस लघुकथा की

समीक्षात्मक टिप्पणी में, ''जब व्यक्ति का कमिटमेण्ट/उद्देश्य पूरा नहीं होता, तो उसका गाँव–घर, शहर भी अजनबी और हर तरफ अन्धेरा–सा लगने लगता है।'' अन्धेरे में कुछ मसालें जल उठी हैं। वे इधर–उधर देख रहे हैं। उनके चारों तरफ भीड़ की परछाइयाँ गोल घेरा बनाए खड़ी हैं। वे उस घेरे को तोड़ने का भरसक प्रयास कर रहे हैं मगर उनके हाथों की चैन बहुत मजबूत है। दरअसल यह लघुकथा प्रबुद्ध पाठकों के दिमाग में ऐसे प्रश्न छोड़ती है जिससे वह अपने परिवेश में से तो गुजरता ही है।...

समग्रतः मधुदीप जी को पढ़ते हुए यही लगा कि हम सभी का जीवन जद्दोजहद से भरा है। इसलिए रचनाओं का समग्र संघर्ष से ही उपजता है, पोषित होता हुआ विकसित होता है। पात्र हो या कथ्य बिना द्वन्द्व के जीवन और रचना दोनों नीरस ही हैं। संघर्षविहीन समाज की कल्पना भी संभव नहीं लेकिन संघर्ष के आशय क्या, यह भी महत्वपूर्ण है। इसे उमेश महादोषी जी के शब्दों में समझें तो, ''संघर्ष का आवास क्या सिर्फ हार–जीत के मकड़जाल में ही है? और जो, जीवन में जीवन जीने लायक क्षणों की तलाश में श्रम होता है, वह क्या है? हाथ से फिसलते खूबसूरत क्षणों को बार–बार पकड़ने की कोशिश, अपने मानवीय और जीवन के आधारभूत, मौलिक अधिकारों पर होने वाले आघातों के संदर्भ में छोटे–छोटे आक्रोशों की अभिव्यक्ति और विरोध, जिसमें किसी से कुछ छीनना या किसी पर नियंत्रण की आकांक्षा या लालसा शामिल नहीं है, जो जीवन को जीने की आधारभूत आवश्यकता से प्रकृति प्रदत्त होने के कारण जुड़ा है, उसे पाने की कोशिशभर है, क्या यह संघर्ष नहीं है?'' या उसे पाने की कोशिशें जीवन का हिस्सा बन जाती हैं। कभी–कभी दिनचर्या का हिस्सा भी लेकिन यह संघर्ष का हिस्सा है बल्कि यही संघर्ष है। यकीनन पाने का प्रयास और छटपटाहट अपने भीतर का द्वन्द्व ही है। अब यह हमें देखना है, अपने इस द्वन्द्व में हम कितने अकेले हैं, कितने एकाकी। यह संघर्ष कितना उल्लास देने वाला है, श्रम के रूप में कितना खूबसूरत। हार–जीत के गुणा–भाग से परे जाकर जीवन को जीने की जिजीविषा कितना पैदा करती है यह द्वन्द्व।

बहरहाल बहुआयामी जीवन को आकार देती मधुदीप जी की लघुकथाएँ समकालीन सामाजिक यथार्थ के संवेदनात्मक धरातल पर कलात्मक रूपान्तरण कही जा सकती हैं। सर्वहारा वर्ग के साथ उन्होंने समग्र सांस्कृतिक, राजनीतिक परिदृश्य से जूझते, संघर्ष करते पात्रों को अपने विषयों में उकेरा है।...

कुल मिलाकर मध्यमवर्गीय परिवार के यथार्थ को जीवन्त पात्रों में उकेरने की कला मधुदीप जी के पास है। मुझे लगता है, इस विधा में प्रवेश करने वाले किसी भी नवोदित को एक बार इन लघुकथाओं से जरूर गुजरना चाहिए।

■शुभाशीष, 369/201–ए, सर्वसम्पन्न नगर, मानवता नगर के पास, इन्दौर–452016,म.प्र./मो. 09424509155

डा. जितेन्द्र 'जीतू'

अपने पात्रों के साथ कदमताल करते मधुदीप

मधुदीप की लघुकथाओं को पढ़ने पर आपको लगेगा कि उन्होंने बीस साल पहले जो लघुकथाएँ लिखी थीं, उनके पात्रों में और

आज जो लघुकथाएँ लिख रहे हैं, उनके पात्रों में कोई विशेष अंतर नहीं आया है। उनकी चारित्रिक विषेशताएँ ज्यों की त्यों है। जबकि बीस साल की अवधि एक लम्बी अवधि है और इस दौरान मधुदीप अपने जीवन के ढलान पर अग्रसर हुए हैं। तो उनकी सोच में भी अंतर आना चाहिए। जबकि ऐसा हुआ नहीं है। उनकी बीस साल पुरानी लघुकथा 'अस्तित्वहीन नहीं' का मुख्य पात्र रिक्शावाला छाती फुलाए सवारी के सामने खड़ा होकर यह मैसेज देता है कि वह अन्याय के सामने झुकेगा नहीं। वहीं, आज जब उनकी लघुकथा 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त' के पात्र की कॉफी में उबाल आने लगता है तो पाठकों को क्षण भर में ही मैसेज चला जाता है कि मधुदीप को एक घूँट में पीना और पढ़ना अपनी जीभ जला देने के समान होगा। कॉफी का बाकायदा ठंडा होना जरूरी है। तो क्या इसका अर्थ यह लगाया जाये कि मधुदीप के पात्र आज बीस साल बाद भी संघर्षरत हैं?...

कहीं ऐसा तो नहीं कि मधुदीप खुद अपने पात्रों को संघर्ष के लिये मजबूर कर रहे हों और आरोप बेचारे पात्रों पर लग रहे हों?

संघर्ष की बात चल रही है तो उनकी लघुकथा 'ऐसे' के उन दो मित्रों का स्मरण हो आना स्वाभाविक है जो आत्महत्या करने के लिए लगभग तैयार हैं, लेकिन मधुदीप हैं कि उन्हें मरने नहीं देना चाहते। हालांकि उनके दिमाग में आत्महत्या करने जैसा विचार क्यों आया है, इस ओर मधुदीप कोई इशारा नहीं करते। परन्तु पात्रों का आत्महत्या करना उन्हें अच्छा नहीं लगा और वे 'जिन्दगी से लड़कर मरें' का विचार उन मित्रों के मस्तिष्क में डालकर उन्हें आत्महत्या करने से बचा ले जाते हैं।

ऐसे ही, उनकी लघुकथा 'तनी हुई मुटिठयाँ' में नायक भ्रष्टाचार का विरोध करने में सक्षम नहीं है और जब उसकी तनी हुई मुटिठयाँ शिथिलता से नीचे गिरने वाली ही होती हैं तो वे उसके सहकर्मियों के माध्यम से उसकी मुटिठयों को हवा में थाम लेने का साहस उनसे करा डालते हैं। यह क्या है?

और देखिए– लघुकथा 'गन्दगी' की उस लड़की को याद कीजिए जिसका हाथ, बारात में लोगों द्वारा फेंके गये सिक्कों को उठाने के उपक्रम में एक युवक के पाँव के नीचे आ जाता है और फिर उस युवक द्वारा तरस खाकर लड़की की दूसरी हथेली पर सिक्का रख देने के उपक्रम का विरोध वह लड़की युवक का सिक्का एक तरफ उछालकर करती है। विडम्बना देखिए कि एक ओर तो लड़की बारात में सिक्के चुनने की कोशिश कर रही है, वहीं दूसरी और हाथ में आया सिक्का वह फेंक देती है। क्यों? गोकि दया उसे मंजूर नहीं और मधुदीप का पात्र मजबूर नहीं। अन्याय का प्रतिरोध करती यह मामूली लड़की क्या किसी क्रान्ति का बिगुल फूँकती नहीं दिखाई देती आपको?

और 'सफेद चोर' के उस वृद्ध के बारे में क्या कहेंगे आप, जो पटरी पर बैठा होली का सामान बेच रहा होता है और सिपाही द्वारा फटकारने पर बुदबुदाता है कि ''साली गौरमेण्ट ने सफेद चोर पाल रखे हैं....।'' डरता है क्या वह किसी से? वह चाहता तो चुपचाप उठ जाता, जैसे 'पटरी वाले' उठ जाते हैं पुलिस के आने पर। लेकिन नहीं। इतना ही आसानी से वह उठ जाता तो मधुदीप का पात्र कैसे कहलाता?

उनकी लघुकथा 'जनपथ का चौराहा' के उस अधनंगे व्यक्ति को ही लीजिये जो

विक्टोरिया बग्घी में घोड़ों की बजाय, जुते आदमियों को देखकर उनके पक्ष में तथा शाही सवारी के विरोध में खड़ा हो जाता है और उन्हें छुड़वाकर ही दम लेता है। यहाँ उनके पात्र क्रान्ति का उद्‌घोष करते दिखाई देते हैं। अधनंगा युवक जब शाही सवारी को रोक रहा होता है तब तक पाठक की दृष्टि उस क्रान्ति तक नहीं जाती। परन्तु लेखक तो सृजक होता है। वह जानता है कि क्रान्ति सूट–बूट पहने व्यक्ति या राजकीय सम्मान ग्रहण करने वाले व्यक्ति के बूते की बात नहीं है। क्रान्ति का सूत्रपात तो आमजन से उठकर ही कोई करेगा।

आपने देख लिया होगा (तो यह तय भी हुआ) कि मधुदीप अपने पात्रों में कैसे घुस जाते हैं और उन्हें विरोध करने तथा क्रान्ति करने के लिये तैयार कर डालते हैं जबकि वे आसानी से अपने पात्रों को दया के भरोसे छोड़ सकते थे।

साथ ही साथ, हम मधुदीप की उन लघुकथाओं की भी बात करेंगे जिनके पात्र परिस्थितियों के साथ संघर्षशील हैं, बेबस और लाचार भी हैं।

इस क्रम में उनकी लघुकथा 'खुरण्ड' दृष्टव्य है, जिसका पात्र इतना बेबस और लाचार है कि अपनी मेहनत की कमाई का भुगतान समय पर नहीं मिलने की आशंका से त्रस्त है तथा अपनी लड़की को पुत्र रत्न प्राप्त होने की खुशी में उसे छूछक तक देने में असमर्थ है क्योंकि मिल में तालाबन्दी हो गयी है।

उनकी लघुकथा 'भय' में नायक पात्र इंसपेक्टर वर्मा भ्रष्टाचार के समक्ष इतना भयभीत हो जाता है कि भय से आँखे मूँद लेता है क्योंकि उसने जिस ड्राइवर को अरेस्ट किया है उसे छोड़ने के लिए उच्चाधिकारी या किसी राजनीतिज्ञ (लघुकथा में स्पष्ट नहीं) की कॉल आ जाती है। संवाद शैली में लिखी गयी यह एक बेहतरीन रचना है।

एक गरीब, मेहनती और कम वेतन पाने वाले व्यक्ति की लघुकथा 'ओवरटाइम' में नायक इतना बेबस है कि वह ओवरटाइम से पत्नी के लिये कार्डिगन खरीदने की मंशा रखता है किन्तु जब उसे ओवरटाइम का भुगतान नहीं होता तो उसके हाथ आधी बाजू के स्वेटर में काँपने लगते हैं। रचना इतनी मार्मिक है कि पाठक भी पात्र के साथ–साथ ठिठुरने लगता है।

इसका अर्थ यह हुआ कि मधुदीप के पात्र सिर्फ संघर्ष के ही खिलाड़ी नहीं हैं। उनके हिस्से में संवेदनशीलता, बेचारगी और लाचारी भी आई है। इसे मधुदीप का कला–कौशल ही कहेंगे कि पात्रों के प्रति उनका प्रेम, विवशताएँ उनसे कभी संघर्षरत 'तनी हुई मुट्ठियाँ' लिखवाती हैं तो कभी 'विवश मुट्ठी।'

'तुम तो सड़कों पर नहीं थे' के पात्र इतने साधारण हैं कि वे साम्प्रदायिकता को झेलने के लिए अभिशप्त हैं। एक रामनाथ हैं, दूसरे प्रभुदयाल हैं, तीसरे महमूद भाई हैं और चौथे अहमद मिस्त्री हैं। कर्फ्यू में मिली ढील पर चारों परस्पर हतप्रभ हैं, हैरान भरे वाक्यों का आदान–प्रदान करते हैं। अवसर मिलता तो आक्रोशित भी होते। लेकिन मंदी ने कथावस्तु को आगे न बढ़ाकर दो ऐसे पात्रों को कथा में जगह दी, जिससे रामनाथ, प्रभुदयाल, महमूद और अहमद की तो नहीं, परन्तु पाठकों की हैरानी जरूर दूर हो गयी। बाद में आये दोनों पात्रों से मधुदीप ने ज्यादा काम नहीं लिया (वे दंगे में खूब 'काम' कर चुके थे), अपितु एक मुस्कुराहट से ही काम चला दिया। इसी एक मुस्कुराहट ने इन दोनों

पात्रों का चरित्र–चित्रण कर दिया।...

कैरेक्टर गढ़ने के मामले में 'मधुदीप दा जवाब नहीं।' परछाइयों को ही अपनी लघुकथा का पात्र बना लिया। देखें 'रात की परछाइयाँ' लघुकथा।...

'वजूद की तलाश में' दीप भाई भी आते हैं। प्रेम भाई से उनकी भेंट होती है और वे अंदर तक भीग जाते हैं, मानो वजूद की तलाश पूरी हो गयी हो। यहाँ भी पात्रों का अवतरण बाद में होता है। परिस्थितियों का वर्णन चिरपरिचित मधुदीपीय शैली में हुआ है।

मधुदीप के पात्र वर्तमान राजनीति के प्रति भी सचेत रहने का प्रयत्न करते दिखाई देते हैं। 'विषपायी' में जुबैदा का लव जेहाद पर लैक्चर कईयों को राजनीतिक पक्षधरता लग सकता है परन्तु पात्र यदि वर्तमान/समकालीन संकटों पर बातचीत नहीं करेंगे अथवा प्रभावित नहीं होंगे तो मात्र लघुकथाकारों के ही प्रभावित होने से काम नहीं चलने वाला।...

मधुदीप के चरित्रों को स्वयं से वार्तालाप करना भी भाता है। ये चरित्र इसी मायने में औरों से अलग हैं। ये पात्र इस कारण अपना चित्रण अधिक सक्षमता से कर डालते हैं। उदाहरणार्थ उनकी लघुकथा 'हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ।' यह लघुकथा आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी है, यह महत्वपूर्ण नहीं है। वे अपने संघर्ष का चित्रण करते हैं, यह भी महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण है वह आत्माभिव्यक्ति, जो लघुकथाकार अपनी लघुकथा के माध्यम से करते दिखाई देते हैं। आत्मावलोकन में वे भूल जाते हैं कि वे किसी कैरेक्टर को लेकर कथा नहीं बुन रहे हैं। वे आपको अपना परिचय दे रहे हैं। अपनी संघर्षगाथा आपसे शेयर कर रहे हैं। लेकिन रुकिये। आप भूल कर रहे हैं। एक कैरेक्टर है जो कथावस्तु ने खुद ही उत्पन्न कर दिया है। वह कैरेक्टर आदि से अंत तक लघुकथा में विद्यमान ही नहीं रहता, अपितु छाया रहता है। वह ज़िन्दगी से बात करता रहा है साठ सालों से। पर साठ साल बाद उसके ये संवाद सीमित हो गये हैं। रिटायर होने के बाद यह चरित्र जिन्दगी से बातें करके अपनी बात मनवाना चाहता है। यह टर्निंग प्वाइन्ट है। जिन्दगी ने उसे साठ साल तक अपने हिसाब से चलाया। अब वह उसे अपने हिसाब से चलाना चाहता है। वस्तुतः यह कैरेक्टर उम्र के इस पड़ाव पर आकर जीत की हुंकार भरना चाहता है।... जीत को वरण करने को आतुर मधुदीप का यह पात्र जिन्दगी की मैट्रो पर चढ़कर क्रान्ति तक का सफर तय करना चाहता है।...

मधुदीप अपने पात्रों के चरित्र को स्पष्ट करने के लिए वातावरण को क्रिएट करते चलते हैं। यह उनकी लघुकथाओं का प्लस प्वाइंट है। 'रात की परछाइयों' में मधुदीप के पात्रों के हिस्से में कुछ नहीं आया है। मधुदीप ने इसकी बजाय वातावरण क्रिएट करना ज्यादा जरूरी समझा। वातावरण बनाने के साथ–साथ वे पात्रों सम्बन्धी सूचनाएँ देते हुए चले, जिससे पात्रों के संवादों की कमी पाठक को नहीं खली। इस लघुकथा में टोटल वर्क परिस्थितियों के पल्ले पड़ा या लघुकथाकार के।

दो पात्रों के स्पष्ट चरित्र–चित्रण वाली, संवाद शैली में लिखी उनकी एक लघुकथा है 'मुआवज़ा', जिसमें वे लघुकथा के लिये आवश्यक वातावरण बुनते हुए चलते हैं। यह शहरीकरण पर एक अच्छी लघुकथा है तथा भूमि अधिग्रहण के नकारात्मक प्रभाव की ओर संकेत करती है।

जिन लघुकथाओं में वातावरण बनाने में मधुदीप ने पर्याप्त समय लिया है, वे बेहतर बन पड़ी हैं, जैसे वर्णनात्मक शैली वाली लघुकथा 'सन्नाटों का प्रकाशपर्व', जो कि एक अच्छी लघुकथा है। बहुत सारे पात्रों को एक सूत्र में पिरोना हो तो लक्ष्य भी एक होना चाहिए। एक लक्ष्य के सहारे ही कॉलोनी के सभी बूढ़ों की नैया पार लग जाती है। इतने सारे पात्रों को एक–साथ लेना और उन्हें एक ही दिशा की ओर खींच ले जाना अनोखा कार्य है। बात सिर्फ खींचने तक ही सीमित होती तो भी वाह–वाह न होती। उनसे उनके अकेलेपन का इलाज खुद करा डाला गया है लघुकथा में।...

मेरा मानना है कि बहुत अच्छी लघुकथाओं की समीक्षा नहीं हो सकती। ये समीक्षा से ऊपर की चीज हो जाती है। ऐसी अनेक लघुकथाएँ यहाँ बिखरी हुई हैं, जिन पर लिखने के लिए ढेरों पृष्ठों की आवश्यकता होगी। ऐसी ही एक लघुकथा है 'मुक्ति।' ऐसी लघुकथा के लिए सिर्फ 'वाह' ही निकलता है।

मधुदीप की लघुकथा 'महल में तो राजा रहता है' में पूँजीवाद के प्रतीक को इंगित करता पात्र है। यह वर्षों की दासता का प्रतीक भी है और अभिजात्य वर्ग की ओर संकेत करती लघुकथा है।

मधुदीप अपने सभी पात्रों के साथ कदमताल करते दिखाई देते हैं। फिर वह चाहे उनका उजबक ही क्यों न हो। मधुदीप का उजबक उनका वह 'बनवारी' है जो उन्हें उनकी परम्पराओं और दायित्वों के साथ मजबूती के साथ जुड़े रहने की शक्ति प्रदान करता है लेकिन यही बनवारी उन्हें बेबस बनवारी लाल बनने से नहीं रोक पाता, जब वे भाइयों के समक्ष आते हैं और उनके विचारों को सुनते हैं। तभी तो वे स्वयं को उजबक समझने लगते हैं।...

'डायरी का एक पन्ना' में अपने चिरपरिचित अंदाज में फिर प्रयोग करते नजर आते हैं मधुदीप। हाँ, इस लघुकथा में प्रयोग हुआ है। पर यह डायरी का एक पन्ना नहीं, डायरी के पहले पन्ने का सा आभास देता है। आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी इस लघुकथा में एक व्यक्ति को अपनी सेवामुक्ति के पश्चात अपने रूटीन से लड़ते और उसका प्रतिरोध करते दिखाया गया है। उस रूटीन से, जिसने उस व्यक्ति की इच्छाओं का दमन कर उसे मशीन बना डाला था। आज जब वह अपनी इच्छाओं को पूरा करना चाहता है तो अपने मशीनीकरण हो जाने के कारण बेबस है। इस बेबसी को मधुदीप पसंद नहीं करते। यदि पसंद करते तो लघुकथा यहीं तक होती। वे उस व्यक्ति को उस बेबसी से बाहर निकालकर ही संतुष्ट होते हैं। मधुदीप को चरित्र गढ़ने का शौक है। यह शौक उनके कहानीकार होने के कारण भी पैदा हुआ लगता है। इसलिए कभी–कभी वे बिना पात्र के ही अपने रास्ते चल पड़ते हैं और कारवां बनता जाता है।...

गजब हैं उनके पात्र। 'मेड इन चाइना' वस्तुओं को खरीदने में यकीन नहीं रखते हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था पर अपनी पैनी निगाह रखते हैं। इस लघुकथा को पढ़कर उस पात्र के प्रति मन गहरी आसक्ति से भर उठता है जो कि रिश्तों के प्रति भी संवेदनशील है और साथ ही साथ राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व और कर्तव्य के प्रति भी समान रूप से संवेदनशील है। वरना पोते के लिये टॉय कार खरीदने के लिए उस पर मेड इन चायना देखकर उसका हाथ रुक न जाता। चरित्रों में पूर्ण स्पष्टता दिखाई

देती है। दोनों पात्रों में।...

वस्तुतः मधुदीप की लघुकथाएँ भोजन की सुगन्ध के समान है। जिन्हें भूख लग रही होती है, वे तो इन्हें पढ़ ही डालते हैं। पर जिन्हें भूख नहीं भी लग रही होती है, वे भी पढ़ने से पीछे नहीं हटते।

■ कविकुल, खरबन्दा निवास, स्टेशन रोड, बिजनौर–246701, उ.प्र./मो. 08650567854

डॉ. ध्रुव कुमार

मधुदीप की सुशिल्पित लघुकथाएँ

...पुनरुत्थान–काल में जिन कतिपय ख्यातिलब्ध लघुकथाकारों का प्रवेश हुआ, उनमें एक नाम मधुदीप का भी है, जिनकी पहली लघुकथा 'अन्तर' संभवतः 1977 के आसपास आयी। 'अन्तर' के तुरन्त पश्चात्– 'अस्तित्वहीन नहीं', 'हिस्से का दूध' आदि इनकी सर्वाधिक चर्चित लघुकथाएँ रही हैं, जिनका प्रकाशन उमेश महादोषी के सम्पादकत्व में प्रकाशित 'पड़ाव और पड़ताल' (खण्ड–19), 'मधुदीप की 66 लघुकथाएँ और उनकी पड़ताल' एवं 'मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ' में भी उल्लेखनीय ढँग से हुआ है।

अनुमानतः इनकी अब तक सृजित लघुकथाओं की संख्या लगभग सवा सौ होगी। इनकी लघुकथाओं की संख्या इससे काफी अधिक हो सकती थी किन्तु कतिपय अपने ही कारणों से मधुदीप 1995 से 2013 ई. के मध्य साहित्य–सृजन से विलग रहे और पुनः 25 अगस्त, 2013 ई. से सक्रिय हुए। इस दिन वह आत्मकथात्मक उपन्यास लिखने बैठे किन्तु 'वजूद की तलाश' लघुकथा हाथ लगी। इस सन्दर्भ में मधुदीप का कथन है– "यह थी मेरे पुनः लेखन की शुरुआत। शायद यह कोई इशारा था कि नियति मुझे लघुकथा के क्षेत्र में लौटने को कह रही है। मैंने इस नियति को स्वीकार कर लिया और लघुकथाएँ, सिर्फ लघुकथाएँ लिखने का निश्चय किया।"

'समय का पहिया...' इनके संग्रह का अध्ययन करते–करते मुझे यह अहसास होने लगा कि मधुदीप 2013 के बाद लघुकथा–सृजन में परम्परा से हटकर कुछ नया देने का प्रयास करने लगे हैं, ऐसे में यदि कहीं लघुकथा का अनुशासन थोड़ा–बहुत भंग होता है– तो यह सहज स्वाभाविक ही था। यह तो सत्य है कि साहित्य की कोई भी विधा हो, उसकी सृजनात्मक रचनाएँ सदैव एक–सी नहीं रहतीं और विधा के विकास हेतु प्रयोग करते–करते परम्परा की सीमाएँ स्वतः टूटने लगती हैं और कुछ–न–कुछ नवीनता ग्रहण करने लगती हैं। मधुदीप ने भी लघुकथा को विकास देने की दृष्टि से लघुकथा–सृजन में प्रयोग करने शुरू किये तो अब तक प्रयोगधर्मिता की राह पर अपनी गति से आगे बढ़ते जा रहे हैं।

मेरी मान्यता है कि कोई भी लघुकथा कथानक, कथ्य और शिल्प तत्त्वों से मिलकर ही अपना सार्थक आकार ग्रहण करती है। 'लघुकथा–सृजन का कारण' और 'शिल्प' यानी लघुकथा को प्रत्येक दृष्टिकोण से सौन्दर्य प्रदान करती हुई प्रस्तुति।...

इस सन्दर्भ में मधुदीप की एक बहुचर्चित लघुकथा 'हिस्से का दूध' को शिल्प के सन्दर्भ में अवलोकित किया जा सकता है।... इसके संवादों से जहाँ श्रेष्ठ नाटकीयता का

आभास होता है, वहीं संवादों यानी कथोपकथन में सहज आम बोल–चाल की भाषा पात्रों के जहाँ मनोभावों को सार्थक अभिव्यक्ति दे रही है वहीं उनके चरित्र को भी बहुत ही सुन्दर ढँग से संप्रेषित कर रही है कि ये दोनों पात्र निम्नवर्ग से आते हैं और एक–दूसरे के प्रति स्नेह एवं दायित्व के स्तर पर पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी से समर्पित हैं।... अन्तिम वाक्य में लेखक ने कलात्मक भाषा–शैली से लघुकथा को अतिरिक्त गरिमा प्रदान की है जो सांकेतिक भाषा में आये हुए व्यक्ति की खातिर–तवज्जो के लिए नायक की अर्थहीनता यानी गरीबी का भी सुन्दर चित्रण करती है।...

इसमें विराम–चिह्नों का कमाल प्रथम संवाद में देख–परख सकते हैं– "नहीं, मुन्ना के लिए रख दो। उठेगा तो....।" यहाँ ''उठेगा तो" के आगे डॉट–डॉट दिया गया है और वहाँ कुछ लिखा नहीं गया है किन्तु यहाँ पाठक इस अनलिखे को भी सहज ही समझ सकता है कि उसे यानी मुन्ना को दूध दे–देना। यहाँ विराम–चिह्नों एवं अनकहे का संप्रेषित होना शिल्प की दृष्टि से लघुकथा को अतिरिक्त सौंदर्य प्रदान करता है...।

सुशिल्पन की दृष्टि से इनकी दूसरी लघुकथा 'नजदीक, बहुत नजदीक' भी महत्त्वपूर्ण है। कथानक को सटीकता प्रदान तथा अपने कथ्य को सार्थक करने के उद्देश्य से लेखक ने इस लघुकथा का आरम्भ कथावाचक की तरह आरम्भ किया और अपने उद्देश्य तक पहुँचने हेतु दूसरे पैराग्राफ तथा अन्त में तीन संवादों का सटीक उपयोग किया।

लेखक का उद्देश्य 'आत्मविश्वास' को गति देना है। अतः वह लिखता है– ''अपने ही क़दमों की आहट अब उसे पराई लग रही थी। वह घबराहट में बार–बार पीछे मुड़कर देख रही थी, पगडण्डी सुनसान पड़ी थी। गाँव अभी बहुत दूर था।''

अतः लेखक ने हॉकी की खिलाड़ी नायिका में आत्मविश्वास जगाने हेतु सटीक मनोविज्ञान का उपयोग करते हुए नायिका से निम्न संवाद मन–ही–मन कहलवाये–

"तू रज़िया सुलताना है...." उसने मुट्ठी हवा में लहराकर पाँव आगे बढ़ा दिये।

"तू झाँसी की रानी है...." उसके आगे बढ़ते पाँवों में तेजी आ गयी।

"तू भारत की वीर बेटी है...." हाँ, अब गाँव नजदीक, बहुत नजदीक था।

लेखक ने नायिका के भीतर आत्मविश्वास जगाने के लिए, सटीक मनोविज्ञान का सहारा लेकर लघुकथा को सुशिल्पित बना दिया।...

इसी क्रम में 'शासन' लघुकथा को भी देखा जा सकता है। इसके शिल्प में शीर्षक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।

एक चाय वाला है जो दूकान पर सभी ग्राहकों के आदेशों का पालन करता है किन्तु घर पर अस्वस्थ पत्नी जब उसे चाय बनाने को कहती है तो चायवाला उत्तर देता है–

"हूँ ऽ ऽ ऽ ! पटरानी है, जो तेरे लिए चाय बनाऊँ।''...

इस लघुकथा में निम्नवर्ग के एक ऐसे व्यक्ति का मनोविज्ञान है जो दिन भर अपनी दूकान पर लोगों के आदेश मानने हेतु बाध्य है और घर पर पत्नी को अस्वस्थ स्थिति में भी उसे ऐसा उत्तर देता है जो वांछित नहीं था।

जैसा कि सर्वविदित है कि प्रयोगधर्मी लघुकथाकारों में मधुदीप पांक्तेय हैं।... प्रयोगधर्मी लघुकथाओं में उनकी एक लघुकथा 'डायरी का एक पन्ना' है जो निश्चित रूप

से 'डायरी शिल्प' में सृजित की गयी है।... डायरी–शिल्प में होने के कारण इसमें कथोपकथन इत्यादि की आवश्यकता ही नहीं थी अपितु, इसमें लेखकीय भाषा–शैली की ही अनिवार्यता थी जिसे मधुदीप ने सटीक भाषा–शैली का उपयोग करते हुए इस लघुकथा को अपने लक्ष्य तक पहुँचाकर 'डायरी–शिल्प' को सार्थकता प्रदान की है जिस कारण यह एक श्रेष्ठ लघुकथा का आकार ग्रहण कर सकी है।

कथा का कोई भी स्वरूप हो, प्रायः उसमें कथोपकथन यानी संवादों का बड़ा महत्त्व होता है। किन्तु लघुकथा–विधा में अनेक ऐसे लेखक हमारे समक्ष आते रहे हैं जिन्होंने मात्र कथोपकथन से आरम्भ करते हुए अन्त तक लघुकथा को संवाद–शिल्प में ही पूर्ण करके इस शिल्प की सार्थकता सिद्ध कर दी है। ऐसे लेखकों में मधुदीप भी पांक्तेय हैं। इस सन्दर्भ में इनकी 'आधी सदी के बाद भी', 'महानगर पर प्रेम संवाद' और 'साठ या सत्तर से नहीं' को सहज ही अवलोकित किया जा सकता है। ये तीनों लघुकथाएँ 'प्रेम' को केन्द्र में रखकर लिखी गयी हैं। लेखक ने अपने कथानक की सटीक प्रस्तुति हेतु 'संवाद–शिल्प' में अपने कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए कम–से–कम शब्दों में इस शिल्प का सार्थक उपयोग कर इन तीनों लघुकथाओं को सुशिल्पित बना दिया। इस सुशिल्पन में इनका सार्थक शीर्षक भी अपनी सार्थकता अपने पूरे कौशल के साथ सिद्ध करता है। इन तीन लघुकथाओं के अतिरिक्त इस श्रेणी में 'ऐसे', 'भय', 'ऐलान–ए–बगावत', 'अवाक्', 'आल–आउट', 'उसके बाद', 'चैटकथा', 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त', 'दौड़', 'मजहब', 'महल में तो राजा रहता है', 'मुआवजा', 'मेड इन चायना', 'विषपायी', 'जनपथ का चौराहा', 'संन्यास' इत्यादि लघुकथाओं को भी शामिल किया जा सकता है। कारण, यह आद्योपान्त भले ही 'संवाद–शिल्प' की लघुकथाएँ न हों, किन्तु उनमें कथोपकथन का अपना विशेष महत्त्व प्रत्यक्ष होता है और वे इस शिल्प की ओर झुकती सुशिल्पित लघुकथाओं की श्रेणी में सहज ही आ जाती हैं और अपनी श्रेष्ठता मजबूती से सिद्ध करती हैं।

मधुदीप ने लघुकथा सृजन के विकास में एक नया प्रयोग करते हुए नाट्य–शिल्प पर आधारित 'समय का पहिया घूम रहा है' का सृजन किया है।... इस लघुकथा के 'दृश्य : तीन' पर हुए मंथन को अवलोकित किया जा सकता है– "धीरे–धीरे उभरती रौशनी से मंच का अँधेरा कम होता जा रहा है। दर्शकों के सामने लाल किले की प्राचीर का दृश्य है। यूनियन जैक नीचे उतर रहा है, तिरंगा ऊपर चढ़ रहा है।

लाल किले की प्राचीर पर पड़ रही रौशनी बुझ रही है। मंच के दूसरे भाग में रौशनी का दायरा फ़ैल रहा है। सुबह का दृश्य है। प्रभात की किरणों के साथ गली–कूचों में लोग एक–दूसरे से गले मिल रहे हैं, मिठाइयाँ बाँट रहे हैं.... आज़ादी का जश्न मना रहे हैं।

मंच का पर्दा धीरे–धीरे गिर रहा है।''

'समय का पहिया घूम रहा है' शीर्षक इस लघुकथा के शिल्प को श्रेष्ठ बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

लेखक की एक लघुकथा 'खुरण्ड' है जो इनकी श्रेष्ठ लघुकथाओं में गिनी जाती है। इस लघुकथा को इन्होंने 'प्रतीक शिल्प' में प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है।... इस लघुकथा में 'खुरण्ड' को प्रतीक रूप में देकर लेखक ने उसे अपेक्षाकृत अधिक सुशिल्पित बनाकर अपने कौशल को सिद्ध करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। 'खुरण्ड' शीर्षक इसके

सुशिल्पन में अहम् भूमिका का निर्वाह करने में सफल रहा है।

नारी सशक्तीकरण विषय को केन्द्र में रखकर अनेक लेखकों ने अनेक–अनेक लघुकथाओं का सृजन किया है किन्तु उनमें से कुछ लघुकथाएँ ऐसी हैं, जिन्हें विस्मृत कर पाना संभव नहीं है, उनमें से ही मधुदीप की एक लघुकथा 'नमिता सिंह' भी है। इस लघुकथा को अपने विषय में पांक्तेय बनाने में इसकी विशिष्ट शिल्प की ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है।...

'तलाक! तलाक! तलाक!' परम्परा के विरोध में अपना स्वर बुलन्द करती हिन्दी की संभवतः 'लौटा हुआ अतीत' प्रथम लघुकथा है!... इस लघुकथा को 'आत्मसंस्मरण शिल्प' में बहुत ही सुन्दर ढंग में प्रस्तुत करने में लेखक ने सफलता प्राप्त की है। 'आत्मसंस्मरण शिल्प' में ही इस लेखक की एक और चर्चित लघुकथा 'लौहद्वार' है जिसमें 'लौहद्वार' को नायक बनाकर इस लघुकथा को साकार करने का सुन्दर प्रयास किया गया है।...

मधुदीप की यों तो प्रायः प्रत्येक लघुकथा सुन्दर और सटीक शिल्प से सजी है किन्तु मैंने अपने इस आलेख में मात्र उन्हीं लघुकथाओं का उल्लेख किया है जो अपने में नितान्त भिन्न एवं विशिष्ट तथा अलग पहचान लिए प्रस्तुत हुई हैं। वैसी ही भिन्न लघुकथाओं में 1995 ई. में इनकी सृजित लघुकथा 'तनी हुई मुट्ठियाँ' है।... मधुदीप की यह लघुकथा जहाँ विषय को लेकर उपयोगी एवं सार्थक है वहीं अपने शिल्प को लेकर भी श्रेष्ठता के शिखर को स्पर्श करती है। विषय के अनुकूल इस लघुकथा की भाषा विवरणात्मक लेखकीय भाषा है जो अपने विषयानुकूल बिलकुल सटीक एवं सार्थक है। इस सार्थकता में इसका शीर्षक भी पूर्णतः सहायक है और अपनी उपयोगिता को सिद्ध करता है। विचार की दृष्टि से 'स्थिति' लघुकथा भी सार्थकता के पक्ष में खड़ी एक सुशिल्पित लघुकथा है जो जनवादी विचारधारा को बल देती सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त होती है।

यों तो मधुदीप की प्रायः लघुकथाएँ अपने विषय के अनुसार सटीक शिल्प में प्रस्तुत हुई हैं। इनमें 'अहम्', 'अन्तर', 'टीस', 'हालात काबू में हैं', 'मेरा बयान', 'चिड़िया की आँख कहीं और थी', 'हथौड़ा', 'तुरुप का पत्ता' इत्यादि अनेक लघुकथाएँ ऐसी हैं जिनके सुशिल्पन की चर्चा होनी चाहिए किन्तु आलेख के विस्तार को देखते हुए एवं उपरिवर्णित शिल्पों से भिन्न अब मैं मात्र दो और ऐसी लघुकथाओं की चर्चा करूँगा, जिनकी चर्चा के बिना यह लेख मेरी दृष्टि में अधूरा माना जाएगा। ऐसी दो लघुकथाओं में एक लघुकथा 'छिद्रान्वेषी' है।... पत्र शिल्प में प्रस्तुत यह लघुकथा अपनी विवरणात्मक भाषा–शैली एवं सटीक शीर्षक के कारण सहज सुशिल्पन के दायरे में आकर श्रेष्ठता का ताज ग्रहण कर लेती है।

अन्त में, मैं मधुदीप की लघुकथा 'खोखलापन' की चर्चा करना चाहूँगा।... इस लघुकथा में यह बताने का प्रयास है कि लोग जिस काम की निन्दा करते हैं, वस्तुतः उसी काम को वह पुनः पुनः करते हैं। यानी उनके विचार में स्पष्ट रूप से खोखलापन है। इसमें तीन संवाद है जो उच्चरित भाषा–शैली में प्रस्तुत किये गए हैं, जिन्होंने इस लघुकथा को विस्तार लेने से सहज ही बचा लिया और कम शब्दों में वांछित सारी बात कहलवा दी।

प्रस्तुत उद्धृत लघुकथाओं के अतिरिक्त अन्य अनेक ऐसी लघुकथाएँ हैं, जिनकी चर्चा की जा सकती थी उनमें विशेष रूप से 'एकतन्त्र', 'किस्सा इतना ही है', 'मसालेदार भोजन की तीखी सुगन्ध', 'मुक्ति', 'रात की परछाइयाँ', 'विषपायी', 'टोपी', 'निश्चय',

'अविश्वास', 'अतुल ने ठीक कहा था', 'मन्दी', 'आलू के दाम', 'शाश्वत', 'खुशगवार मौसम' इत्यादि को लिया जा सकता है किन्तु इनकी चर्चा का अर्थ तो पूर्व उद्धृत लघुकथाओं के शिल्प की पुनरावृति ही हो जाता। इसलिए मैंने केवल भिन्न शिल्पों से सजी कतिपय विशिष्ट लघुकथाओं एवं उनकी भाषा–शैली का सटीक उल्लेख करने का अति विनम्र प्रयास किया है। शेष तो पाठक निर्णय एवं विचार करेंगे।

■ पी.डी.लेन, महेन्द्रू, पटना, बिहार / मो. 09304455515

डॉ. पुरुषोत्तम दुबे

मधुदीप की लघुकथाओं का भाषायी औदात्य

...किसी भी रचना में जब भाषा का रूप उत्कृष्ट अथवा शिखरस्थ स्थिति का पाया जाता है तब भाषाई औदात्य का अर्थ ध्वनित होता है। जब भाषा किसी प्रगाढ़ चिंतन के फलस्वरूप विघटित होती है, तो वह औदात्य की परिधि में अपना स्थान ले लेती है। भाषा की उत्कृष्टता शब्दों का सार्थक प्रयोग और वाक्यों की नियोजित बुनावट के फलस्वरूप है। अभिव्यंजना जितनी तीव्र और अर्थ संपन्नशब्दों से अनुस्यूत होकर वाक्यानुकूल होगी, भाषा में उतनी ही गहनता और उत्कट स्वरूप दर्शन का विनियोग देखने को मिलेगा। भाषा कथानक की लगाम होती है। भाषा का प्रतोद ही कथ्य के घोड़े को संयत रखता है। शब्दजन्य अर्थों का ही दूसरा नाम भाषा है। अतः भाषा में इतनी सामर्थ्य होनी चाहिए कि वह पाठकों का मन बरबस बाँधने में सहायक होकर पाठकों के विचारों में हलचल पैदा कर दे। भाषा में ऐसी क्षमता तब ही उत्पन्न होती है जब किसी रचना में भिन्न–भिन्न भावों नानाविध भावनाओं और भावों तथा भावनाओं से सम्बन्धित अनेकानेक तत्वों का सही–सही निरूपण हो सके।

मधुदीप की भाषा पर विचार करने से पूर्व मधुदीप की लघुकथाओं की प्रकृति को जान लेना आवश्यक है। मधुदीप की लघुकथाओं में बदली हुई पीढ़ियाँ और बदले हुए परिदृश्यों का समूचा बोलबाला पढ़ने को मिलता है।...1995 में मधुदीप का पहला लघुकथा संग्रह 'मेरी बात तेरी बात' प्रकाशित हुआ था और अब तकरीबन 20 वर्षों के अंतराल के उपरांत सन् 2015 में मधुदीप का दूसरा लघुकथा संग्रह 'समय का पहिया...' प्रकाशित होकर सामने आया है। कहना न होगा कि मधुदीप की लघुकथाओं के इन दो प्रकाशनों के दरमियान 20 वर्ष का लंबा वक्फा है। इन 20 वर्षों में मधुदीप की लघुकथाओं को पढ़ने वाले पाठकों में भी अंतर आना स्वाभाविक है। यही वह अंतर है जो मधुदीप के कर्तृत्व को विभाजित करता है। न केवल लेखन के आधार से प्रत्युत सोच–विचार के धरातल से भी।...

इस बीच सामाजिक परिदृश्य भी बदले हैं चेहरों की सच्चाइयों के बरअक्स मुखौटे भी पैदा हुए हैं। भाषा के साथ भावाभिव्यंजना भी बदली हैं।

मधुदीप की पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती लघुकथाओं के इन दो ध्रुवों के मध्य मधुदीप की भाषा का स्वरूप विकसित हुआ है। समय के साथ मधुदीप के विचारों में, उनकी भाषा तथा शिल्प में विशद् परिवर्तन आया है। स्वयं मधुदीप का मानना है कि ''यह परिवर्तन केवल

उनकी रचनाओं में ही नहीं, इस शताब्दी के पूरे लघुकथा लेखन में देखा जा सकता है।''

मधुदीप की भाषा में जीवंतता दृष्टिगोचर होती है। इसके तीन प्रमुख कारण हैं। पहला मधुदीप अपनी लघुकथाओं में अपने समकाल को महत्व देते हैं, इसी से उनकी भाषा में आधुनिक समय में प्रचलित शब्दावलियों का प्रचुर प्रयोग मिलता है। दूसरा मधुदीप की लघुकथाओं के अधिकांश कथानक समाज की देहरी से उठाए हुए मिलते हैं। इस कारण मधुदीप की भाषा में मानवीय सरोकारों से अनुस्यूत शब्दों की बानगियाँ देखने को मिलती हैं। तीसरा मधुदीप की लघुकथाओं में वर्णित कथानकों की प्रवहमानता अधिकांश रूप में संवादों के बल पर घटित होती है, अतः मधुदीप की भाषा में वही शब्द प्रयोजित होता है जो वाक्य–रचना को सीमित मगर सटीक बनाने के निमित्त अनेक शब्दों से निकलने वाले एक अर्थ को एक शब्द में प्रकट करने की ताकत रखता हो।

मधुदीप की लघुकथाओं में उन सभी कारकों का पता सहज ही देखने को मिल जाता है, जिन कारकों के कारण मधुदीप की लघुकथाओं में भाषायी और जाति के गुणधर्म विश्लेषित किए जा सकते हैं।

भाषागत शुद्धता

रचना में तथ्य का सौंदर्य भाषागत शुद्धता से ही प्रस्फुटित होता है और विकास पाता है। भाषा जितनी प्रांजल और व्याकरणसम्मत होगी, कथ्य उतना जीवंत और अर्थवान होगा। लघुकथा की जमीन बहुत छोटी होती है और जिसका क्षेत्रफल सांकेतिकता के इंच–टेप से नापा जाता है। सांकेतिकता का आचरण व्यंजना से पोषित होता है। लघुकथा में व्यंजना का आचरण देश, काल और परिस्थिति का सही–सही उद्‌घाटन करने में निःसृत होता है।

मधुदीप की लघुकथा 'मेरा बयान' गैंगरेप से पीड़ित युवती को केंद्र में रखकर विघटित हुई है। रेप्ड युवती टूटकर भी नहीं टूटी है। यही उसके चरित्र का उत्कर्ष है। मधुदीप ने उस पीड़िता को हिम्मत की देहरी से लौटाया नहीं है, अपितु उसके उपयुक्त निर्णय के साथ उसे न्याय की चौखट पर अंगदी पाँव की तरह अडिग खड़ा कर उससे कहलवाया है, ''यह सच है कि गहराती रात में उन चार भेड़ियों ने मेरी देह नोंची है, मगर इससे मैं यह कैसे मान लूँ कि मैं मर चुकी हूँ। मैं जिन्दा हूँ, यह सौ प्रतिशत सच है और इसका प्रमाण है कि मैं इस घटना की पूरी रिपोर्ट थाने में लिखवाकर आई हूँ और सुबह फिर इस संदर्भ में मुझे पुलिस थाने जाना है।'' प्रस्तुत कथन अन्याय के विरुद्ध संघर्ष के ठोस रास्ते की धरती से उपजा है। सपाटबयानीनुमा यह कथन... सीधा–साधा अर्थ देने वाला कथन है, जिसकी प्रस्तुति में मधुदीप की भाषा विषयक शुद्धता सहज ही में देखी जा सकती है।

संवाद–विषयक संक्षिप्तता

लघुकथाकार मधुदीप बखूबी जानते हैं कि कथानक की बुनावट संवादों के बल पर भी की जाती है। छोटे–छोटे मगर सार्थक संवादों से रची–बसी लघुकथा अनर्गल और शब्दाधिक्य की मार से बच जाती है। संवादों के बल पर गढ़ी गई लघुकथा 'वाचाल' होकर पाठकीय मन को आकृष्ट करती है। मधुदीप की लघुकथा 'बात बहुत छोटी–सी थी' संवाद–जड़ित उद्देश्यपरक लघुकथा है। प्रस्तुत लघुकथा में व्याप्त लघु–संवादों की वानगी ही लघुकथा का प्राण तत्व है। संवाद विषयक संक्षिप्तता को जानने, परखने और समझने की

दृष्टि से लघुकथा 'बात बहुत छोटी–सी थी' में निहित संवाद उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं–

''मैं उन्हें सुख क्यों दूँ, उन्होंने मुझे क्या दिया है?''

''यह लेने–देने की बात नहीं है भाई! वह माँ है.... हमारी माँ....।''

''ये खोखले आदर्श अपने पास रखो! मुझे नसीहत देने की जरूरत नहीं है।''

''अच्छा एक बात बता! नन्हा सुबह उठकर तुझे गुड मॉर्निंग करता है?''

''क्यों नहीं! वह मेरा बेटा है.... मेरा बेटा!''

''क्या तुम माँ के बेटे नहीं हो!''...

स्पष्टता

भाषा का एक पृथक लक्षण भाषा में निहित स्पष्टता का होना है। भाषा जितनी स्पष्ट और अर्थसंपन्न होगी, अभिव्यक्ति उतनी सहज और पाठकों के लिए उतनी ही ग्रहणीय होगी।... मधुदीप की भाषा में व्यवहारजन्य स्पष्टता है, जिसके फलस्वरूप मधुदीप का अभिव्यक्ति पक्ष चौकस और अविरल प्रतीत होता है। भाषागत स्पष्टता का एक उदाहरण उनकी लघुकथा 'वजूद की तलाश' से दृष्टव्य है–

''गाँव के छोटे से बाजार को पार कर मैं जिस गली की ओर मुड़ रहा हूँ, उसके नुक्कड़ पर ही मेरी मंजिल है। दोनों ओर के मकानों को देखता हूँ, सब–कुछ तो बदल गया है। किसी परिचित की तलाश में आँखें भटक रही हैं। ये सभी अपनों के ही तो हुआ करते थे। इन्हीं घरों के आँगन में मेरा बचपन गुजरा है.... सभी तो अपने थे। अब वे सब कहाँ हैं?''

कल्पना और बिम्ब

...कल्पना मानसिक चतुराई है। विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण, विषय–सामग्री का विस्तार, विषयवस्तु की अनुभूति और स्व के सम्बन्धों से मुक्ति। इन्हीं कारकों से परिचालित होकर 'कल्पना' अपना विन्यास रचती है। एक दृष्टिसम्पन्न लघुकथाकार अभिव्यक्ति में कल्पना का बीजारोपण कर कथ्य को कैसे वास्तविकता के रूप के समीप खड़ा कर देता है, विशेषकर जब कथ्य की इमारत ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य की बुनियाद पर खड़ी करनी हो। लघुकथाकार मधुदीप ने अपनी लघुकथा 'समय का पहिया घूम रहा है' में नानाविध दृश्यों की जमावट में अपनी कल्पना–शक्ति का उपयोग कर प्रस्तुत लघुकथा में 'चित्रात्मक दृश्य' उपस्थित किया है– ''तेज रोशनी के बीच मंच पर मुगल दरबार सजा है। शहंशाहे आलम जहाँगीर अपने पूरे रौब–दाब से ऊँचे तख्तेशाही पर विराजमान हैं। नीचे दोनों तरफ दरबारी बैठे हैं। एक फिरंगी अपने दोनों हाथ बाँधे सिर झुकाए खड़ा है। उसने शहंशाहे–हिंद से ईस्ट इंडिया कम्पनी को सूरत में तिजारत करने और फैक्ट्री लगाने की इजाजत देने की गुजारिश की है।''

शब्दार्थ के माध्यम से अभिव्यक्ति निःसृत करना ही बिम्ब–रचना की प्रक्रिया है। प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. नगेंद्र ने एक स्थान पर लिखा है, ''लक्षणा के प्रयोग द्वारा रूप–रेखाओं में रंग भर (रचनाकार) बिम्ब को पूर्णता प्रदान करता है।'' मधुदीप ने अपनी विभिन्न लघुकथाओं में भाँति–भाँति के बिम्ब खड़े किये हैं, जिसके फलस्वरूप भाषा में केवल कथ्य महत्वपूर्ण हो जाता है और संवाद अनावश्यक विस्तार लेने से बच जाता है। मधुदीप की 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त!' लघुकथा में हुआ बिम्बावतरण द्रष्टव्य है–

''देश की अर्थव्यवस्था गर्त्त में जा रही है....''

''नेताओं ने सारे देश को लूटकर खा लिया है....''

''दुश्मन हमारे सैनिकों के सिर काट रहा है...''

''सबसे बड़ा प्रश्न भ्रष्टाचार का है....''

व्यंग्यात्मकता और वक्रोक्ति

व्यंग्य लघुकथा का अनिवार्य आचरण है। व्यंग के बूते से लघुकथा में विलक्षणता और अर्थ की गंभीरता पैदा होती है, जिसे हम सांकेतिकता कहते हैं। उसका अधिकांश रूप व्यंग्य की नाभि से जन्मता है।... मधुदीप की लघुकथा में व्यंग्य का अभिलेखन समाज के तट पर बैठकर नहीं हुआ है अपितु समाज के भीतर बतौर लेखक के स्वयं की उपस्थिति दर्ज कर व्यंग्य का लोकमंगलकारी चित्र प्रस्तुत करने में मधुदीप अपनी भूमिका निभाते हैं। मधुदीप की लघुकथा 'सन्नाटों का प्रकाशपर्व' वर्तमान समय की बुजुर्ग पीढ़ी की जीवनगत स्थिति को लेकर व्यंग्यात्मक अभिव्यंजना से पोषित लघुकथा है–

''इन बुजुर्गों के लिए दिवाली–दशहरे का कोई अर्थ ही नहीं रह गया है। विदेशों से अपनों की फोन–कॉल्स, हाय–हेलो, हैप्पी दिवाली, हैप्पी दशहरा.... और बस....। ये शरीर से बिल्कुल स्वस्थ लगते हैं मगर एक टूटनभरी थकान इनके पोर–पोर में भरती जा रही है।''

मधुदीप की लघुकथाओं में वक्रोक्ति अर्थात चमत्कारपूर्ण मुक्ति का परिचय भी देखने को मिलता है।... मधुदीप की लघुकथा 'चैटकथा' में उल्लिखित संवादों के मध्य उपस्थित वक्रोक्ति दृष्टव्य है–

''मैं तीन महीने से तुमसे चैट कर रहा हूँ।''

''चैट कर रहे हो या चीट कर रहे हो।''

भाषा की दृष्टि से मधुदीप की लघुकथाएँ दोष–शून्य हैं। उनमें व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध शब्दों का प्रयोग नहीं मिलता। न ही अप्रचलित शब्दों का प्रयोग मिलता है। कथ्य के अनुरूप अर्थ न देने वाले 'अनर्थ' शब्द मधुदीप के अभिव्यक्ति–कौशल्य में नहीं आते। उनकी लघुकथाओं में ऐसे शब्द भी नहीं मिलते, जिनका अर्थ देश–काल और प्रकृति के विपरीत हो। मधुदीप की लघुकथाओं में उनकी अभिव्यंजना शैली असाधारण या अद्वितीय होती है। उनकी लघुकथाओं का वस्तु–तत्व साधारण न होकर विशिष्ट होता है।

मधुदीप की लघुकथाओं में जहाँ तक विषय और शैली के प्रतिपादन का प्रश्न है, वहाँ पाश्चात्य आलोचक क्रोचे के अभिमत से जुड़कर कहा जा सकता है कि ''मधुदीप अपनी लघुकथाओं में शैली के द्वारा विषय को प्रस्तुत नहीं करते प्रत्युत उनकी लघुकथाओं में निहित विषय ही शैली के रूप में अवतरित होता है।

मधुदीप की लघुकथाओं को पढ़ने का अर्थ एक प्रकार से मधुदीप की भाषा को समझना भी है। वैसे तो साहित्य की किसी भी विधा की रचना बिना भाषा के सम्भव ही नहीं है, तथापि विभिन्न विधाओं के अभिलेखन में भाषा–विषयक व्यवहार भाँति–भाँति की कसौटी लिए होता है। मधुदीप की लघुकथाओं में उनका भाषा विषयक तेवर लघुकथा–लेखन की तहजीब में सहज, सरल और सुबोध अभिव्यक्ति की त्रिधारा बहाये हुए मिलता है।

■ 'शशि पुष्प' 74 जे/ए, स्कीम नंबर 71, इंदौर–452009, म.प्र./मो. 09407186940

डॉ. शील कौशिक

मधुदीप की लघुकथाओं में बुजुर्ग विमर्श

...21वीं सदी की जीवन शैली ने मनुष्य के सामाजिक जीवन में कुछ ऐसे परिवर्तन ला दिए हैं, जिनका असर वृद्धों पर प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।... भारतीय प्राचीन मान्यताओं के अनुसार मनुष्य जीवन के चार आश्रम गिनाए गए हैं— ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास। किन्तु तीव्र सामाजिक बदलाव तथा आधुनिक जीवनशैली ने एक और आश्रम की अवधारणा को जन्म दे दिया है और वह है वृद्धाश्रम।... वृद्धाश्रम के बढ़ते प्रचलन के अनेक कारण हो सकते हैं... अपनों की उपेक्षा, चाहे वह आर्थिक दृष्टिकोण या युवा पीढ़ी की कैरियर कॉन्शियस होने के कारण स्वार्थपरक सोच.... बदलते परिवेश के कारण आत्मकेंद्रित तथा असंवेदनशील होने के कारण.... बच्चों के विदेश में बस जाने के कारण.... निसंतान होने के कारण.... केवल पुत्रियों का होना और उनके ससुराल चले जाने पर.... वृद्धों का परम्पराओं से चिपके रहना व खुद का रूखा व्यवहार या फिर बुजुर्गों के प्रति अत्यधिक उपेक्षापूर्ण व्यवहार आदि हो।

लघुकथाओं में वृद्धावस्था का कैनवस व्यापक है।... बुजुर्गों के प्रति समाज में प्रेम, करुणा, सम्मान की भावनाओं के बीच अक्सर नकारात्मक मानसिकता के चुभते, तीखे, नुकीले शोषण की मारक यातनाएँ मिलती हैं।... मधुदीप एक संवेदनशील व्यक्ति व जीवन व्यवहारों के सजग दृष्टा हैं। वे सामाजिक जीवन के गहरे में पैठकर बुजुर्ग जीवन के अँधेरे व रोशन कोनों से संवेदित व परिचित हुए हैं।...

'वानप्रस्थ' लघुकथा में... जगदीशलाल ने एक मिल मजदूर से शुरू होकर एक छोटे से मिल मालिक बनने तक, जीवन भर जी—तोड़ मेहनत की थी। लेकिन अब वह थक चुका है। खाने की मेज पर वह परिवार के सदस्यों के बीच पूछ बैठता है, ''क्या कुछ ऐसा बाकी रह गया है, जिसमें आपको मेरी मदद की आवश्यकता हो?'' बच्चे और पत्नी इस प्रश्न से अवाक रह जाते हैं। तब जगदीश लाल पत्नी को समझाते हुए कहते हैं, ''लक्ष्मी हम अपनी उम्र का एक पड़ाव पार कर चुके हैं। अब तक की जिंदगी हमने इनके लिए जी है, अब आगे का जीवन मैं सिर्फ अपने और तुम्हारे लिए जीना चाहता हूँ।'' ... लघुकथा में जगदीश लाल स्पष्ट कहते हैं, ''नहीं बेटे! अब आपको खुदमुख्त्यार बनना होगा?'' लघुकथा का यह सकारात्मक पहलू है। पुरानी पीढ़ी अपनी सीट छोड़ेगी, तभी तो नई पीढ़ी अपनी जिम्मेदारी समझेगी और आत्मनिर्भर बनेगी।...

लघुकथा 'दौड़' के... कथानायक की यह स्वीकारोक्ति है कि सब कुछ जुटाने के चक्कर में वह इस कदर उलझा रहा कि उसे पता ही नहीं चला कि कब सब उससे दूर चले गए। दोस्त द्वारा कहे गए वाक्य— ''दौड़ना तो तुम्हें होगा ही मेरे दोस्त! मगर अब इस दौड़ की दिशा बदल दो, अब तक तुम अपने और अपनों के लिए दौड़ते रहे हो, अब से तुम दूसरों के लिए दौड़ो। देखना, तुम्हारे चारों तरफ फैला अकेलापन कैसे जादू की तरह गायब होता है।''... लघुकथा 'हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ' में नायक को अपने जीवन

से शिकायत रही है। सेवानिवृत्ति की विदाई पार्टी में जब उससे पूछा गया कि वह आगे क्या करना चाहता है, तब जीवन भर का गुबार निकालते हुए उसने कहा, ''मैं जिंदगी से खुलकर बातें करना चाहता हूँ... सिर्फ बातें करना ही नहीं चाहता, जिंदगी से अपनी बातें मनवाना चाहता हूँ... हाँ मैं जीतना चाहता हूँ।''...

लघुकथा 'टीस' में दीनदयाल और जयप्रकाश दोनों सुबह पार्क में सैर करने के बाद बेंच पर आ बैठते हैं।... दीनदयाल जयप्रकाश से बोले, "असली ज़िंदगी तो इन बच्चों के साथ ही है भाई! अवनीश आज विदेश जा रहा है, अवनीश और बहू के साथ पिंकू भी चला जाएगा।'' यहाँ पिंकू के चले जाने की टीस का जिक्र है।... लेखक ने प्रतीकों का इस्तेमाल बखूबी किया है, देखें जरा– ''दो सुंदर फूल उनके पास आकर ठिठक गए।'' ... 'उनकी अपनी जिंदगी' में विनयप्रसाद और उनकी पत्नी सेवामुक्त हो चुके हैं। उनका मत था जीवन भर दूसरों के लिए बहुत खट लिए, अब हम दोनों एक–दूसरे के लिए जिएँगे।... खाने की मेज पर बैठे विनयप्रसाद की पत्नी ने बहू से संकेत में पूछा, ''बहू! शादी को तीन साल हो गये हैं, आगे क्या विचार हैं?'' ''माँ जी! आप तो जानती ही हैं, हम दोनों नौकरी करते हैं, ऐसे में बच्चा आप सँभाल लें तो..." पत्नी बहू द्वारा अधूरे छोड़े गये वाक्य का अर्थ भली–भाँति समझती है।... उसने दृढ़ता से उत्तर दिया, ''बहू! हमने अपने बच्चों को पाला–पोसा, अच्छी शिक्षा दी और उनका शादी–ब्याह भी कर दिया। हम अपने दायित्व से मुक्त हो चुके हैं। तुम्हारी सन्तान तुम्हारा ही दायित्व होगा, यही विचारकर कोई निर्णय लेना।''... लघुकथा अनेक प्रश्नाकूल स्थितियाँ पैदा करती है।

'अविश्वास' लघुकथा में पत्नी की मृत्यु के पश्चात रमाकांत स्वयं को अकेला और लाचार समझकर बेटे के यहाँ चला गया। बेटा 25 वर्ष पूर्व घर छोड़कर चला गया था और माँ की मौत पर अब अकेला लौटा था। बेटे के पूछने पर– ''पिताजी! क्या आपने अंतिम फैसला कर लिया है कि आप हमारे साथ शहर में रहेंगे?'' ''हाँ!'' ''तो फिर हम कस्बे का मकान बेच देते हैं।'' वृद्ध की आँखों में अविश्वास तैर रहा है।... लेखक ने बड़ी सूझबूझ के साथ भाषा के कमाल से वृद्ध की स्थिति को दर्शाया है, देखिए जरा– ''पाँव कट जाने पर बैसाखी का सहारा लेना ही पड़ता है, फिर वह बैसाखी चाहे कैसी भी हो।''

एक मनोवैज्ञानिक और अनुभवजन्य तथ्य है कि आदमी उम्र से नहीं, मन से बूढ़ा व जवान होता है।... लघुकथा 'साठ या सत्तर से नहीं' में रामनारायण सुबह की चाय का घूँट भरते हुए पत्नी लीलावती को जब यह कहते हैं, ''लीलावती! अब हम बूढ़े हो गए हैं।'' ''ऐसा क्यों सोचते हैं आप! अभी तो आपने साठ ही छुआ है।'' ''आदमी साठ या सत्तर से बूढ़ा नहीं होता!''

पत्नी के आशंकित होने पर वे बताते हैं कि बेटे ने लंदन में ही शादी कर ली है और अब वह शायद ही लौटेगा? इस एक वाक्य ने पत्नी को सोचने पर मजबूर कर दिया और वह भी अपनी राय बदलकर पति की राय में शामिल हो जाती है और कहती है, ''हाँ, बूढ़े तो हम हो ही गये हैं।''...

पति–पत्नी का परस्पर प्यार उम्र बढ़ने पर और भी गहरा जाता है। और वे अक्सर अपने बीते पलों को दोबारा जीने का लोभ संवरण नहीं कर पाते हैं। लघुकथा 'पत्नी मुस्कुरा रही है' में इसे देखा जा सकता है। लघुकथा 'पत्नी मुस्कुरा रही है' इसी पर आधारित है।...

बुजुर्ग कई बार आवेश में बहते चले जाते हैं और फिर उन्हें अपना बुरा–भला कुछ भी नहीं सूझता। 'सन्यास' लघुकथा में मधुदीप जी ने ऐसे बुजुर्गों की आँखें खोलने का प्रयास किया है, जो साधु–संतों के अंधमोह में पड़कर सन्यासी बन जाना चाहते हैं।...

जब औलाद बुजुर्गों को अपमानित करती है... उन्हें बेबस और लाचार समझती है... तब बुजुर्ग के स्वाभिमान को ठेस पहुँचती है।... तब वे घुट–घुटकर जीने की बजाय, अपने अधिकारों का उपयोग कर लेने से गुरेज नहीं करते। लघुकथा 'हेकड़' में दरोगामलजी आखिर में कानून का सहारा लेकर ऐसे उदंड बेटे को पुलिस के हाथों पकड़ा देते हैं।...

'मुक्ति' लघुकथा में रामबाबू की जीवटता देखकर सब लोग हैरान थे, ''न जाने यह किस मिट्टी का बना है।''... शोक मनाने आए एक व्यक्ति ने कहा, ''भाई रामबाबू! दुखी मत हो, भाभी मरी नहीं है, उसे तो मुक्ति मिली है।'' ''हाँ भाई! यह तो पता नहीं कि उसे मुक्ति मिली या नहीं, मगर हम–सबको तो अब मुक्ति मिल ही गई है।''... कैंसर जैसी बीमारी की वजह से उम्मीद से नाउम्मीदी अधिक होने पर तथा खालीपन का अहसास करते हुए भी रामबाबू ने पत्नी के प्रति अपना कर्तव्य का निष्ठा से पालन किया। इसीलिए उनके मुँह से यह सत्य उद्घाटित होता है कि हम–सबको भी अब मुक्ति मिल ही गई है।...

जिसकी एक आवाज पर सारा घर एकदम सतर्क हो जाता था.... जो परिवार का महत्वपूर्ण सदस्य था.... जो परिवार की धुरी था.... उसके सेवानिवृत्त होने पर जैसे उसका अपना कोई अस्तित्व रहा ही नहीं। परिवार में पत्नी, बहू, बेटों की प्राथमिकताएँ पहले हो गई। मानो वह सेवानिवृत्त न हुआ, जैसे नकारा, बेकार तथा लाइन में सबसे पीछे का आदमी हो गया।... लघुकथा 'कल ही की बात है' में सहज ही इस टीस की पुष्टि हुई है।... लघुकथा 'निश्चय' में पिता अकेलेपन से घबराकर बेटे से फोन पर बात करते हैं, परन्तु बेटा बात नहीं करना चाहता। अन्त में जगदीशलाल फैसला ले, उसे बता देते हैं कि वह अपना सबकुछ वृद्धाश्रम को देकर वहाँ शिफ्ट हो रहा है। अब बेटा चौंका, "नहीं पापा, ऐसे भी कहीं होता है?" "मैं लावारिस नहीं मरना चाहता।" यह जीवन की एक दर्दनाक सच्चाई है, जो वृद्ध को कठोर निर्णय लेने पर मजबूर कर देती है।... लघुकथा 'अबाउट टर्न' में... 'रामप्रसाद जी एक बेंच पर गुमसुम बैठे हैं....।' पत्नी की मृत्यु के बाद एकाकीपन उन्हें सालता है। वे सारा दिन अपनी 'स्टडी' में पुस्तकों में गुम बैठे रहते हैं। ढम...ढम सामने मिलिट्री ग्राउंड में हो रही सैनिकों की परेड़ में बज रही ड्रम की आवाज उनके सिर पर हथौड़े की तरह बजती है.... ''बात मदद करने की नहीं है। बल्कि सच यह है कि आप हमारा अधिकार महरी को देना चाहते हैं.... आप महरी से जुड़ते जा रहे हैं....'' सूरज थोड़ा और ऊपर आ गया है। तपिश थोड़ी बढ़ने लगी है। 'अबाउट टर्न....' सामने मिलिट्री ग्राउण्ड में सेनानायक की तेज आवाज गूँज उठी है.... वे उठे और उनके पाँव पार्क से निकलकर 'अनुभव घर' वृद्धाश्रम की ओर मुड़ गये। यहाँ पाठक प्रश्नाकूल स्थिति में आ जाता है कि क्या इन समस्याओं का 'वृद्धाश्रम' ही एकमात्र और अंतिम विकल्प बचा है? क्या दो पीढ़ियों की सोच के अंतर को पाटा नहीं जा सकता या समन्वय का रास्ता नहीं निकाला जा सकता?...

'सन्नाटों का प्रकाश पर्व' सम्भ्रान्त बुजुर्गों की दास्तान है।... ऊँचे परकोटों से घिरे

आलीशान बंगले.... वहाँ पसरा सन्नाटा, एकाकीपन माली और कामवालियों के आने पर टूटता है और फिर से बेताल की तरह पसर जाता है।... दिवाली पर जब वे कामगर कॉलोनी में जाकर उनके घरों को मोमबत्तियों, दीयों और बिजली की लड़ियों से सजाते हैं। बच्चों के साथ गोल–गोल घूमते हुए ताली बजाते, पटाखे छुड़ाते हैं, तो उनके परकोटों में निश्छल खिलखिलाहट फैल जाती है।...

निष्कर्षस्वरूप मधुदीप की प्रस्तुत लघुकथाओं के मध्यवर्गीय पुरुष पात्र जाने–पहचाने तथा विश्वसनीय हैं। तमाम चिंता, उलझन, तनाव, परेशानी, कुंठा, संत्रास, अवसाद, घुटन, कलह और द्वंद्व जैसी अनुभूतियों के बावजूद, वे वृद्ध अवश्य हैं पर जीवट तथा सजग हैं। वे वृद्धावस्था को अंतिम सीढ़ी अवश्य मानते हैं, परंतु जीवन का अन्त नहीं। एकाकी या सेवानिवृत्ति होने पर वे जीवन का ध्येय ढूँढ़ने व दिशा तय करने का बोध रखते हैं।... मधुदीप की लघुकथाओं में छोटे–छोटे व चुस्त संवाद तथा सांकेतिक रूप से कहने का हुनर दिखाई देता है।... लघुकथाओं की भाषा सरल, सहज, कथ्यानुरूप व पात्रानुकूल है। शब्दों की मितव्ययिता के कारण कसावट व अर्थवहन की क्षमता, मधुदीप की लघुकथाओं की विशेषता है।... देशकाल व वातावरण के संबंध में सन्नाटों का प्रकाश पर्व, मुक्ति तथा अबाउट टर्न लघुकथाओं में लेखक के अभिव्यंजना कौशल की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। सन्नाटों का प्रकाश पर्व में उपमा–अलंकार व प्रतीक के रूप में अद्‌भुत दृश्यात्मकता है तो अबाउट टर्न व मुक्ति में प्रतीकात्मकता देखी जा सकती है।

उपरोक्त वर्णित लघुकथाओं की संरचना में 'टीस' के दीनदयाल, 'अविश्वास' के रमाकांत को छोड़कर वृद्धों के उस वर्ग के नेपथ्य को सामने लाने का प्रयास हुआ है, जो संघर्षशील हैं, नवीन सोच और समझ को अंगीकार करते हैं, दृढ़प्रतिज्ञ हैं, अवांछनीय बोझ न बनकर समन्वयवादी दृष्टि रखने वाले उद्दात व सकारात्मक मनोवृत्ति के हैं। (लेखिका द्वारा स्वसंक्षिप्तीकृत)

■ मेजर हॉउस, 17, हुड्डा सेक्टर–20, पार्ट–1, सिरसा–125056, हरियाणा / मो. 09416847107

शराफ़त अली ख़ान

लघुकथा के समीक्षा–बिन्दु : एक महत्वपूर्ण कृति

लघुकथा मेरे दृष्टिकोण से मानव–जीवन के विस्तृत फलक में समय–समय पर घटित अनुभूतियों का दर्पण–मात्र है। जिन क्षणों में हमें समाज के विभिन्न व्यक्तियों, स्थानों एवं संस्थानों से साक्षात्कार होता है, इनमें कुछ क्षण ऐसे होते हैं जो हमें अनायास चौंका देते हैं, विस्मित कर देते हैं, उत्तेजना उत्पन्न करते हैं, हमारे मर्म को भेदकर भावुक कर देते हैं अथवा बोध कराते हैं। इन्हीं हजारों क्षणों में से कुछ चुनिंदा क्षणों को जब हम साहित्यिक भाषा में पिरोते हैं, तब लघुकथा जन्म लेती है।

यूँ तो आठवें दशक में लघुकथा अपने पूरे कलेवर, उद्देश्य और सार्थकता लिए पाठकों के समक्ष आई। किन्तु नवें दशक में लघुकथा अपने स्वर्णिम काल तक पहुँच गई। इस दौर में लघुकथा पर सर्वाधिक कार्य हुए। बिहार, राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली और उत्तर प्रदेश में सैकड़ों की संख्या में लघुकथाकार प्रकाश में आए। इसी दशक में सारिका,

शुभ तारिका, मिनीयुग, कहानीकार, सुषमा, षट्मुखी, सानुबन्ध, सुपर ब्लेज, अणुव्रत, कुंदनशील, हंस, शब्दवर, कादम्बिनी, जगमग दीप–ज्योति, समाज कल्याण, अमर उजाला, दैनिक जागरण, नवसत्यम, विश्वमानव, दैनिक ट्रिब्यून आदि सैकड़ों पत्र–पत्रिकाओं ने लघुकथाओं को प्रमुखता से प्रकाशित किया तथा समय–समय पर महत्वपूर्ण उल्लेखनीय और कालजयी लघुकथा–विशेषांक निकाले। इस काल में ही अनेकानेक स्तरीय लघुकथा संकलन प्रकाशित हुए। हाल ही में लघुकथा विधा पर एक सार्थक समीक्षात्मक पुस्तक 'लघुकथा के समीक्षा–बिन्दु' प्रकाश में आयी है।

लघुकथा की समीक्षात्मक पुस्तक 'लघुकथा के समीक्षा–बिंदु' का मुख्य उद्देश्य है कि लघुकथा की समीक्षा के लिए बिंदु निश्चित किए जा सकें। हालांकि इस पुस्तक में लघुकथा के 11 विद्वान समीक्षकों द्वारा लघुकथा–समीक्षा पर दिये गए बिंदुओं पर सभी विद्वान एकमत नहीं हो सकते हैं, फिर भी यह सही दिशा में एक शुरुआत है। वरिष्ठ लघुकथाकार, सम्पादक श्री मधुदीप जी का ऐसा विश्वास है।

पुस्तक के प्रथम आलोचक श्री पुरुषोत्तम दुबे जी की दृष्टि में ''लघुकथा की रचनात्मकता के आगे आकारगत, विचारगत, शिल्पगत, भाषागत इत्यादि श्रेणियों के (बैरियर) सीमा अथवा नाका खड़ा कर देना चाहते हैं ताकि बेसबब लिखी जा रही लघुकथाओं पर नकेल कसी जा सके।''

पुस्तक की दूसरी समीक्षक डॉ. अनीता राकेश जी यथार्थ पर बात करती नजर आती हैं। उनके अनुसार ''यह सच है कि जब रचनाएँ आकार लेती हैं तो उनकी क्रियाशीलता, तत्व एवं स्वरूप निश्चित नहीं होते। यह सब रचना की पूर्णता के बाद विवेचन/विश्लेषण के मुद्दे बनते हैं।'' डॉ. ध्रुव कुमार का मानना है कि ''लघुकथाएँ कभी भी एक जैसी नहीं रहीं। समय–समय पर यह अपने में बदलाव करती रही हैं।''

डॉ. उमेश महादोषी जी का कथन है कि ''समकालीन लघुकथा में लेखन और विमर्श दोनों की दृष्टि से यह समय सर्वाधिक व्यस्तताओं से भरा हुआ है।... ऐसे समय में लघुकथा के बारे में किए जाने वाले किसी गम्भीर चिंतन के लिए जगह बनाने में विश्वास की गुंजाइश भले हो, लेकिन लघुकथा के बारे में व्यापक दृष्टि से सोचने और समझने के लिए सर्वाधिक उपयोगी समय है यह, जब हमारे सामने सभी तरह की चीजें मौजूद हैं और अन्य विधाओं के सापेक्ष सर्वाधिक सृजन और सम्बन्धित गतिविधियाँ लघुकथा के क्षेत्र में ही हो रही हैं।''

लघुकथा विधा के प्रख्यात समीक्षक निशान्तर का कहना है कि ''लघुकथा को प्रभावशाली बनाने के लिए शैली चुस्त तथा शिल्प सुगठित होना चाहिए। चुस्त शैली में सुगठित शिल्प के द्वारा ही लघुकथा के कथानक को एक धारारेखी प्रवाह में प्रस्तुत किया जा सकता है और तभी शर्तरहित संप्रेषणीयता उत्पन्न होगी।''

लघुकथा के समर्थ आलोचक श्री भगीरथ जी का विचार है कि ''आलोचना हमें रचना समझने की दृष्टि देती है। रचना के गहरे अर्थों तक हमें ले जाती है। रचना का अर्थ विस्तार करती है। रचना के सामाजिक सरोकार हमारे सामने प्रत्यक्ष करती है। जहाँ रचनाकार की रचनाशीलता विराम लेती है, वहीं से आलोचक का कार्य प्रारम्भ होता है।''

'लघुकथा के समीक्षा–बिन्दु' ग्रंथ में डॉ. रूप देवगुण जी के अनुसार ''मैंने इस

आलेख में लघुकथा के आवश्यक समीक्षा–बिन्दु शीर्षक, विषय वस्तु, कसाव, लघुता, एक घटना, काल–दोष का न होना, अन्त, भाषा, शैली, उद्देश्य आदि का वर्णन किया है और इसके साथ लघुकथा के अपेक्षित समीक्षा–बिन्दु, कथोपकथन, व्यंग्य, नवीनता, पात्र और चरित्र–चित्रण, देशकाल और वातावरण की भी बात की है। ये तत्व लघुकथा की कसौटी में आ जाते हैं।''...

लघुकथा के मनीषी डॉ. सतीशराज पुष्करणा जी के कथनानुसार ''लघुकथा की समीक्षा करते समय कथानक/विषयवस्तु को केंद्र मानकर चलना चाहिए। मेरे विचार से इन बातों को ध्यान में रखकर किसी भी लघुकथा की समीक्षा, मूल्याँकन एवं उसके प्रति न्याय आसानी से कर सकते हैं।''

लघुकथा समीक्षा के सम्बन्ध में डॉ. बलराम अग्रवाल का स्पष्ट कथन है कि ''लघुकथा लेखकों की समीक्षा, समीक्षक की निजी सैद्धान्तिक मान्यताओं, निजी स्वीकृति के अनुरूप सही और गलत हो सकती है। लेखों की समीक्षा करते हुए तो आपको पता होना चाहिए कि लेखक ने कब क्या कहा था। तथ्य सामने लाइए और बताइए कि सही क्या है, क्या गलत।''

हिन्दी लघुकथा की समीक्षा के मर्म की गम्भीरता पर विचार करते हुए समीक्षक श्री सिद्धेश्वर जी का कथन– ''हिन्दी लघुकथा की समीक्षा करते समय लघुकथा का पूरा परिदृश्य सामने आ जाता है और इन परिदृश्यों के बीच किसी रचना को लघुकथा की मान्यता देना या खारिज कर देना या श्रेष्ठ बता देना आसान काम नहीं है।'' लघुकथा समीक्षा के पीछे एक सार्थक बहस छोड़ जाता है।

पुस्तक की अन्तिम समीक्षक डॉ. शील कौशिक जी के अनुसार ''आधुनिक हिन्दी लघुकथा के समीक्षा–बिन्दुओं के संदर्भ में प्रस्तुत उपरोक्त अध्ययन, विश्लेषण एवं मनन के उपरांत कहा जा सकता है कि जैसे सभी उँगलियों से मिलकर एक ताकतवर मुट्ठी बनती है वैसे ही उपरोक्त वर्णित समीक्षा–बिंदुओं को संगठित करके सम्पूर्ण एवं सशक्त लघुकथाशास्त्र बनाया जा सकता है। यह इतना समृद्ध और विश्वसनीय होना चाहिए कि जिसे साहित्य के अन्य सिद्धातों की कसौटी पर भी परखा जा सके।''

■ 343, फाइक इन्क्लेव, फेज–2, पो. रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली–243006, उ.प्र./मो. 07906849034

शशि बंसल गोयल

मधुदीप की लघुकथाओं में मानवीय संवेदना

...संवेदना मानवीय सम्बन्धों का मजबूत आधार–स्तम्भ है। इसी के माध्यम से मनुष्य परिवार समाज और राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन समुचित ढँग से कर पाने में सफल होता है। संवेदना का सूचकांक बताता है कि अमुक व्यक्ति कितने उच्चांक पर अपने परिवार और समाज से जुड़ा है व उसके प्रति समर्पित है। संवेदनशील मनुष्य के अंदर ही मानवता की भावना साकार रूप में विद्यमान रहती है।...

यूँ तो संवेदना प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक है, परन्तु जब बात एक साहित्यकार

या कलमकार की हो, तब तो संवेदनशील मन प्रथम अनिवार्य शर्त हो जाती है। इसी शर्त की पृष्ठभूमि पर ही तो वह समाज के प्रत्येक प्राणी; चाहे वह मनुष्य हो, पशु या पक्षी हो, उसके दर्द और अनुभूति को समझ सकेगा और उसे अनुभूत कर अपनी कलम के माध्यम से उसे आवाज दे सकेगा। प्रेमचंद ने कहा है कि "जो दलित है, पीड़ित है, सन्त्रस्त है, उसकी साहित्य के माध्यम से हिमायत करना साहित्यकार का नैतिक दायित्व है। साहित्यकार अपनी संवेदना का प्रयोग केवल प्रकाशित होने या लिखने के लिए नहीं करता बल्कि इसके पीछे उसका उद्देश्य समाज के भीतर भी वही संवेदना की लहर प्रभावित करना होता है, ताकि मनुष्य सुप्तावस्था से उठकर उसकी मुक्ति के कारण की खोज कर सके।...

लेखकीय धर्म की ईमानदार निर्वहनता के लिए आवश्यक है कि उसकी लेखनी में समाज की वेदना, अव्यक्त चेतनापूर्ण सम्प्रेषणीयता के साथ अभिव्यक्त हो। अपनी पैनी दृष्टि से मानवीय मूल्यों की गहरी पड़ताल करने व लेखकीय धर्म के कुशल निर्वहन में मधुदीप पूर्ण सफल रहे हैं। उनकी लघुकथाओं के आधार पर उन्हें मानवीय संवेदना का लघुकथाकार कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। कारण कि उनकी सभी कथाएँ मानवीय सरोकारों के प्रति चेतना जागृत करती हैं। कोई भी परिस्थिति या रोजमर्रा के जीवन में घटने वाली छोटी–छोटी घटनाएँ उनकी सूक्ष्म दृष्टि से बच नहीं पाई हैं। उन्होंने समाज की मानवीय संवेदना के स्तर पर उत्पन्न विसंगतियों को अपनी लघुकथाओं के माध्यम से संप्रेषणीयता के साथ पाठकों के समक्ष पर परोसा है। उन्होंने मानव जीवन के छोटे–छोटे प्रसंगों–परिस्थितियों को अपनी लघुकथाओं का विषय बनाकर स्वयं के भीतर की जागृत संवेदना से पाठकों को भी सुसुप्तावस्था से जगाने का प्रयास किया है। मानव–जीवन के छुए–अनछुए पहलुओं को स्पर्श करते हुए सहजता के साथ भाषा–शिल्प, प्रतीक, बिम्ब स्पष्टता आदि को भी कुशलता से अभिव्यंजित किया है।...

किसी भी समाज के अस्तित्व की कल्पना मानवता के बिना करना असम्भव है। मानवीय नैतिक मूल्यों में आ रहे क्षरण ने न केवल संवेदना को तिरोहित किया है, सुन्दर–स्वस्थ समाज की परिकल्पना को भी छिद्रित करने में कोई कसर न छोड़ विद्रूप समाज की ओर पग बढ़ा दिए हैं। मधुदीप की अधिकांश लघुकथाएँ मानवीय संवेदना के अच्छे व बुरे दोनों रूपों को प्रदर्शित करती हैं और कहती हैं कि आधुनिकता, व्यवसायिकता और स्वार्थ की अन्धी दौड़ ने परिवार और समाज से मानवीय संवेदनाएँ समाप्त करके भले रख दी हैं, लेकिन निराशा के घने अन्धकार को चीरने के लिए जैसे सूरज की एक किरण काफी है, ऐसे ही अनेक असंवेदनशील हृदयों के बीच एक संवेदी हृदय इस बात की तसल्ली प्रदान करता है कि समाज के वर्तमान ढाँचे से भी भविष्य की सुखद मानवीय संवेदनाओं की लौ हर हृदय में जगाई जा सकती है।

मधुदीप की कथाओं से गुजरते हुए पाया कि उनकी लेखन–शैली हटकर है। वह एक ही ढर्रे पर अपनी लघुकथाएँ शुरू नहीं करते या कह सकते हैं कि अनेक स्थानों पर वह लीक से हटकर भी नजर आते हैं। बावजूद इसके वे कहीं भी विधा के तय मानकों को तोड़ते हुए अंशमात्र भी नहीं दिखते। अपनी कलम के साथ प्रयोग करना जहाँ उनके लेखकीय मन को तृप्त करता होगा, वहीं पाठकों की पठनीय रोचकता को भी कई गुना

बढ़ाता है। पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व को उकेरने में और इसमें अपने बुद्धिकौशल का प्रयोग करने में भी वे सिद्धहस्त हैं। महादेवी वर्मा ने कहा है कि, ''साहित्य में मनुष्य की बुद्धि और भावना इस प्रकार मिल जाती हैं, जैसे धूपछाँही वस्त्रों में दो रंग के तार, जो अपनी–अपनी भिन्नता के कारण ही अपने से भिन्न एक तीसरे रंग की सृष्टि करते हैं। हमारी मानसिक वृत्तियों की ऐसी सामंजस्यपूर्ण एकता साहित्य के अतिरिक्त और कहीं सम्भव नहीं है।'' वाकई बुद्धि और भावना का संयोजन संवेदना के अभाव में असम्भव है। इस कसौटी पर मधुदीप पूर्णतः खरे उतरे हैं। उन्होंने संवेदना और स्वानुभूत सत्य को ईमानदारी के साथ कलमबद्ध किया है।

सामाजिक सजगता एवं सरोकार इनके रचना–कर्म का आधार रहे हैं। ये अपनी कथाओं में हर शोषित व पीड़ित के साथ न्याय करते नजर आते हैं। कथा में जितनी यथार्थ अनुभूति होती है, वह उतनी ही तेजी से पाठकों के हृदय में जगह बना लेती है। यही कारण है कि मधुदीप की लघुकथाएँ पाठकों को अपनी ओर खींचती हैं। उन्होंने सामाजिक विसंगतियों, पारिवारिक मूल्यों के पतन, राजनीति में अवसरवाद, भ्रष्टाचार, शोषण आदि अनेक समस्याओं को अपनी कथा में संवेदनात्मक शब्द दिए हैं। यदि विषयानुसार संवेदना को वर्गीकृत किया जाए तो सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक व मानवीय– सभी विषय उनकी कलम से गले मिले हैं। समयबोध व मानवीय संवेदना से युक्त उनकी कथाएँ पाठकों के हृदय के भीतर पहुँचकर उन्हें स्पंदित करने में पूर्ण सफल रही हैं। उन्होंने समय के साथ–साथ कथ्य को भी वर्तमान स्वरूप में नए विषयों के साथ उठाया है। उन्होंने न केवल मानव मन की आंतरिक विकृतियों को रेखांकित किया है वरन् अच्छाइयों को भी चिन्हित करने से नहीं चूके हैं। मधुदीप की कथाएँ केवल कथानक में ही नहीं बल्कि शीर्षक और भाषा–शैली की भूमिका के लिहाज से भी महत्वपूर्ण हैं। प्रतीकों का कब और कैसे प्रयोग करना है, इसमें वे सिद्धहस्त हैं। सांकेतिकता के सहारे वे बड़ी बात भी बहुत आसानी से कह जाते हैं। अपने आसपास के वातावरण को देखना, उसे समझना और फिर अपनी संवेदनाओं से जोड़कर पाठकों को परोसना बहुत बड़ी कला है और मधुदीप इस आधार पर बहुत बड़े कलाकार हैं। एक ओर वे मानवीयता के चरम बिंदु को रेखांकित करते हैं तो दूसरी ओर इसके उलट रूप को। जैसे एक माँ की कोख से पैदा संतानें अच्छी और बुरी दोनों हो सकती हैं, उसी तरह एक ही उद्‌गम से उपजी संवेदनाएँ भी द्विरूपी हो सकती हैं। यकीनन दोनों पर आपसी वातावरण का प्रभाव अधिक पुख्ता होता है। भारत देश की उत्पत्ति के मूल में संवेदना ही थी, जहाँ ऋषि–मुनियों ने अपने भीतर की संवेदना के सहारे समाज और राष्ट्र की नींव रखी। मनुष्य को निज स्वार्थ से ऊपर उठकर परहित के विषय में सोचने की दिशा दी, जिसे साहित्यकारों ने अग्रेषित किया। वर्तमान में संवेदना की यही अलख जगाने का कार्य मधुदीप कर रहे हैं। उनकी अधिकांश लघुकथाएँ संवेदना के दोनों रूपों को रात–दिन की तरह सहज रूप से साथ लेकर चलती हैं। भोगवादी संस्कृति में जब आज मानवीय संवेदनाएँ क्षरित होती जा रही हैं; मशीनें, कलपुर्जे, रोबोट, कंप्यूटर आदि मनुष्य के अधिक करीब हो गई हैं। जाहिर है आत्मीयता को तो मरना ही है। मानवीय मूल्यों का ह्वास होना ही है। तभी अब हम विचलित नहीं होते किसी भी अमानवीय घटना पर। इसी विद्रूपता को मधुदीप ने यथार्थ

की गहरी अंतर्दृष्टि से देखा और अनुभूत किया है। तत्पश्चात् संवेदना की नम और उपजाऊ भूमि पर आसीन होकर अपनी भावनाओं व विचारों को प्रभावशाली रूप में अनुस्यूत किया है।

अन्त में यही कहूँगी कि हृदय की गहराइयों में पनपते अन्तर्द्वन्द्व व अनुभूति की कसौटी पर मधुदीप की लघुकथाएँ मार्मिक, प्रभावपूर्ण और दूर तक सम्प्रेषित होने वाली हैं एवं पुरजोर ढँग से मानवीय मूल्यों की स्थापना करती नजर आती हैं।

■ जे–61, गोकुलधाम, भोपाल–462038 / मो. 07697045571

दिव्या शर्मा

मधुदीप की लघुकथाओं के प्राण हैं 'बिम्ब व प्रतीक विधान'

साहित्य में सौन्दर्य की उपस्थिति का अपना महत्व है। बिना सौन्दर्य कोई भी रचना अपना प्रभाव पाठकों के मस्तिष्क पर नहीं डाल सकती।...

यहाँ सौन्दर्य से मेरा तात्पर्य किसी के रूप के गुणगान करना कतई नहीं है। रचना में सौन्दर्य का अर्थ होता है उसमें संवेदना और विसंगतियों को उभारने की क्षमता का होना। इसके लिए भाषाई कौशल, व्याकरण का ज्ञान व शब्दों का असीमित भण्डार होना आवश्यक है। शब्दों के भण्डार को छोड़ दें तो लेखक के अन्दर शिल्प और कथ्य की कुशलता हो तो सीमित शब्दावली के साथ भी वह अपनी रचनाओं से आकर्षण उत्पन्न करने की योग्यता रखता है।

लघुकथा के निर्माण एवं उसके चरमोत्कर्ष तक पहुँचने तक अनेक साथी उसके साथ चलते हैं जिनमें कथानक से लेकर कथ्य, शिल्प से लेकर शैली तथा भाषाई सौन्दर्य प्रमुख हैं। इसके साथ ही लघुकथा के अन्य घटकों में प्रमुख बिन्दु बिम्ब व प्रतीक हैं। इनका प्रयोग जहाँ कथा के सौन्दर्य में वृद्धि करता है, वहीं कथा में संदेश की सार्थकता को पूर्ण करता है।...

कथा के विषय पर विचार करने के बाद लेखक का अगला पड़ाव कथानक के कथ्य व उसकी शैली पर विचार करना होता है। मधुदीप जी की लघुकथाओं को मैंने जितना पढ़ा है उनमें यही पाया है कि उनकी कथाओं में बिम्ब का प्रयोग सहजता से किया गया है और स्थूलता से मुक्त रहा है। सामान्यतः लघुकथा में चाक्षुस अर्थात दृश्य–बिम्ब, श्रव्य–बिम्ब, घ्राण बिम्ब, स्पर्श बिम्ब व स्वाद बिम्ब आदि का उपयोग किया जाता है।

मधुदीप जी की लघुकथा 'हिस्से का दूध' चाक्षुस बिम्ब का उत्तम उदाहरण है। इस कथा में जिस प्रकार से कथ्य चल रहा है, उसे पढ़कर पाठक अपने नेत्रों से दृश्य की कल्पना कर लेता है।...

ऐसी ही एक लघुकथा नमिता सिंह का जिक्र मैं जरूर करना चाहूँगी। इस लघुकथा में दृश्य का संतुलित प्रयोग है। कथा का प्रत्येक दृश्य खुद–ब–खुद अपना संपूर्ण चित्रांकन कर रहा है।

मधुदीप जी ने जिस प्रकार के विषय चुने हैं, वे विचारोत्तेजक होने के साथ–साथ प्रश्न भी खड़े करते हैं।...

'लौटा हुआ अतीत' एक ऐसी प्रयोगधर्मी लघुकथा है, जिसमें नायिका की आत्मग्लानि का मानसिक द्वन्द्व दिखाया गया है। इस कथा में कोई दृश्य अलग से नहीं लिखा गया वरन् नायिका शाहीन के माध्यम से जो व्यक्त किया गया उसकी कल्पना पाठक खुद करेगा। जो भी शाहीन के साथ बीता वह अपनी अनुभूति के माध्यम से समझेगा।

'गन्दगी' एक ऐसी लघुकथा है जिसमें आपको आक्रोश, दया, संवेदना सब दिखाई देते हैं।... बिम्ब–योजना में मूल विषय को ही इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है, जिससे कि हमारी कल्पना शक्ति को उत्तेजित करती हुई अनुभूतिगम्य हो सके। इस कथा में पाठक अनुभूति कर रहा है बच्ची के दर्द की, उसकी मजबूरी की और उसके मन के आक्रोश की।...

प्रतीक के माध्यम से कह देना भाषा के सौन्दर्य की एक विशेषता है। 'समय का पहिया घूम रहा है' एक श्रेष्ठ बिम्बात्मक लघुकथा है। लेखक ने जिस बारीकी से दृश्यांकन किया है, वह काबिले तारीफ है। अलग शिल्प व शैली के साथ लिखी गई इस लघुकथा का कथ्य प्रभावी है।

'लौहद्वार' शीर्षक से लिखी गई लघुकथा न केवल प्रतीक–विधान की दृष्टि से उत्कृष्ट है वरन इसकी बिम्ब–योजना भी प्रशंसनीय है।...

'हाँ, मैं जीतना चाहता हूँ' एक आम आदमी के सपने और उन सपनों का सपना ही बने रहना। उसकी पीड़ा अपनी इच्छाओं का गला घोंटकर जीवन व रिश्तों के लिए समझौता। उससे दूर निकलने की जद्दोजहद और इच्छा। सिर्फ अपने दिल की सुनने की चाहत। 'मैं जिंदगी से बातें करना चाहता हूँ', इस पूरी पंक्ति में बातें प्रतीक हैं नायक के मनोभाव, उसके कामनाओं की संतुष्टि की। कथा में यह प्रतीक जबरन नहीं बनाया गया। यह तो स्वतः बन गया जान पड़ता है और यह जो स्वतः भाव उत्पन्न होता है न! वही लघुकथा में निहित शृंगार है। शृंगार कोई सुंदर शब्दों की बनावट, सौन्दर्य का वर्णन नहीं होता। लघुकथा का शृंगार उसके भाव हैं।...

लघुकथा 'अस्तित्वहीन नहीं' में जहाँ चाक्षुस बिम्ब का प्रयोग किया गया है, वहीं स्पर्श बिम्ब का प्रयोग कथा की स्वाभाविकता में वृद्धि करता है।

एक संवाद के माध्यम से हम स्पर्श बिम्ब के प्रयोग को समझेंगे–

''साले! पेट भर गया लगता है....।'' नशे में बुदबुदाता हुआ जैसे ही वह युवक आगे बढ़ा.... तड़ाक!!!.... रिक्शेवाले का भारी हाथ उसके गाल पर पड़ा।

इस संवाद में थप्पड़ की आवाज स्पर्श और श्रवण बिम्ब का उदाहरण है। इसमें थप्पड़ से चोट की अनुभूति और उसकी आवाज की अनुभूति इस एक शब्द 'तड़ाक' ने पाठकों को दी।

इसी प्रकार रस और बिम्ब में आपसी सम्बन्ध गहरा होना चाहिए। यह बात ध्यान देने योग्य है और यही रस मधुदीप जी की रचनाओं में नजर आता है।...

'चैटकथा', 'महानगर का प्रेम–संवाद', 'मुक्ति', 'विकल्प', 'वे दोनों' लघुकथाओं में कल्पना बिम्ब के माध्यम से लेखक ने कथा को लिखा है।...

कथा में बिम्ब तब ही सार्थकता लाते हैं जब बिम्ब का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया हो। जबरन ठूँसे हुए बिम्ब कथा को कुरूप बना देते हैं। किन्तु मधुदीप जी

की कथाओं में बिम्ब स्वाभाविक रूप से विद्यमान हैं। लेखक के व्यक्तित्व में निःस्वरता, नीरसता और निस्तेजता का यह साक्षात्कार दर्द की चेतना को जागृत कर रहा है।

वास्तव में देखा जाए तो प्रत्येक शब्द व अर्थ का अपना एक बिम्ब होता है। एन्द्रिय रूप में इतना अधिक हो चुका होता है कि बिम्ब उभर नहीं पाता; जबकि बिम्ब की उपस्थिति प्रत्येक शब्द में है। 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त!', 'तुम तो सड़कों पर नहीं थे'– इन दोनों कथाओं को पढ़कर यह कहा जा सकता है कि ये कथाएँ बिम्ब के बिना अपूर्ण होतीं।

मधुदीप की प्रत्येक कथा बिम्ब के साथ ही लिखी गई है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कथाओं में बिम्ब स्वतः उपस्थित हैं।... 'मुआवजा' शीर्षक के अनुरूप कथा है। जैसा वेश है वैसी भाषा का इस्तेमाल रचना में हुआ है और भाषा के सही प्रयोग ने बिम्ब का संसार रच पाठकों के लिए सारे दृश्य उपलब्ध करवा दिए हैं।

'डायरी का एक पन्ना', 'समय बहुत बेरहम होता है'– इन दोनों ही कथाओं की शैली अलग है। 'समय बहुत बेरहम होता है' कथा को तो लेखक ने पाठकों के ऊपर ही छोड़ दिया है कि उसे कुछ भी समझें। परन्तु मैं इस रचना में भी प्रतीक और बिम्ब खोज रही हूँ। प्रतीक भावनाओं को जागृत करते हैं और यह कथा उन पाठकों की भावना को जरूर जागृत करेगी, जिन्होंने अपने पूर्व प्रेम के कोमल भाव को हृदय में कहीं अब भी छिपाए रखा है।

'उजबक की कदमताल', 'अजन्मा लोकतंत्र', 'अतुल ने ठीक कहा था', 'टीस', 'हथियार' आदि ऐसी लघुकथाएँ हैं जहाँ प्रतीक और बिम्ब के प्रयोग से प्रभावोत्पादकता उत्पन्न हो रही है।...

'सन्यास' कथा में आया बिम्ब पाठक के मानस पर उभरता है। यह उभार पाठक के ज्ञान, अनुभव व स्मृति पर आधारित होता है। इसलिए ही स्वामी रामाधार जी का व्यक्तित्व पाठक के मन में कथा पढ़ते ही उभरने लगता है।...

'टीस' शीर्षक की लघुकथा का उदाहरण भी यहाँ बिम्बवादी लघुकथा में देना चाहूँगी। बुजुर्गों के अकेलेपन, उनके हृदय में छिपे भय को बड़ी कुशलता से चित्रित किया है और यह जो चित्रित करना होता है, वही बिम्ब–विधान है।

'नजदीक, बहुत नजदीक' लघुकथा कई मायने में सफल लघुकथा है। अपने डर पर अपनी हिम्मत से काबू करती विजया आखिरकार जीत जाती है और अपने कदमों के तले डर को रौंदकर सुनसान पगडंडी को पार कर लेती है।...

'टोपी' शीर्षक से लिखी गई लघुकथा में टोपी के माध्यम से शक्ति को इंगित किया है। नेताजी अपने सिर पर टोपी नहीं पाते, वे देखते हैं कि भीड़ के प्रत्येक सिर पर टोपी है। नेताजी चुनाव हार जाते हैं क्योंकि अब उनकी टोपी उतर गई। इसमें टोपी शक्ति का प्रतीक है।...

'खुरण्ड' लघुकथा में एक गरीब आदमी के जीवन में मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी असम्भव होती है। वहाँ यदि कोई खुशी का ऐसा अवसर आ जाए जिसमें खर्चा करना जरूरी है तो वह खुशी उसके लिए परेशानी बन जाती है।... घाव प्रतीक है उसकी परेशानी का और खुरण्ड परेशानी दूर होने की आशा का। इसमें बिम्ब की उपस्थिति प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं दे रही लेकिन इसमें एंद्रियबोधगम्य बिम्ब है।

कुछ लघुकथाएँ संवाद शैली में लिखी गई हैं जिनमें पात्रों के संवाद पाठक के समक्ष दृश्य उत्पन्न कर रहे हैं। 'भय', 'नियति', 'चैटकथा', 'टोपी', 'साठ या सत्तर से नहीं'

ऐसी ही लघुकथाएँ हैं, जिनमें बिम्ब कल्पना के माध्यम से मस्तिष्क में दृश्य रचने का कार्य कर रहा है।...

'मुर्दाघर' शीर्षक से लिखी गई लघुकथा में जहाँ चाक्षुस बिम्ब की उपस्थिति है, वही घ्राण बिम्ब भी साथ है। इस लघुकथा को पढ़ते हुए अस्पताल और हड़ताल, मरीजों की दिक्कत, दुःख–चीत्कार, आत्मग्लानि सबका चित्रण हमारी आँखों के सामने चलचित्र की तरह चलने लगता है। शीर्षक प्रतीक है चिकित्सा–व्यवस्था में घुस आए व्यवसाय व संवेदनहीनता का। इस कथा का अन्त सुखद है।

'अस्पताल के प्रेत' इसका शीर्षक ही उत्सुकता पैदा कर रहा है। 'प्रेत' शब्द आते ही दिमाग में एक भय का भाव उत्पन्न होता है।...

लघुकथा में दृश्य के चित्रांकन के लिए बिम्ब उसी प्रकार सहायक होते हैं जिस प्रकार काव्य में। इसलिए एक लघुकथाकार के तौर पर मैं बिम्ब–विधान को लघुकथा में एक आवश्यक तत्व मानती हूँ। बिम्ब व प्रतीक योजना साहित्य का महत्वपूर्ण भाग है। आधुनिक साहित्य, विशेषतया काव्य में बिम्ब का प्रयोग काव्य को सर्वप्रिय व सरल बना रहा है। रचना को पाठक की अनुभूतियों का साथ मिलता है तो वह रचना प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचती है।

प्रतीक और बिम्ब को भाषा में सम्मिलित कर मधुदीप जी ने अपनी कथाओं में प्राण संचरित किए हुए हैं।...

■ म. नं. 4, गली नं. 9–ए, अशोक विहार, फेज–2, निकट हनुमान मंदिर, गुरुग्राम–122001, हरियाणा / मो. 09717064358

डॉ. संध्या तिवारी

मधुदीप की लघुकथाओं में स्त्री विमर्श

...स्त्रियाँ हमेशा ही हर क्षेत्र में हाशिए पर धकेल दी गई हैं। अस्मिताओं को पुनः केंद्र में लाने और उनकी मानवीय गरिमा को पुनर्प्रतिष्ठित करने का महाभियान स्त्री लेखकों के साथ–साथ पुरुष लेखकों में देखने को मिलने लगा है।

स्त्री विषयक विमर्श पर कलम चलाने वालों में मधुदीप एक जाना–माना नाम है। आइये अपने पाठकों को ले चलते हैं मधुदीप की लघुकथाओं में नारी विमर्श की यात्रा पर।

मधुदीप की लघुकथाओं में स्त्री अस्मिता के विभिन्न रूपों के दर्शन होते हैं। उनके स्त्री पात्र दशकों पहले जैसे अबोले भी हैं और भविष्य की सदियाँ नाप चुकने के बाद की तरह मुखर भी। अतीत में बनी लकीर के फकीर भी और समय के साथ स्वर से स्वर मिलाते अत्याधुनिक भी।

मधुदीप जी की लघुकथा 'शासन' में एक बीमार कमजोर स्त्री पात्र, जिसका कि पति चाय की दुकान रखता है, हर ग्राहक की एक आवाज़ पर चाय बनाकर देना उसका काम है। वहीं बीमार पत्नी के अनुनय–विनय पर भी वह उसे एक प्याली चाय बनाकर नहीं देता। ...इस लघुकथा में महिलाओं की सदियों से चली आ रही बदतर स्थिति और पुरुष के झूठे खोखले अहम् को लक्ष्य किया गया है तथा सदियों से चली आ रही स्त्री

की यथास्थितिवादिता को ही बरकरार रखा गया है लेकिन तंज के बतौर। लेखक इस लघुकथा में यही उजागर करना चाहता है कि एक पुरुष अघोषित ही अपने को स्त्री का स्वामी और स्त्री को उसकी दासी मान लेता है। परन्तु यदि इस लघुकथा की अन्दर की ध्वनि सुनी जाए तो लेखक की मंशा अवश्य ही कहीं न कहीं इस स्थिति को बदलने की रही होगी, तभी उसने उसके समकक्ष एक ग्राहक को खड़ा कर ठीक वैसी ही स्थिति उत्पन्न की है।...

मधुदीप की लघुकथाओं में स्त्री–विमर्श अपनी मूल चेतना में स्त्री को पराधीन बनाने वाली पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था का विश्लेषण करता है। यह स्त्री को दोयम दर्जे का प्राणी मानने का विरोध करता है और स्त्री को एक जीवंत मानवीय इकाई समझने का संस्कार देता है।...

मधुदीप की लघुकथाओं में इस तरह के चित्र भी उभरकर आते हैं जैसे कि उनकी एक लघुकथा है 'आधी सदी के बाद भी'। स्त्रियों के अन्दर जो एक असुरक्षा की भावना होती है जिससे कि वह एक पुरुष के साये में रहना पसंद करती हैं जिससे कि उनमें एक निश्चिंतता का भाव आ जाये। चाहे वह दो हजार पचास ही क्यों न आ जाए।...

'स्त्री विमर्श' स्त्री अस्मिता और स्त्री चेतना का ही दूसरा रूप है। इस दृष्टि से गहन धर्मवाला यह शब्द मुक्ति या स्त्री स्वातंत्र्य के साथ–साथ स्त्री की अस्मिता, चेतना एवं स्वाभिमान को भी अपने में समेट लेता है। स्त्री का अपने शरीर या जीवन जीने के तरीके के बारे में अपने को कर्ता बनाने का प्रयास या जीवन के स्वस्थ पक्ष को ग्रहणकर आत्मनिर्णय की ताकत हासिल करना स्त्री विमर्श के अन्तर्गत आता है।...

स्त्री विमर्श का मुख्य सरोकार समाज से है। सामाजिक, सांस्कृतिक समस्याओं, द्वंद्वों और संघर्षों की अभिव्यक्ति इसमें होती रही है।... इसी को व्याख्यायित करती लघुकथा है 'गंदगी'। इसमें कथाकार ने एक निचले दर्जे की लड़की को स्त्रियों की यथास्थितिवाद से हटकर अपने साथ हुए अन्याय का बदला लेते दिखाया है, जो पाठक के मन में जोश भर देता है।

बारात में दूल्हे पर पैसे वारे जा रहे हैं जिन्हें बच्चे लूट रहे हैं। एक सिक्का नाली में गिरते हुए मरियल–सी लड़की उसे लूटने पहुँची तभी किसी बराती के भारी–भरकम जूते वाले पैर ने बच्ची के हाथ को कुचल दिया। लड़की दर्द से कराह उठी। बाराती ने अपनी गलती की भरपाई के लिए जेब से निकालकर एक सिक्का उसके गंदले कीचड़ सने हाथ पर धर दिया। लड़की ने वह सिक्का फेंक दिया और अपने कीचड़ सने हाथ उसके पालिश किये जूतों में रगड़कर उससे बदला ले लिया।...

स्त्री की जैविक अवधारणा को उसकी पहचान के साथ जोड़ दिया गया। भौतिक रूप में स्त्री को भले ही कोई ठोस सम्मान न प्राप्त हो पर उसे भारत में देवी बनाकर पूजा जरुर गया। वह परम्परावादी भारतीय समाज में सम्मान के बोझ तले लदी हुई कराहती रहती है और अपनी मुक्ति की आकाँक्षा से ग्रसित रहती है। पर जिस पुरुष समाज में सारे भौतिक संसाधन पुरुष के हाथ में हों वहाँ पर स्त्रियों के लिए समता और स्वतंत्रता की बात करना बेमानी ही होगी। लघुकथा 'मेरा बयान' मधुदीप जी की ऐसी ही लघुकथाओं में गिनी जा सकती है, जिसमें सारी उम्र एक स्त्री अपनी अस्मिता, अपनी स्वतंत्रता की बात करती हुई मर जाती है। लेकिन वह अपने में जीवित है, क्योंकि उसकी चेतना जीवित है। वह मरी नहीं है। जबकि समाज उसे मरा हुआ मान रहा है। जबकि वह समाज रूपी रेंगते

कीड़े को अपनी पीठ पर से हटाना चाहती है लेकिन क्या करे उसका हाथ ही नहीं पहुँच रहा। अस्तित्व और अस्मिता बोध से जुड़ी बहुत क्रांतिकारी कथा है 'मेरा बयान'।...

लघुकथा 'ममता' में स्त्री का वही सदियों पुराना चिर–परिचित रूप देखने को मिलता है।... इस लघुकथा में माँ के सदियों पुराने पारम्परिक भावों की कहीं कोई तब्दीली नहीं दिखती। दुनिया का चाहे कितना ही बाजारीकरण हो जाये लेकिन ममत्व के भाव का विघटन संभव ही नहीं। यह जब तक दुनिया रहेगी तब तक ऐसा ही रहेगा।...

लघुकथा 'उनकी अपनी जिंदगी' में सास–बहू के बीच के वार्तालाप से समझा जा सकता है कि परिपक्व सास केवल वय से परिपक्व है वरन् समझ से कहीं ज्यादा पकी हुई है।... इस लघुकथा में नारी को न केवल स्वावलम्बी दिखाया गया है अपितु निर्णय करने वाली क्षमतावान स्त्री के रूप में भी विभूषित किया गया है। लघुकथा पूरी तरह आधुनिक स्त्री की पक्षधरता बयाँ कर रही है।

मधुदीप की लघुकथाओं में स्त्री से जुड़े विभिन्न शेड नजर आते हैं, जहाँ एक ओर स्त्री स्वावलम्बन है, ममत्व है, वहीं किशोरवय की गलतियाँ भी हैं। लघुकथा 'छलावे' में नीरा की मनःस्थिति एक आत्ममुग्धा की है। अपनी युवावस्था में अपनी सुन्दरता के घमंड में अमित जैसे साधारण नैन नक्श के परन्तु दिल की गहराइयों से उसे प्यार करने वाले को ठुकराकर वह किसी और से शादी करती है लेकिन शादी के दो ही साल बाद वह उसे छोड़कर विदेश चला जाता है। अकेले जीते–जीते वह थक गई है ऐसे में उसे अमित की याद आती है और सुखद सँयोग होता है अमित उसकी जिंदगी में वापिस आ जाता है। एक सुखांत लघुकथा है 'छलावे'। स्त्री पात्र में उसकी आत्ममुग्धता की बुनावट रची–बसी है।...

नारी हमेशा पुरुषों द्वारा ही नहीं छली जाती, स्त्रियों द्वारा और यदा–कदा खुद के द्वारा भी या कि अपनी ही ज़िद और नासमझी के चलते भी वह समाज के भेड़ियों का शिकार बनती रहती है। लघुकथा 'लौटा हुआ अतीत' में शान्ति जिसने कि माँ की इच्छा के विरुद्ध शाहीन बनना कुबूल किया लेकिन अनवर ने दो ही साल में उसे तलाक दे दिया। शाहीन से फिर शान्ति बनी कि जिंदगी में बीस साल बाद इतिहास ने फिर खुद को दोहराया। उसकी बेटी भी विजातीय शादी के लिए उससे विद्रोह कर बैठी। शान्ति को सिवाय पश्चाताप के कुछ नहीं सूझता। उसके हाथ ईश्वर के आगे बार–बार जुड़ जाते हैं कि– हे ईश्वर मेरे गुनाहों की सजा मेरी बच्ची को न दे!... चोटी के लेखक भी सरलता के साथ–साथ अपनी कहन की कला को साधकर रखते हैं, इसीलिए वे आला दर्जे के लेखकों की श्रेणी में आ पाते हैं।

हालांकि लघुकथा की भाषा इकहरी होती है लेकिन उसमें गुथी कथा की अन्तर्दृष्टि, अंतर्विरोधों की अनुभूति से ही सम्भव है, नारी विषयक लघुकथाओं में लेखक की वह अन्तर्दृष्टि स्पष्ट होकर सामने आई है और कथाकार अपनी बात पाठकों तक पहुँचा पाने में सफल हुआ है।...

कुल मिलाकर मधुदीप की नारीप्रधान लघुकथाएँ दबी कुचली नारी का प्रतिबिंबन न कर सहज ही एक चर्चा की राह खोलती नज़र आती हैं जोकि भविष्य के लेखकों के लिए नींव का निर्माण करतीं हैं।

■महिला पुलिस चौकी के सामने, निकट सलौनी हॉस्पीटल, यशवंतरी रोड, पीलीभीत, उ.प्र./मो. 07017824491

ज्योत्स्ना कपिल

मधुदीप की लघुकथाओं में राजनीतिक विमर्श

लघुकथा साहित्य की जब भी बात की जाएगी, वरिष्ठ लघुकथाकार मधुदीप जी के अतुलनीय योगदान को याद किया जाएगा।... लघुकथा के क्षेत्र में वह एक लब्ध–प्रतिष्ठित हस्ताक्षर तो हैं ही, उन्होंने लघुकथा के उत्थान व विस्तार के लिए जितना योगदान दिया है, वह अनूठा है। ... मधुदीप जी ने अपनी लघुकथाओं में जीवन के अनेक प्रसंगों को चित्रित किया है। आपकी लगभग सभी लघुकथाओं को मैंने पढ़ा है और उन कथाओं की संवेदनशीलता, उनकी तीक्ष्णता, उनके कटाक्ष से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाई। ...मधुदीप जी ने राजनैतिक विसंगतियों पर भी अपनी कलम काफी खुलकर चलाई है। उनकी रचनाओं में राजनैतिक पक्ष बहुत प्रभावी ढंग से उभरकर आये हैं। ...यहाँ मैं उनकी कुछ प्रमुख राजनैतिक लघुकथाओं की चर्चा कर रही हूँ।

'समय का पहिया घूम रहा है' मधुदीप जी की सबसे चर्चित एवं प्रयोगधर्मी लघुकथा है। यह लघुकथा प्रारम्भ होती है जहाँगीर के दरबार से, जहाँ एक फिरंगी सूरत में तिज़ारत की इजाज़त माँगता है, फिर ईस्ट इंडिया कम्पनी का बढ़ता व्यापार और शक्ति, भारत की गुलामी, स्वतंत्रता संघर्ष, आजादी एवं फिर से विदेशी निवेश की नीति को प्रोत्साहन। अर्थात लगता है कि बरसों की गुलामी से भी देश में कोई सबक नहीं लिया गया।

इसी प्रकार लघुकथा 'तुम इतना चुप क्यों हो दोस्त!' में राजधानी के एक कॉफी हाउस में बैठक जमी है और छः बुद्धिजीवी, सर से सर मिलाए हुए बहस में उलझे हुए हैं। वे देश की वर्तमान स्थिति की बात करते हुए सबको खूब गरिया रहे हैं परंतु एक साथी मौन रहता है। जब वे उसके मौन का कारण पूछते हैं तो वह उत्तर देता है कि वह कहने के बजाय कुछ करने में विश्वास रखता है।

'राजनीति' शीर्षक की लघुकथा में दिखाया गया है कि किस प्रकार एक चतुर राजनीतिज्ञ अपनी चालों से एक हारी हुई बाजी को भी जीत में बदल देता है।

इसी प्रकार 'रात की परछाइयाँ' में मतदाताओं को शराब और नोट के उत्कोच से खूब लुभाने का प्रसंग है, और हमारा वोटर जरा–सी रिश्वत पाकर, अपनी आस्था और स्वामिभक्ति बदल लेता है। हमारी व्यवस्था में रिश्वत व बेईमानी दीमक की तरह लगी है, और आम आदमी का ईमानदारी से विश्वास उठ चुका है।

'जनपथ का चौराहा' इस धारणा पर केन्द्रित है कि हुकूमत कभी गलत नहीं होती, वह जो कहे, वही सही है और जो नकारे, वह गलत है। परंतु जब आम आदमी, आजादी की हुंकार लगाता है, तो उसकी उत्तरोत्तर तेज होती हुंकार से राजपुरुष काँप उठता है। इस लघुकथा में राजनीतिज्ञों को आम आदमी की सहनशीलता और उसके धैर्य की अधिक परीक्षा न लेने और उसकी शक्ति का सम्मान करने का संकेत दिया गया है।

इसी प्रकार एक लघुकथा 'तनी हुई मुट्ठियाँ' है। इसमें लोकल म्यूनिसिपैलिटी के दफ़्तर में, वे चार, लिपिक श्रेणी में नये भर्ती हुए थे। नई भर्ती, नया जोश, गर्म खून,

अव्यवस्था के ख़िलाफ़ लड़ने का उबाल। फिर वह धीरे–धीरे आला अधिकारियों की राजनीतिक चालों में फँसकर अपना कुछ कर दिखाने का उत्साह खो बैठते हैं। तभी तीन नई हुई भर्तियाँ उनमें से चौथे, हताश होते आदमी में, नया जोश भर देती हैं और वह नवीन ऊर्जा से व्यवस्था के खिलाफ जंग में जुट जाता है।

लघुकथा 'चिड़िया की आँख कहीं और थी' में दिखाया गया है कि चुनावी मौसम में किस प्रकार राजनीतिज्ञ अपना पैंतरा बदलते हैं, कैसी चालें चली जाती हैं। ताकि जनता का भावात्मक रूप से दोहन किया जा सके, उससे अपना उल्लू सीधा किया जा सके।

मधुदीप जी की एक और लघुकथा है 'हालात काबू में हैं'। जिसमें दिखाया गया है कि कैसे एक दबे हुए तबके के युवक के पढ़–लिखकर काबिल बन जाने पर वह उच्च वर्ग की आँख की किरकिरी बन जाता है। कुचला वर्ग कहीं सिर न चढ़ जाए, इस सोच के साथ उसकी हत्या कर दी जाती है और बहाना बनाया जाता है कि उसने एक लड़की पर हाथ डाला था, जबकि हकीकत में वह लड़की उसे जानती तक न थी।

'निदान' शीर्षक लघुकथा में बिल्ली व बंदर वाली कहानी से उद्धरण लेते हुए बताया गया है कि किस प्रकार दो बिल्लियों की लड़ाई में एक चतुर बंदर का दाँव लग गया और वह सत्तासीन हो गया। स्वयं को नगर सेवक घोषित करके जनता के दुःख–दर्द जानने निकला वह अपने सत्ता पक्ष की आर्थिक स्थिति से दुःखी होकर उनकी आय चार गुना बढ़ा देता है और जनता इस प्रतीक्षा में कि इसी प्रकार उनके संसाधन भी बढ़ेंगे, बैठी रह जाती है। इस प्रकार छिछली राजनीति का चेहरा सामने आता है, कैसे राजनीतिक पार्टियाँ बार–बार कोई बड़ा लालच देकर जनता को मूर्ख बनाती रहती हैं।

इस श्रंखला की अगली लघुकथा है 'अजन्मा लोकतंत्र'। इसमें छोटे कबीले एवं उनके सरदार को वंशवादी राजनीति के बिम्ब की तरह प्रयोग किया गया है। उस कबीले में नई बयार के तहत लोग अपने ही किसी व्यक्ति को अपना सरदार चुनने का निर्णय लेते हैं। वर्तमान सरदार उन्हें मदिरा के नशे में डुबाकर चालाकी से उनकी बात मानकर बताता है कि उसमें देवता का अंश होने के कारण ही वह उनके सुख–दुःख दूर कर पाया। इसी प्रकार उसके बेटे में भी देवता का अंश है। लोग तुरंत जयकार करते हुए उसके बेटे को खुशी से अपना सरदार चुन लेते हैं। इस तरह जनता मदान्ध होकर मूर्ख बनती है और सिर्फ नाम के ही लोकतंत्र में, अप्रत्यक्ष रूप से राजशाही ही चल रही है।

एक और लघुकथा है 'जागृति', जिसमें अँधेरे में डूबे एक गाँव की कहानी है। जिसमें विशेष अवसरों पर जलाया जाने वाला एकमात्र पेट्रोमेक्स जल रहा है। पिछला चुनाव जीते दल–बल के साथ आये विद्युत मंत्री भाषण दे रहे हैं। तभी एक बूढ़ा कहता है कि यह पिछली बार कहकर गए थे की जब जीतकर आयेंगे तो बिजली लाएंगे, चूँकि यह गाड़ी में आये हैं तो जरा देखो, क्या बिजली को उसमें भरकर लाये हैं? और नेताजी के वादा पूरा न करने के कारण पसीने छूट जाते हैं। उन्हें समझ में आ जाता है कि आज का मतदाता बहुत जागरूक है। उसे अधिक मूर्ख नहीं बनाया जा सकता।...

इस प्रकार मधुदीप जी की लघुकथाएँ हमारे जनतंत्र के मध्य उभरी, घटिया राजनीतिक विसंगतियों पर करारा प्रहार करती हैं। इन्हें पढ़कर यह विश्वास भी पुख्ता

शेष पृष्ठ 79 पर

श्री मधुदीप जी की साहित्यिक यात्रा के कुछ पड़ाव

←यात्राओं में मधुदीप जी जीवनसंगिनी शकुन्तदीप जी के साथ →

प्रज्ञा मंच पर अमर साहित्यकार विष्णु प्रभाकर जी के साथ मधुदीप जी (एक पुराना चित्र) ↓

डॉ. बलराम अग्रवाल व डॉ. संध्या तिवारी के साथ मधुदीप जी ↓

'मधुदीप की 66 लघुकथाएँ व उनकी पड़ताल' के विमोचन का अवसर ↓

प्रबोध कुमार गोविल व कुमार नरेन्द्र के साथ मधुदीप जी ←

लघुकथा पर साहित्य अकादमी के कार्यक्रम में रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', सुभाष नीरव व अन्य के साथ मधुदीप जी →

सुकेश साहनी एवं रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' के साथ मधुदीप जी ⬇

एक कार्यक्रम में मधुकांत, अशोक जैन व डॉ. बलराम अग्रवाल के साथ मधुदीप जी ⬇

⬅एक कार्यक्रम में डॉ. सतीश राज पुष्करणा, डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति व श्री योगराज प्रभाकर के साथ मधुदीप जी

पुस्तक मेले में दिशा प्रकाशन के स्टाल पर मधुकांत के साथ मधुदीप जी ⬇

⬅ एक रेलयात्रा के दौरान डॉ. बलराम अग्रवाल एवं कान्ता रॉय के साथ मधुदीप जी एवं भाभीजी शकुन्त दीप।

दिल्ली पुस्तक मेले में दिशा प्रकाशन के स्टाल पर भगीरथ परिहार व श्याम सुन्दर अग्रवाल के साथ पड़ाव और पड़ताल का लोकार्पण ⬇

दिल्ली पुस्तक मेले में दिशा प्रकाशन के स्टाल पर डॉ. बलराम अग्रवाल, लालित्य ललित एवं सुभाष नीरव जी के साथ मधुदीप जी ⬇

⬆ मानापाला, पिंगलवाड़ में आयोजित 25वें लघुकथा सम्मेलन (2016) में साथी लघुकथाकारों के मध्य मधुदीप जी

⬆ दिल्ली पुस्तक मेले में दिशा प्रकाशन के स्टाल पर भगीरथ परिहार एवं डॉ. उमेश महादोषी के साथ मधुदीप जी

⬅ दिल्ली पुस्तक मेले में वनिका प्रकाशन के स्टाल पर एक लघुकथा संकलन का लोकार्पण करते डॉ. जितेन्द्र जीतू, डॉ. नीरज शर्मा, डॉ.अशोक भाटिया, योगराज प्रभाकर, डॉ. सुधांशु आदि के साथ मधुदीप जी

एक अवसर पर डॉ. कमल चौपड़ा, अनिल शूर आजाद, मुकेश शर्मा आदि के साथ मधुदीप जी

एक अवसर पर नयी पीढ़ी के अनेक लघुकथाकारों के मध्य मधुदीप जी

पृष्ठ 75 (.....में राजनीतिक विमर्श/ज्योत्स्ना कपिल) **का शेष...**

हो जाता है कि बात चाहे कितने ही आदर्शों की की जाये, पर खूबसूरत मुलम्मे के भीतर वही सड़ी–गली व्यवस्था है। मधुदीप जी समाज की प्रत्येक विसंगति पर पैनी नज़र रखते हैं, उन पर कटाक्ष व प्रहार करते हैं। अपनी लघुकथाओं द्वारा, मधुदीप जी समाज की नब्ज़ को बहुत ही कुशलता से चीन्हते हैं। उनकी प्रयोगवादिता, रचनाधर्मिता सदैव नवीनता की खोज करती है तथा उन्हें लघुकथाकारों की भीड़ से अलग करती है। लेखक का धर्म मधुदीप जी भलीभाँति जानते हैं। (लेखिका द्वारा स्वसंक्षिप्तीकृत)

■ 18–ए, विक्रमादित्य पुरी, स्टेट बैंक कॉलोनी, बरेली–243003/मो. 09412291372

आवरण पृष्ठ 32 (पड़ाव की पड़ताल/डॉ. मधुकान्त) **का शेष...**

पर डाली। मुझे सोया हुआ समझकर वह इत्मीनान से गुनगुनाता हुआ मेरे लिए चाय बनाने लगा। चाय बनाकर उसने मूविंग टेबल मेरे सामने कर दी, ''लो अंकल जी, चाय पियो।''

मैं तो शरीर में था ही नहीं, कैसे कुछ बोलता। अगली बार वह कुछ ऊँची आवाज में बोला और फिर मुझे जगाने के लिए जैसे ही हाथ लगाया तो मेरा शरीर एक ओर को लुढ़क गया। वह घबरा गया। भागकर उसने नर्स को बुलाया... भागदौड़... कोशिश... परंतु मेरा शरीर तो निस्तेज हो चुका था।

कोरोनाकाल की त्रासदी में जैसे–तैसे दाह संस्कार का कार्यक्रम सम्पन्न कराया गया। घर पर आकर पंडितजी को बुलाकर अस्थियाँ विसर्जन तथा क्रियाकर्म को निश्चित किया। कार्यक्रम निश्चित करते हुए भी परिवार में शेष रह गये लोगों की ललचाई दृष्टि मेरी सम्पत्ति पर ही घूम रही थी। लाखों रुपयों की पुस्तकों से भरे गोदाम को, जिसे मैंने जी–जान से सहेजा था, हिस्से के मकान को, घर के सामान को और इन सबसे बढ़कर अपने ऑफिस में रखी अमूल्य निधि को मैं लुटता देखता रहा... बहुत बेबस... एकदम लाचार...

जिन पड़ावों तक मैं नहीं पहुँच पाया, उनकी भी पड़ताल करने वाला कोई न कोई जरूर आगे आएगा, मुझे पूरा विश्वास है।

■ डॉ. अनूप बंसल 'मधुकान्त', 211–एल, मॉडल टाउन, डबल पार्क, रोहतक, हरि./मो. 09896667714

।।मधुदीप का लघुकथा सृजन।।

{मधुदीप जी की प्रस्तुत लघुकथाएँ उनके विभिन्न संग्रहों में संगृहीत हैं। चूकि इनमें से कुछेक लघुकथाओं के किसी संग्रह में प्रकाशन के बाद भी उन्होंने कुछ शाब्दिक परिवर्तन किए हैं, इसलिए हमने लघुकथाओं के अंतिम बार संगृहीत रूप को ही प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस दृष्टि से दो लघुकथाओं– 'भ्रम–भंग' एवं 'मन्दी' को 'मेरी चुनिन्दा लघुकथाएँ' से तथा शेष सभी को 'मधुदीप : लघुकथा सृजन के विविध आयाम' ग्रंथ से चुना गया है।}

01. ऐसे

रात के गहराते अन्धकार में दो मित्र पार्क की सुनसान बेंच पर गुमसुम बैठे थे। इससे पूर्व वे काफी देर तक बहस में उलझे रहे थे। इस बात पर तो दोनों सहमत थे कि अब इस दुनिया में जिया नहीं जा सकता; इसलिए मरना बेहतर होगा। मगर मरें कैसे? काफी विचारने के बाद भी दोनों को आत्महत्या का कोई ढँग उपयुक्त नहीं लगा था।

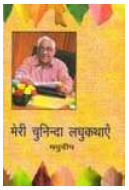

''सुनो....!'' एक ने खामोशी तोड़ी।

''हूँ....''

''मेरी मानोगे?''

''क्या....?''

''क्यों न हम जिंदगी से लड़कर मरें।''

कुछ देर बाद दोनों मजबूती से एक–दूसरे का हाथ थामे; एक ओर बढ़े जा रहे थे।

02. हिस्से का दूध

उनीदी आँखों को मलती हुई वह अपने पति के करीब आकर बैठ गई। वह दीवार का सहारा लिए बीड़ी के कश ले रहा था।

''सो गया मुन्ना....?''

''जी! लो दूध पी लो।'' सिल्वर का पुराना गिलास उसने बढ़ाया।

''नहीं, मुन्ना के लिए रख दो। उठेगा तो....।'' वह गिलास को माप रहा था।

''मैं उसे अपना दूध पिला दूँगी।'' वह आश्वस्त थी।

''पगली बीड़ी के ऊपर चाय–दूध नहीं पीते। तू पी ले।'' उसने बहाना बनाकर दूध को उसके और करीब कर दिया।

तभी बाहर से हवा के साथ एक स्वर उसके कानों से टकराया। उसकी आँखें कुर्ते की खाली जेब में घुस गईं।

''सुनो, जरा चाय रख देना।''

पत्नी से कहते हुए उसका गला बैठ गया।

03. डायरी का एक पन्ना

31 मई, 2015, दोपहर 2 बजे

फिर वही मनहूस–सी सुबह थी। फिर वही अवसादग्रस्त–सा मन था। फिर वही निरर्थकता का–सा बोध था। फिर वही अनजाना–सा भय था कि आज का दिन भी हाथ

से फिसल जाएगा और मैं कुछ नहीं कर पाऊँगा।

हाँ, पिछले तीन महीने से मेरे साथ हर रोज यही हो रहा है। जहाँ तक मुझे याद है, मैं आखिरी बार 28 फरवरी की शाम को उस समय हँसा था जब मैं सेवामुक्त होकर कार्यालय से अपने परिवार सहित घर लौटा था और वहाँ मेरे मित्र हाथों में गुलदस्ते लिए मुस्कुराते हुए मेरे स्वागत में खड़े थे।

उत्कृष्ट साहित्य पढ़ने का मुझे बेहद शौक रहा है। पूरे चालीस साल मुझे शिकायत रही थी कि कार्यालय और परिवार की व्यस्तताओं के बीच मैं अपना यह शौक कभी पूरा न कर सका। सेवामुक्ति से पहले ही मैंने अपनी मेज पर हिन्दी साहित्य की दस बेहतरीन पुस्तकें सजाकर रख ली थीं कि अब पूरे मन से इन्हें पढ़ूँगा। लेकिन सच मानो, इन तीन महीनों में एक लाइन भी नहीं पढ़ पाया था। पढ़ने के लिए बार–बार पुस्तक उठाता मगर व्यर्थताबोध इस कदर सवार हो जाता कि आँखें बन्द हो जातीं और मैं कुर्सी से उठकर पलंग पर लेट जाता।

''नहीं, इस क्रम को तोड़ना ही होगा। इस तरह तो मैं अनजाने ही मृत्यु की ओर अग्रसर हो रहा हूँ।'' बहुत दृढ़ता से मैंने सोचा था और मैं बरामदे में आकर खड़ा हो गया था। मैं अपने आपको और अपने इरादों को मजबूत कर रहा था, ढुलमुल तरीके से नहीं बल्कि अपनी पूरी शक्ति के साथ। आश्चर्य, पूरी शक्ति खर्च करने के बाद भी आज मैं थकान महसूस करने की बजाय जैसे हल्का होकर हवा में तैर रहा था। अरे! यह क्या? मैं तो बदल रहा था.... स्वयं को पहचानने का प्रयास कर रहा था मैं। हाँ, यह मैं ही तो था. ... यह चेहरा मेरा ही तो था! सामने वाश–बेसिन पर लगे शीशे में यह मेरा ही प्रतिबिंब तो था।

''जरा थैला देना, मैं सैर को जा रहा हूँ, लौटते हुए फल और सब्जियाँ लेता आऊँगा।''

मेरा इतना कहते ही घर के सभी सदस्य मुझे घेरकर खड़े हो गए थे। उनके चेहरों पर आश्चर्य लिपटा हुआ था और मेरे होठों की मुस्कान चौड़ी होती जा रही थी। हाँ, आज पूरे तीन महीने बाद मेरे चेहरे पर मुस्कुराहट उगी थी। मुझे विश्वास होने लगा था कि मेरा आज का दिन व्यर्थ नहीं जाएगा।

आज मैं बहुत खुश हूँ। मैंने आज अपनी मेज पर रखी दस पुस्तकों में से एक 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' उठाकर उसमें से 30 लघुकथाएँ पढ़ ली हैं।

मैं हाथ जोड़कर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि मेरे आने वाले दिन शुभ हों।

04. नमिता सिंह

हँसता हुआ नूरानी चेहरा, काली जुल्फें रंग सुनहरा.... जी हाँ, आप नमिता सिंह के बारे में बेशक यह जुमला उछाल सकते हैं मगर उसके व्यक्तित्व को किसी भी सीमा में बाँधने से पहले उसके जीवन में एक ही दिन में घटी इन तीन घटनाओं पर अवश्य ही गौर कर लें।

यह पिछले सप्ताह की बात है। नमिता सिंह कार्यालय जाने के लिए रिक्शे में बैठकर मेट्रो की तरफ जा रही थी। सरेराह एक मनचले ने अपनी बाइक रिक्शे के आगे अड़ा दी।

''रिक्शे को छोड़कर मेरी बाइक पर आ जाओ, फुर्र–से दफ्तर पहुँचा दूँगा।''

उम्मीद के विपरीत वह कूदकर रिक्शा से उतरी और बाइक के आगे जा खड़ी हुई।

''पेट्रोल है बाइक में....?''

सुनकर युवक का हक्का–बक्का रह गया और इसके बाद जो झन्नाटेदार झापड़ उसके गाल पर पड़ा कि दिन में ही उसकी आँखों के सामने तारे नाच उठे।

कार्यालय में पहुँचकर नमिता सिंह ने अपना कंप्यूटर ऑन किया तो कुछ मैसेज उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उसने इधर–उधर देखा, पूरा कार्यालय व्यस्त था। हाँ, मिस्टर चक्रधर की निगाहें उसकी मेज की तरफ उठी हुई थीं।

''हेलो मिस्टर चक्रधर! कैसे हैं आप?'' उसकी सीट पर पहुँचकर नमिता सिंह ने कहा तो चक्रधर की मुस्कान चौड़ी हो गई।

''तो आप मुझे प्रपोज करना चाहते हैं?'' उसने अपनी आँखें उसकी आँखों में डाल दी।

''आप इजाजत दें तो।'' चंद्रशेखर ने कहा तो अवश्य लेकिन उसकी आँखों की चुभन अपनी आँखों में महसूस कर रहा था।

''भाभी जी को तलाक दोगे या फिर धर्म–परिवर्तन का इरादा रखते हो?''

''क्या....!'' बस एक शब्द।

''मिस्टर चक्रधर! यह कार्यालय है, होश में रहा करो। आपके सारे मैसेज मेरे कंप्यूटर में सुरक्षित हैं।'' इससे पहले कि दूसरी मेजों की निगाहें उस तरफ उठें, वह अपनी सीट पर जा चुकी थी।

शाम को घर के ड्राइंग रूम में गहमागहमी थी। चन्द्रशेखर अपने माता–पिता के साथ नमिता सिंह को देखने आया हुआ था। चाय पी जा चुकी थी। हाँ, हूँ.... सब कुछ लगभग तय हो चुका था। शगुन लेने–देने की तैयारी चल रही थी कि तभी नमिता सिंह की आवाज पर सब कुछ ठहर गया।

''चंद्रशेखर जी, मैं नहीं जानती कि मेरे माता–पिता और आपके माता–पिता के मध्य क्या बात हुई है मगर इस विवाह के लिए मेरी एक शर्त है।'' नमिता सिंह ने कहा तो सभी की निगाहों में एक प्रश्न आ गया।

''हमारा विवाह आर्य समाज मंदिर में होगा और बिना किसी दान–दहेज के होगा। हाँ, एक बात और....''

सभी निगाहें उत्सुकता में उठी रहीं।

''आप और मैं– दोनों ही अपने माता–पिता की इकलौती सन्तान हैं। स्वाभाविक है, आप अपने माता–पिता का पूरा दायित्व वहन करेंगे। मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। हाँ, मैं इतना अवश्य चाहूँगी कि आप मुझे भी मेरे माता–पिता का दायित्व वहन करने की स्वीकृति देंगे।'' नमिता सिंह के कहने के साथ ही अब निगाहें बाहर जाने के दरवाजे पर अटक गई थीं।

अब आप चाहें तो नमिता सिंह पर ये जुमला बेशक उछाल सकते हैं– हँसता हुआ नूरानी चेहरा, काली जुल्फें रंग सुनहरा....।

05. छोटा बहुत छोटा

एक सम्भ्रान्त–सी कॉलोनी में बनी रामनिवास मिश्र की छोटी–सी कोठी का आज गृह प्रवेश है। रामनिवास मिश्र ने गरीब परिवार में जन्म अवश्य लिया था मगर उसमें उससे सतत संघर्ष का माद्दा भी था। दसवीं की परीक्षा पास करते ही उसने कारखाने में काम करना शुरू कर दिया था ताकि शाम के कालेज में अपनी पढ़ाई जारी रख सके। जिस दिन भारत

सरकार के एक कार्यालय में तृतीय श्रेणी का लिपिक बनकर पहुँचा, उसका सिर ऊँचा था।

अपने छत्तीस साल के सेवाकाल में वह लिपिक से अनुभाग अधिकारी के पद तक तो अवश्य पहुँच गया था मगर एक कसक हमेशा उसके मन में बनी रही थी। काश! वह ढँग की कॉलोनी में अपना एक छोटा–सा आशियाना बना सके। जिस इलाके में उसका ठिकाना था, उससे वह कभी संतुष्ट नहीं रहा। इसे उसका भाग्य ही कहें, उसे अपने सेवाकाल में ही एक सौ बीस मीटर जमीन का टुकड़ा नगर विकास प्राधिकरण के ड्रा में मिल गया था। बस सेवानिवृत्त होते ही मिले पैसे से उसने उस पर अपने सपनों का महल बना लिया।

आज गर्व और संतोष से रामनिवास मिश्र की गर्दन थोड़ी ऊँची है। गृह–प्रवेश के समारोह में उसने अपने सगे–सम्बन्धियों के साथ ही आस–पड़ोस से सभी को बुलाया है।

दोपहर ढल रही है.... दो बज रहे हैं। शामियाने में गहमागहमी है।

''मिश्रजी, आपने कोठी में कार पार्किंग नहीं बनवाई?'' पड़ोसी सहगल साहब ने लिफाफा देते हुए कोल्ड ड्रिंक का गिलास हाथ में थाम लिया।

''सहगल भाई, जब अपने पास कार ही नहीं है तो फिर कार पार्किंग का क्या करना है!'' मिश्र ने सहजता से कहा।

''क्या...?'' सहगल साहब चौंके तो उनके हाथ की कोल्ड ड्रिंक मिश्र के कपड़ों पर छलक गई।

मिश्र को महसूस हो रहा है, वह छोटा, बहुत छोटा हो गया है।

06. लौहद्वार

मैं तिहाड़ जेल का लौहद्वार हूँ। अभी–अभी जो व्यक्ति अपने लस्त–पस्त शरीर को किसी तरह आगे धकेलता हुआ मुझसे बाहर निकला है, मैं उसे कैदी नम्बर 506 के नाम से पहचानता हूँ। वैसे उसका नाम दिनेश वर्मा है, जिसे मेरे साथ ही दूसरे सभी भी भूल चुके हैं। यह नम्बर ही अब उसकी पहचान बन गया है।

तीन साल पहले जब इस व्यक्ति को मुझ तक लाया गया था तो इसने यहाँ चीख–चीखकर कहा था कि वह निर्दोष है और उसने किसी का बलात्कार नहीं किया। मुझ तक आने से पहले यह पुलिस और अदालत के सामने भी चिल्लाया होगा कि वह और नीलिमा पिछले चार साल से लिव–इन में रह रहे थे और अब नीलिमा उसका सब कुछ अपने नाम करवाने के लिए उसे ब्लैकमेल कर रही है। पुलिस ने सिर्फ हड़काया था, न्यायालय ने आँखों पर पट्टी बाँधी हुई थी और मुझ बेजुबान ने तो कितने ही दिनेशों को अंदर–बाहर आते–जाते देखा है।

आज तीन साल बाद ऊपरी अदालत के कानों में सच्चाई की भनक पड़ ही गई। अभियोजन पक्ष उसे वहाँ दोषी साबित करने में पूरी तरह विफल रहा तो उस अदालत ने उसे बाइज्जत बरी कर दिया।

इस समय रात सड़कों पर उतर रही है। मेरे सामने ही वह चौराहा है जिससे निकलकर जाती चारों सड़कें बिजली की तेज रोशनी में नहायी हुई हैं लेकिन मैं जानता हूँ कि उस चौराहे की तरफ बढ़ते इस दिनेश की भी दूसरे कई दिनेशों की तरह ही चारों राहें अन्धकार में डूब चुकी हैं। मैं इन दिनशों की हालत से आक्रोशित होकर चीखना

चाहता हूँ लेकिन मैं चीख नहीं सकता। मैं लौहद्वार हूँ।

07. भ्रम–भंग

जून की तपती हुई दोपहर में एयर कण्डिशण्ड कमरे से बाहर निकला तो विशाल को ऐसे लगा जैसे वह जन्नत से दोजख में आ गया है।

फिर वही आसमान के बीचो–बीच चमकता सूरज है, फिर वही कोलतार की तपती हुई सड़क है और फिर वही दिमाग को मथती हुई फटकार है, ''पिछले तीन महीनों की तरह इस महीने भी तुम अपना टारगेट पूरा करने में फेल रहे हो। यदि ऐसा ही रहा तो कम्पनी तुम्हारा बोझ नहीं उठा सकेगी।''

ट्रिंग–ट्रिंग....ट्रिंग–ट्रिंग....ट्रिंग–ट्रिंग.... उसमें इतना साहस भी नहीं बचा है कि वह मोबाइल को कान से लगाकर 'हेलो' कह सके।

मोबाइल को न बंद होना था और न ही वह हुआ।

''बोलो....'' वह झुँझला उठा।

''क्या बात है बेटा, बहुत परेशान है तू?''

''माँ.... नहीं माँ, मैं ठीक हूँ।'' तपते सूरज को बदली ने ढक लिया है, वह ठिठककर रुक गया है।

''देख बेटा, तू शहर के लिए बना ही नहीं है।''

''नहीं माँ, यही मेरी मंजिल है।'' वह सच को झुठला देना चाहता है मगर दूसरी तरफ माँ है, जो उसे अंदर तक पहचानती है।

''बेटा, यहाँ गाँव में सब तेरे अपने हैं, शहर में तेरा कौन है रे?''

''शहर में मैं अपना हूँ माँ.... गाँव ने तो मेरी पहचान ही छीन ली थी।

''पढ़–लिखकर बहुत बड़ा बन गया है रे.... बहुत बड़ी–बड़ी बातें करने लगा है।''

''माँ....!''

''तू भरम में पड़ गया है रे विशु! गाँव में तू बनवारीलाल का बेटा था....सारा गाँव तेरा अपना था बेटा!''

''पर मेरा अपना वजूद कहाँ था माँ?'' वह हठीला हो रहा है।

''शहर में तेरा कोई वजूद है क्या? बाप के कहे को मन से नहीं लगाते बेटा!''

''माँ....'' बदली सूरज से दूर जा रही है, तपन फिर बढ़ने लगी है।

''लौट आ बिटुआ! इधर ये पछतावे में घुल रहे हैं उधर तू भटक रहा है। इससे कुछ हासिल नहीं होगा रे! सब–कुछ तो तेरा है। हम कितने दिन के हैं रे! सँभाल ले अपना सब–कुछ।'' उधर से आवाज दरकने लगी है।

विशाल चुप है.... बिल्कुल चुप। उधर से फोन कटा नहीं है। उसके पाँव रेलवे के रिजर्वेशन काउण्टर की ओर बढ़ रहे हैं.... बढ़ते जा रहे हैं। तपते सूरज को बदली ने फिर ढक लिया है।

08. मन्दी

दीवार पर लगे घण्टे ने टनटनाकर बारह बजने की सूचना दी है। कहते हैं कि आधी रात को सिर्फ उल्लू जागता है। हाँ, एकाकी रामकिशन प्रसाद आज आधी रात को अँधेरे में दीवार पर आँखें गड़ाये हुए स्वयं को उल्लू ही महसूस कर रहे थे।

दो घण्टे पहले जब वे सोने को बिस्तर पर जा रहे थे तो फोन की घण्टी बज उठी थी। दूसरी तरफ अमेरिका से उनका बेटा आशुतोष था। फोन पर उसके रोने–रोने की–सी आवाज ने उन्हें परेशान कर दिया था।

''डैडी, मैं परसों इण्डिया लौट रहा हूँ।''

''लौट रहा हूँ, मतलब?'' वे कुछ समझ नहीं सके थे।

''हाँ डैडी! मैं आ नहीं रहा, लौट रहा हूँ। जिस एमएनसी में मैं काम कर रहा था वह दिवालिया हो गई है।''

''क्या....?'' वे भौचक रह गए थे।

''हाँ डैडी, अब मेरे लिए यहाँ कुछ नहीं बचा। बड़ी मुश्किल से लौटने का इंतजाम किया है।'' हालांकि फोन से आँसू बाहर नहीं आ सके थे लेकिन सुबकने की आवाज छुप भी नहीं सकी थी।

रामकिशन जी स्तब्ध रह गए थे। वे बहुत–कुछ कहना–जानना चाहते थे मगर उधर से कट गए फोन ने उन्हें बेटे से इतना कहने का मौका भी नहीं दिया था कि कल सुबह ही वे अपने इस घर से बेदखल हो जाएँगे क्योंकि उसकी पढ़ाई के लिए मकान गिरवी रखकर दिया गया कर्जा वे अपनी पूरी कोशिश के बावजूद भी चुका नहीं पाए हैं।

09. हड़कम्प

गाँव की गलियों में खड़ंजे बिछने लगे हैं। सूखे पड़े नलकूपों से जलधार टपकने लगी है। अँधेरा उतरते ही गलियों में लगे खम्बों पर जुगनू चमकने लगे हैं।

देश की एक बड़ी पार्टी इस बार चुनाव में उन उम्मीदवारों को ही टिकट देना चाहती है जिनकी जीत का पूरा विश्वास हो। इसके लिए हाईकमान विशेष सर्वेक्षण भी करवा रही है। सर्वेक्षण दल प्रत्येक मतदान क्षेत्र में जाकर मतदाताओं के मन टटोल रहे हैं।

मैं एक सर्वेक्षण दल के दूसरे दो सदस्यों के साथ इस गाँव के दौरे पर हूँ। जीप आगे बढ़ती जा रही है।

''ये जो खेतों में बनी समाधियाँ आप देख रहे हैं....'' स्थानीय प्रतिनिधि ने मेरी आँखों में उभरे आश्चर्य को ताड़कर बताना शुरू किया है.... ''ये उन वीरों की हैं जिन्होंने अपने देश के लिए सर्वोच्च बलिदान दिया है....''

साँझ उतरने से पहले ही उस गाँव में हमारे आने की सूचना पहुँच चुकी है। सभी बिरादरी और धर्म के लोग चौपाल में एकत्रित हो गए हैं। मैं सभी से अलग–अलग बात करके उनका मन्तव्य जानने का प्रस्ताव रखता हूँ मगर सभी ने एक ध्वनि से इसे खारिज कर दिया है।

''क्यों....''

''हम फैसला कर चुके हैं कि हमें कैसा उम्मीदवार चाहिए....''

मेरी दृष्टि में ढेरों प्रश्न उभर रहे हैं।

मुखिया का दृढ़ स्वर सभी के कानों से टकरा रहा है, ''हाँ, इस बार पूरे गाँव ने फैसला लिया है कि हम उस उम्मीदवार को ही अपना वोट देंगे जिसके परिवार से कोई आदमी देश की सेवा के लिए सरहद पर तैनात हुआ हो....''

मेरे भेजने से पहले ही सर्वेक्षण मत राजधानी पहुँच चुका है और हाईकमान में हड़कम्प मच गया है।

10. साठ या सत्तर से नहीं

''लीलावती अब हम बूढ़े हो गए हैं।'' लॉन में 'इजी चेयर' पर बैठे सुबह की चाय के घूँट भरते हुए रामनारायण ने कहा तो उसकी पत्नी चौंक उठी।

''ऐसा क्यों सोचते हैं आप! अभी तो आपने साठ ही छुआ है।''

''लीलावती, आदमी साठ या सत्तर से बूढ़ा नहीं होता।''

''तो....'' लीलावती चकित थी कि इन्हें आज हो क्या गया है।

''तुम चाय बना रही थी तो सोमेश का फोन आया था।''

''वह ठीक तो है ना!'' वह आशंकित हो उठी।

''ठीक है लीलावती, वह बिल्कुल ठीक है।''

''आने के बारे में कुछ कह रहा था?''

''वह अब शायद ही लौटेगा....उसने लंदन में ही शादी कर ली है।''

ओह! हमसे पूछा तक नहीं!''

''मैंने कहा था ना लीलावती, आदमी साठ या सत्तर से बूढ़ा नहीं होता।''

''हाँ, बूढ़े तो अब हम हो ही गए हैं!'' लीलावती ने चाय के खाली कप उठाए और अपनी गीली आँखें छिपाते हुए अंदर की तरफ चल दी।

11. नजदीक, बहुत नजदीक

गाँव से दो किलोमीटर दूर इस सुनसान अड्डे पर बस ने विजया को छोड़ा तो सर्द शाम का धुँधलका छाने लगा था। गाँव से उसका भाई उसे लेने अवश्य आया होगा, इस उम्मीद से उसने इधर–उधर देखा मगर दूर–दूर तक किसी की कोई आहट नहीं थी। उसने पर्स से मोबाइल निकाला तो उसकी स्क्रीन भी ग्रे थी। चलने से पहले शायद वह उसे चार्ज करना भूल गई थी।

पाँच–सात मिनट गँवाने के बाद उसने बैग को काँधे पर टाँगकर पाँवों को गाँव की ओर जाने वाली पगडंडी पर डाल ही दिया। आखिर वह शहर के एक नामी महिला कॉलेज की हॉकी टीम की सबसे तेज फॉरवर्ड खिलाड़ी और गर्ल्स हॉस्टल की दबंग छात्रा थी। मन में हौसला था और आत्मविश्वास पाँवों को गति दे रहा था। मगर फिर भी सलामुद्दीन की बगीची तक पहुँचते–पहुँचते आसमान से तेज गति से अँधेरा उतर आया तो मन में घबराहट होने लगी।

अपने ही कदमों की आहट अब उसे पराई लग रही थी। वह घबराहट में बार–बार पीछे मुड़कर देख रही थी, पगडंडी सुनसान पड़ी थी। गाँव अभी बहुत दूर था।

''तू रजिया सुल्ताना है....'' उसने मुट्ठी हवा में लहराकर पाँव आगे बढ़ा दिए।

''तू झाँसी की रानी है....'' उसके आगे बढ़ते पाँवों में तेजी आ गई।

''तू भारत की वीर बेटी है....'' हाँ, अब गाँव नजदीक, बहुत नजदीक था।

12. मुक्ति

रामबाबू के घर के सामने दरियाँ बिछी हैं। वे एक कोने में निढाल–से बैठे हैं। कुछ नाते–रिश्तेदार भी उनके पास ही मुँह लटकाए बैठे हैं। घर के आँगन में लगे बूढ़े नीम के पेड़ से झरकर ढेर–सी पत्तियाँ दरियों पर फैल रही हैं। आज चालीस दिन बाद इस घर के दरवाजे का ताला खुला है।

रामबाबू की पत्नी पिछले चालीस दिन से हस्पताल के बेड पर पड़ी कैंसर से लड़ते हुए जिंदगी और मौत से जूझ रही थी। कभी वार्ड, तो कभी आई.सी.यू.। रामबाबू ने इन चालीस दिनों में अपनी पत्नी को कभी अकेला नहीं छोड़ा। वार्ड में तो पत्नी के बैड के साथ लगी छोटी–सी 'सेटी' उनका पता–ठिकाना थी ही, आई.सी.यू. में भी गार्ड और सिस्टर के सामने हाथ जोड़कर वे हर घंटे पत्नी की अधमुँदी आँखों के सामने हाजिर होते रहे थे।

पत्नी के साथ अलग मकान में रहने वाला उनका इकलौता बेटा, मित्र–रिश्तेदार और पास–पड़ोस वाले बार–बार हस्पताल आते–जाते अब थकान मानने लगे थे मगर वे सभी रामबाबू के जीवट पर हैरान भी थे। इस सत्तर साल के बूढ़े को क्या कोई दैविक शक्ति मिल गई है? वे सब सोचने को विवश हो उठे थे।

हाँ, अब वह सत्तर साल का दैविक शक्ति प्राप्त बुजुर्ग रामबाबू अपने घर के सामने बिछी दरी पर निढाल–सा बैठा है। वह अभी–अभी अपनी पत्नी का अंतिम संस्कार करके लौटा है।

भाई रामबाबू दुःखी मत होओ! भाभी मरी नहीं है, उसे तो मुक्ति मिली है।'' रामदयाल उठते हुए हाथ जोड़कर विदा ले रहे हैं।

''हाँ भाई, यह तो पता नहीं कि उसे मुक्ति मिली है या नहीं, मगर हम सबको तो अब मुक्ति मिल ही गई है।'' रामबाबू के हाथ जोड़ने के साथ ही अब बाकी बचे लोग भी उठने लगे हैं।

13. चैटकथा

रीमा ने दो घंटे पहले ही फेसबुक पर अपनी नई फोटो पोस्ट की थी। अब तक दो सौ लाइक्स, तीस कमेंट्स और तीन शेयर आ चुके हैं। वह बहुत ही रोमांचित महसूस कर रही है।

''हाय सेक्सी!'' फेसबुक पर चैट बॉक्स खुलता है।

''हाय रैम! कैसे हो?''

''बड़ी हॉट फोटो पोस्ट की है!''

''यू लाइक दैट?''

''ओह यस, सुपर्ब!''

''थैंक्स ए लॉट!''

''तुम बहुत क्यूट हो।''

''सच, मैं कैसे मान लूँ?''

''मैं तीन महीने से तुम से चैट कर रहा हूँ।''

''चैट कर रहे हो या चीट कर रहे हो?''

''व्हाट?''

''तुम, तुम ही हो, मैं कैसे मान लूँ?''

''जैसे मैं मानता हूँ कि तुम, तुम ही हो।''

''बहुत स्मार्ट हो!''

''थैंक्स फॉर कॉम्पलीमेंट! कब मिल रही हो?''

''फॉर ह्वाट, किसलिए?''

''तुम्हें प्रपोज करना है।''

''शिट, कर दिया न चैट का रोमान्स खत्म!''

रीमा ने फेसबुक बन्द कर दी है। अब वह अपना मेलबॉक्स खोल रही है।

14. मेरा बयान

वह कहता है कि मैं मर चुकी हूँ मगर मुझे पूरा विश्वास है कि मैं जिन्दा हूँ और पूरे होशो–हवास में यह सब बयान कर रही हूँ। इस बात को लेकर हम दोनों के बीच रात ही अबोला खिंच गया था।

अगर मैं मर चुकी होती तो इस समय आपसे रूबरू कैसे होती? क्या मरा हुआ व्यक्ति किसी से संवाद कर सकता है? अगर मैं कहूँ कि मैं नहीं, वह मर चुका है, तो क्या वह इसे स्वीकार कर लेगा?

यह सच है कि गहराती रात में उन चार भेड़ियों ने मेरी देह नोंची मगर इससे मैं यह कैसे मान लूँ कि मैं मर चुकी हूँ। मैं जिन्दा हूँ, यह सौ प्रतिशत सच है और इसका प्रमाण है कि मैं इस घटना की पूरी रिपोर्ट थाने में लिखवाकर आई हूँ और सुबह फिर इस संदर्भ में मुझे पुलिस थाने जाना है।

''तुम्हें क्या जरूरत थी पुलिस थाने जाने की और इस सबकी रिपोर्ट लिखवाने की!'' रात को सबकुछ जानने के बाद उसकी यही प्रतिक्रिया थी।

''तो क्या मुझे इसके बाद चुप बैठ जाना चाहिए था?'' मुझे लग रहा था कि मेरी पीठ पर एक कीड़ा रेंग रहा है। मैं हाथ पीछे कर उसे हटाना चाह रही थी मगर मेरा हाथ वहाँ तक पहुँच ही नहीं पा रहा था।

''अब इससे कुछ हासिल होगा?'' एक प्रश्न उछला था उस ओर से।

''क्यों नहीं....?''

''इस घटना के बाद तुम मर चुकी हो और मुर्दों को कुछ हासिल नहीं हुआ करता।''

''यह झूठ है, सरासर झूठ। मैं जिन्दा हूँ....सौ प्रतिशत! और जिन्दा लोग लड़ाई से भागा नहीं करते।''

उसके पास इसका शायद कोई जवाब नहीं था। वह मुँह फिराकर पसर गया था।

मैं कुर्सी में धँसी अपने जिंदा होने का प्रमाण ढूँढ़ रही हूँ क्योंकि उस प्रमाण के साथ मुझे सुबह होते ही पुलिस थाने जाना है।

15. टोपी

''आइए हुजूर, ठिठक क्यों रहे हैं!''

''मगर आगे तो घुप्प अँधेरा है। यह हम कहाँ आ गए हैं।''

''अरे! आप अपने शहर को नहीं पहचानते!''

''क्यों मजाक कर रहे हो? यह मेरा शहर तो नहीं है।''

''अरे नहीं हुजूर, हम आपको आपके ही शहर में लेकर आए हैं।''

''मेरा शहर तो रोशनी में सराबोर रहता है। यहाँ तो इतना अँधेरा है कि कुछ भी दिखाई नहीं देता।''

अँधेरे में कुछ मसालें जल उठी हैं। वे इधर–उधर देख रहे हैं। उनके चारों तरफ

भीड़ की परछाइयाँ गोल–गोल घेरा बनाए खड़ी हैं। वे उस घेरे को तोड़ने का भरसक प्रयास कर रहे हैं मगर उनके हाथों की चैन बहुत ही मजबूत है।

अब उनके हाथ अपने सिर की ओर बढ़ने लगे हैं। वे टोपी को अपने सिर से उतारकर जेब में छिपाने की सोच रहे हैं। मगर यह क्या! टोपी उनके सिर पर है ही नहीं।

टोपी अब भीड़ के प्रत्येक सिर पर है। वे चीखकर उठ बैठते हैं। सामने टेलीविजन पर मुख्य समाचार आ रहा है.... प्रदेश के मुख्यमंत्री चुनाव हार गए हैं।

16. वजूद की तलाश

आज तीस वर्ष बाद शहर से गाँव लौटा हूँ। इस गाँव के गली–कूचों से मैं अच्छी तरह परिचित हूँ। मैं इसी गाँव में पैदा हुआ और जीवन के शुरू के सोलह साल मैंने यहीं गुजारे हैं।

गाँव ने खूब तरक्की की है मगर गलियाँ अभी भी ईंटों के खड़ंजे की हैं। कुछ गलियाँ कच्ची भी हैं। मगर मकान जो पहले एक मंजिले हुआ करते थे अब दो–दो, तीन–तीन मंजिल के हो गए हैं।

गाँव के छोटे से बाजार को पार कर मैं जिस गली की ओर मुड़ रहा हूँ उसके नुक्कड़ पर ही मेरी मंजिल है। दोनों ओर के मकानों को देखता हूँ, सब–कुछ तो बदल गया है। किसी परिचित की तलाश में आँखें भटक रही हैं। ये सभी घर अपनों के ही तो हुआ करते थे। इन्हीं घरों के आँगन में मेरा बचपन गुजरा है.... सभी तो अपने थे। अब वे सब कहाँ हैं?

एकाएक एक दो–मंजिले मकान के सामने मेरे पाँव ठिठक जाते हैं। हाँ, यह वही जगह तो है। मगर सब बदला हुआ क्यों लग रहा है? यही तो था, हाँ बिल्कुल यही। बदलने से सारी पहचान तो नहीं बदल जाती!

''अरे! यह सामने से कौन चला रहा है? शक्ल तो जानी–पहचानी लग रही है।''

''किसे तलाश रहे हो भाई?'' वह सहसा पूछता है।

''खुद को तलाश रहा हूँ प्रेम भाई!'' अपना नाम सुन वह चौंकता है और मेरे चेहरे में किसी परिचित को तलाश करने लगता है।

मैं बिना कुछ कहे मुड़कर चलने लगता हूँ। मगर उसने पीछे से मेरे काँधे पर हाथ रख दिया है।

''मैंने पहचान लिया दीप भाई!'' वह कहता है तो मैं अंदर तक भीग जाता हूँ।

मुझे लगता है, मेरी तलाश पूरी हो गई है।

17. पिंजरे में टाइगर

बंगाल टाइगर को जब सुंदरवन के जंगलों से पकड़कर चकाचौंध की महानगरी में लाया गया तो सभी के मन में गहरी उत्सुकता थी कि इसे पालतू कैसे बनाया जा सकेगा! कहाँ जंगल–बीहड़ों में गुजारी कई नक्सली जिंदगी और कहाँ इस मायानगरी का ग्लैमर।

स्टूडियो में 'तूफान' के सेट पर सरगोशियाँ हो रही थीं।

''दत्ता साहब इतने तजुर्बेकार डायरेक्टर हैं, यह किस जानवर को पकड़ लाए!''

''इंडस्ट्री में एक से बढ़कर एक हीरो हैं, प्रोड्यूसर तनेजा का तो अब भगवान ही मालिक है।''

भुवन चक्रवर्ती एक कुर्सी पर अधबैठा–सा है। उसके सख्त चेहरे पर दो आँखें

दहक रही हैं। कभी गर्दन एक तरफ, कभी गर्दन दूसरी तरफ। वह कसमसा रहा है। वह हक्का–बक्का है। वह समझ नहीं पा रहा है कि वह किस माँद में आ फँसा है।

''लाइट....साउंड....कैमरा....एक्शन!'' निर्देशक की गूँजती आवाज के साथ वहाँ पसरे सन्नाटे में सभी साँस रोके 'तूफान' के पहले शॉट को देख रहे हैं।

हीरोइन लहराती–सी आगे बढ़ी। टाइगर के पाँव जमीन से चिपक गए। ग्लैमर ने जंगल को अपनी बाहों में जकड़ लिया। सुंदरवन की दहकती आँखें उस पर गड़ गईं। मिस वर्ल्ड के लिपस्टिक पुते गुलाबी अधर यकायक जंगल की खुरदुराहट से जा टकराए।

''ओ.के.....कट....'' के साथ गूँजती हुई तालियाँ तेज रोशनी में नहा गईं।

भुवन चक्रवर्ती अब आरामकुर्सी पर पसरा हुआ है। उसके हाथ में चिल्ड बियर का बड़ा–सा मग थमा दिया गया है। स्पॉट ब्वॉय उसके झुके सिर को तौलिऐ से पोंछ रहा है।

पूरी यूनिट के चेहरे पर संतुष्टि के भाव हैं। सुंदरवन का टाइगर मायानगरी के पिंजरे में कैद हो गया है।

18. आलू के दाम

बात उस समय की है जब भारत के नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री अमेरिका के मेडिसन स्क्वेयर में अपनी लोकप्रियता का परचम लहराकर लौटे थे।

उस समय पाकिस्तान अपनी खीज मिटाने के लिए सीमा रेखा पर तैनात भारतीय जवानों और सीमा से सटे भारतीय गाँव के निर्दोष नागरिकों पर अन्धाधुन्ध गोलीबारी कर रहा था। इसी समय तेल की गिरती कीमतों तथा अमेरिका द्वारा लगाये गए प्रतिबन्ध के कारण रूसी रूबल का कसबल निकल गया था।

इसे एक संयोग ही कहा जाएगा कि देश के एक नामचीन खबरिया चैनल का नामी–गिरामी संवाददाता सत्ता पक्ष के साथ ही विपक्ष के दो नेताओं को भी सामने पा गया। वह तीनों से एक ही प्रश्न का उत्तर लेना चाह रहा था।

''क्या नए प्रधानमंत्री के आने से विश्व में भारत का रुतबा बढ़ा है?'' उसने माइक सत्ता पक्ष के नेता के सामने कर दिया है।

''इसमें क्या शक है। अब पूरा विश्व भारत की बात पूरी गंभीरता से सुनता है।'' आवाज में खनक है।

''हमें तो अपनी सीमा पर पाकिस्तान द्वारा की जा रही गोलीबारी की आवाज ही सुनाई दे रही है।'' यह प्रमुख विपक्षी दल के नेता की खीझ भरी आवाज है।

''यह नए प्रधानमंत्री का जादू नहीं, पूँजीवाद का षड्यंत्र है। देश को अमेरिका द्वारा फैलाये गए जाल में उलझाया जा रहा है।'' यह लाल सलाम का स्वर है।

''इस बारे में आप क्या सोचते हैं?'' संवाददाता का माइक थोड़ा हटकर खड़े एक आम आदमी की तरफ घूम गया है।

''भाई! मैं क्या कहूँ.... आज ही आलू के दाम पाँच रुपए किलो बढ़ गए हैं।'' कहकर वह एक तरफ चला गया है। नेताओं की दृष्टि उसका पीछा कर रही है।

19. महानायक

यह सच है कि पिछले बीस वर्षों से वह शहर के रंगमंच पर नायक का पर्याय

रहे हैं मगर यह भी उतना ही बड़ा सच है कि अब उन पर उम्र सवार होने लगी है। उनकी आवाज में वह गूँज नहीं रह गई है जो खचाखच भरे थिएटर की तालियाँ बटोर सके। वह ढल चुके हैं मगर रुपहले पर्दे के राजेश खन्ना की तरह स्वयं को रंगमंच का महानायक ही मानते हैं। उनकी जिद है कि वह आज भी नायक की भूमिका किसी भी अन्य कलाकार से अधिक बेहतर ढँग से अदा कर सकते हैं।

आज नाटक की रिहर्सल में जब उनकी साँस उखड़ रही थी तो उन्हें अलग ले जाकर निर्देशक वासु दा को आखिर कहना ही पड़ा, ''विरोचन भाई, इस नाटक में आप नायक के किरदार को सँभाल नहीं पा रहे हैं। मेरी नजर में तो रहमान का किरदार आप अच्छा निभा पाएँगे।''

''क्यों....?'' गंभीर आवाज में आश्चर्य से अधिक व्यंग्य का पुट था।

''कुछ बातें कहने से अधिक समझने की होती हैं, विरोचन भाई। दूसरों से पूछने की बजाय उन्हें खुद से पूछना पड़ता है।'' वासु दा के इतना कहने के साथ ही दोनों के बीच सन्नाटा खिंच गया।

बिना कुछ बोले विरोचन बाहर निकल आए। एक तूफान–सा अपने में समेटे वह कार में आ बैठे। ड्राइवर ने गाड़ी उनके बंगले की तरफ बढ़ा दी।

वह गाड़ी से उतरकर सीधे ड्राइंग रूम में पहुँचे। सामने आदमकद शीशे में खुद को देखते हुए काफी देर तक खड़े सोचते रहे। फिर एक निश्चय कर दृढ़ता से बुदबुदा उठे, ''मैं सब समझ गया हूँ वासु दा! वाकई कुछ बातें कहने से अधिक समझने की ही होती हैं। उनकी निगाहें कुशल मेकअपमैन से भी छूट गए कनपटी के कुछ सफेद बालों पर टिकी थीं। लेकिन मैं नायक हूँ वासु दा....महानायक! मैं रहमान के रोल में भी दूसरों पर भारी पड़ूँगा....।''

20. उसके बाद....

पेट्रोल पम्प पर वाहनों की लम्बी कतार लगी थी। टी.वी. के सभी व्यवसायिक न्यूज़ चैनलों पर दो घण्टे से एक ही 'ब्रेकिंग न्यूज़' चल रही थी– इराक में खूनी संघर्ष के कारण विश्व में पेट्रोलियम पदार्थों की कमी की आशंका, देश में आज आधी रात से कीमतें बढ़ने तथा राशनिंग की सम्भावना।

टी.वी. का एक संवाददाता हाथ में माइक थामे 'बाइट' लेने की कोशिश में है। उसका सहयोगी कैमरामैन इसकी 'लाइव कवरेज' कर रहा है।

वह एक चमचमाती होण्डा सिटी कार की खिड़की पर ठक....ठक.... करता है।

''आपकी कार की टंकी में कितना पेट्रोल आ जाता है?''

चालीस–पेंतालीस लीटर में टंकी फुल होती है....।''

''तो आप टंकी फुल करवाएँगे....?

''बिल्कुल!''

''फुल टंकी कितने दिन चल जाती है....?''

''छह–सात दिन तो काम चल ही जाएगा।''

''उसके बाद....?''

कार वाला असमंजस में संवाददाता के चेहरे पर उसके प्रश्न को समझने का प्रयास कर रहा है।

संवाददाता एक और गाड़ी के शीशे पर ठक....ठक.... कर रहा है। ■■

कुमार नरेन्द्र

चातक–चकोर–चकवा

''लेखक जी महोदय! आज चातक के बारे में मुझे कुछ बताइए न, अभी नींद नहीं आ रही है।''

''देवी सुधा! चातक.... हाँ चातक, जिसे पपीहा भी कहते हैं, जो मेघों की ओर चोंच उठाए ताकता रहता है और वह केवल स्वाति नक्षत्र में ही वर्षा की बूँदे अपनी चोंच में भरकर तृषा को बुझाता है, अन्यथा पिपासित ही रहता है।''

''ओह!.... और चकोर?''

''चकोर एक पहाड़ी पक्षी है तीतर जाति का, जो अंगारे खाने के लिए प्रसिद्ध है, यूँ वह चन्द्रमा का अन्यतम प्रेमी है, चन्द्र–किरणें ही उसका आहार हैं।''

''अरे वाह! प्रेमी हो तो चकोर जैसा.... और चकवा?''

''चकवा–चकवी बहुत ही विचित्र प्राणी हैं हमारी भाँति, जिन्हें फ़ारसी में सुर्ख़ाब भी कहते हैं। ये दिनभर जलाशय में तैरते रहते हैं, आमोद–प्रमोद करते हैं किन्तु....''

''किन्तु क्या?''

''रात्रि को वे अलग–अलग हो जाते हैं।''

''लेकिन क्यों?''

''सुधा! यह तुम उनसे जाकर पूछो....।''

''मैं क्यों पूछूँगी, आप पूछो!''

''मैं क्यों पूछूँगा; अरे, करे कोई भरे कोई!''

''सात जन्मों का बन्धन क्या पहले ही जन्म में ढीला होने लगा है?''

''सुधा जी! यह पहला नहीं अंतिम है।''

''चलो छोड़ो इस वाद–विवाद को। मुझे अब नींद आ रही है। मैं अपने कमरे में जा रही हूँ, आप अपने कमरे में...।''

''हाँ, तुम जाओ, मैं कुछ लिखकर सोऊँगा। चकवा–चकवी को कहीं ढूँढूँगा.... और पूछूँगा– तुम इतने परपीड़क क्यों हो?''

''अवश्य पूछना.... और मुझे भी बताना लेखक जी, शुभ रात्रि!''

■ 33, प्रताप एनक्लेव, मोहन गार्डन, दिल्ली–110059 / मो. 09654935499

सन्तोष सुपेकर

एक्सिलेटर, ब्रेक और क्लच

''अरे या..ऽ..ऽ..र! च च च...'' कार चलाते हुए मैंने दूर सामने सड़क पर पैदल जाते उस व्यक्ति को देखा तो भौंहे सिकुड़ गईं और मुँह कड़वा हो गया, ''आज रास्ता बदल ही लेना था मुझे... आजकल भूलने बहुत लगा हूँ... ये अंकल दिख ही गये आखिर! क्या करूँ आज? बिठाऊँ या नहीं बिठाऊँ इनको?''

रोज मैं जब अपनी कॉलोनी से मुख्य सड़क के लिए कार में निकलता तो उसी समय पैदल जा रहे उस बूढ़े व्यक्ति को हमेशा, बिना चूके, कार में बैठा लेता और उनके धर्मस्थल तक छोड़ देता, जो कि मेरे दफ्तर के रास्ते में ही पड़ता है। रोज के इस मिलन से हमारी अच्छी तरह जान–पहचान हो गई थी।

कल शाम उन बुजुर्ग के धर्म वालों और मेरे धर्म के लोगों के बीच शहर के एक धर्मस्थल के बाहर झड़प हो गई थी जोरदार... मेरे धर्म वाले पाँच–छः लोग घायल हुए थे, शहर में कर्फ्यू लगने–सी स्थिति हो गई थी, बमुश्किल मामला सँभला था...

''क्या किया जाए अब? बिठाऊँ या नहीं...? बिठा लेता हूँ यार...?'' एक पैर फिर ढीला पड़ा और एक कड़क हो गया। ''कुछ भी हो, इंसानियत बड़ी चीज है।'' तभी... पैरों की हरकत फिर बदली, ''लेकिन वो मेरा परिचित, ननकू भी तो घायल होकर भर्ती है अस्पताल में!'' अब पैर और हाथ अनियंत्रित होकर तेजी से कार के उपकरणों पर हिलने लगे थे और साफ आसमान–से मन के कैनवास पर तमाम रंग गहराने लगे थे... ''कल के झगड़े में वो भी तो बुरी तरह घायल हो गया था... फिर? नहीं... नहीं... इन हत्यारे लोगों पर कैसे भरोसा करें? छोड़ो यार! काहे के अंकल ये?''

और मेरी कार विचित्र–सी आवाज़ करती, पैदल चलते उस बुजुर्ग के पास से फर्राटे से निकल गई....

पीछे पलटकर मैंने नहीं देखा और चैन की एक लम्बी साँस ली।

उलझन की इस प्रक्रिया में सबसे ज्यादा कसमसाए तो मेरी कार के एक्सिलेटर, ब्रेक और क्लच!!

■ 31, सुदामानगर, उज्जैन–456001 (म.प्र.) / मो. 09424816096

पुष्पा मेहरा

दो लघुकथाएँ

जमुनिया

गर्मी की भरी दोपहरी उमड़ते–घुमड़ते बादलों के बीच शान्त वातावरण में निक्की ने ज्यों ही आँखें झपकाईं, दरवाजे की ठक–ठक सुन वह अनमनी–सी उठी, देखा– बादल बूँदें बरसा रहे हैं और द्वार पर पुलिस की वेशभूषा में एक युवती खड़ी है। कौन है यह, यहाँ क्यों आई है? लगता है आज फिर किशोर ने कुछ अभद्र किया होगा। आते–जाते किसी लड़की को छेड़ा होगा। मन एक आशंका से भर गया। मेरे मन के भाव पढ़, मुझे घबराया हुआ देख वह लड़की बोली, ''अरे मम्मी जी, आपने मुझे पहचाना नहीं? मैं आपकी जमुनिया।'' कहते ही वह मुझसे ऐसे लिपटी, जैसे वृक्ष के तने से कोई बेल।

साधारण–सी, अदम्य साहस से भरी, वह मेरे मन की न जाने कितनी परतें उधेड़ गई। बदली छँटने लगी और अतीत जीने लगा। मन को विश्वास नहीं हुआ कि लगभग बीस वर्ष पहले क्रूर, बलात्कारी अपने दूसरे पिता द्वारा बेचे जाने के भयवश घर छोड़कर भागी जामुन के पेड़ के नीचे जामुन खाकर भूख मिटाती एक सात–आठ वर्ष की वह अबोध

ही आज फिर से मेरी ममता जिला रही है। मैंने काँपते हाथों उसे अपने आगोश में समेटा और तभी मेरी सारी आशंकाएँ यादों की बारिश में धुल गईं। ऐसा लगा, मानो आकाश में रंगरलियाँ मनाती बूँदें हर पल एक नया इन्द्रधनुष रचने को आमादा हैं...

02. आशा

कई दिनों से लगातार बारिश हो रही थी। घर में एक भी दाना नहीं था, भूख से बेहाल पाँच वर्ष की रमिया माँ की गोद से चिपकी रोये जा रही थी। आस–पास कौन था, जो उसकी दीनता पर तरस खाता! सभी अपने में मस्त थे।

भीख माँगकर गुज़ारा करने वाला दीना मन ही मन कभी बारिश को कोसता तो कभी अपनी लाचारी, अपने भाग्य को। सोचता कि भगवान ने शादी के आठ वर्ष बाद गोद हरी करी तो रोजी–रोटी का जरिया छीन लिया। कम्पनी के मालिक ने किसी और का गुनाह उसके सिर मढ़ दिया। बेकसूर निर्धन दीना मालिक से न्याय की भीख माँगता रहा किन्तु सुनने वाले ने उसकी एक न सुनी और वह दर–दर ठोकरें खाने को मजबूर हो गया। पास में फूटी कौड़ी भी नहीं थी। दुर्दिनों की बारिश में भीगता डाँट–डपट, लतार खाता, भीख माँगकर गुजारा करता; किन्तु दैव को शायद उसे अभी और दुःख देने हैं। सोचते हुए उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली।

रोकर सो चुकी रमिया को धीरे से गोद से उतार सरवती ने अपने पाँवों से जस्ते की पायल उतारकर दीना के हाथ में रखी ही थी कि तभी बारिश थमते ही रमिया के रोने की आवाज सुन पड़ोसन नैना दीना और सरवती से नेह जताती नमकीन रोटियाँ और प्याज देकर उनके आँसू पोंछती, अपना दुःख–सुख बाँटती रही...।

साँझ का झुटपुटा हो गया था। सड़कें जगमगाने लगीं, शायद दीना के भी दिन बहुरें।

किसी हितैषी से पता लगा कि पास में बन रहे पुल के ठेकेदार को दिहाड़ी मजदूर की जरूरत है, सुनते ही दीना की आँखों में चमक आ गई। ईश्वर के घर देर है अंधेर नहीं।

■ बी–201, सूरजमल विहार, दिल्ली–22 / मो. 09873443661

पृष्ठ 7 (लघुकथा और मधुदीप / डॉ. कमल किशोर गोयनका) **का शेष...**

की अपूरणीय क्षति हुई'' (खंड–17); ''यह खंड आदरणीय विष्णु प्रभाकर की स्मृति को समर्पित है जिन्होंने इस विधा को प्रतिष्ठा दिलवाने में अपनी संपूर्ण क्षमता से योगदान दिया'' (खंड–18)। इस श्रृंखला के जिन खंडों का संपादन अन्य लोगों ने किया है, इसमें उनके समर्पण पृष्ठों का उल्लेख नहीं है, भले ही श्रृंखला संयोजक होने के नाते उन्हें भी मधुदीप ने ही लिखा हो।

कहने का तात्पर्य यह है कि मधुदीप श्रेय को सम्बन्धित व्यक्ति में ही नहीं तत्संबंधी परिस्थिति, समय और स्थान में बाँटने के विशुद्ध भारतीय या कहें कि विशुद्ध मानवीय संस्कार से युक्त हैं। यह संस्कार व्यापक दृष्टिविध से उत्पन्न होता है। यही कारण है कि वे अपनी पूरी शक्ति से इस विधा के उन्नयन में जुट पा रहे हैं। किसी समय मैंने कहा था– इक्कीसवीं सदी लघुकथा की होगी। मधुदीप के लेखन और सम्पादन ने मेरे कथन को पुष्ट करने की ओर सार्थक कदम बढ़ाया है। इस कार्य में उनकी सफलता के लिए मैं हृदय से अनंत मंगलकामनाएँ प्रस्तुत करता हूँ।

■ ए–98, अशोक विहार, फेज–1, नई दिल्ली–110052

आपले वाचनालय का सम्मान समारोह सम्पन्न

इंदौर की प्रतिष्ठित संस्था आपले वाचनालय के संस्थापक संस्कृति पुरुष वसंत राशिनकर की स्मृति में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले अ. भा. सम्मान समारोह का गरिमापूर्ण आयोजन आपले वाचनालय सभागृह में सम्पन्न हुआ। मुख्य अतिथि म.प्र. साहित्य अकादमी के निदेशक डॉ.विकास दवे ने आपले वाचनालय को संस्कृति संवर्धन और संरक्षण का अद्वितीय केंद्र निरुपित करते हुए वसंत राशिनकर के निस्वार्थ सामाजिक योगदान को आदरपूर्वक याद किया। मराठी अकादमी के पूर्व निदेशक अश्विन खरे और अध्यक्ष मधुसूदन तपस्वी ने अपने उद्‌बोधन में वसंत राशिनकर द्वारा आपले वाचनालय के माध्यम से किये जा रहे कार्यों की भूरि–भूरि प्रशंसा की। इसके पूर्व अनिलकुमार धड्‌वईवाले ने अपने आत्मीय और प्रभावी संबोधन में न सिर्फ वसंतजी के कार्यों और समर्पण को शिद्दत से याद किया वरन उन्हें शहर की सांस्कृतिक धरोहर निरूपित किया। आपले वाचनालय व श्री सर्वोत्तम के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित समारोह में कवि राजू देसले को समारोह का सर्वोच्च सम्मान कविवर्य वसंत राशिनकर स्मृति अ.भा. सम्मान दिया गया। उल्लेखनीय कृतियों को दिए जाने वाले वसंत राशिनकर काव्य साधना अ.भा. सम्मान से राराविकर, संदीप काले, डॉ. शिवाजी नारायणराव शिंदे, डॉ.पल्लवी परुलेकर बनसोडे, डॉ. साईनाथ पाचारने, विद्धयाधर बन्सोड, संतोष विट्ठल काम्बले, हबीब भंडारे को भी सम्मानित किया गया। इस अवसर पर अच्युत पोतदार प्रदत्त रामू भैया दाते स्मृति पुरस्कार भूषण राजुरकर को दिया गया। उत्तरार्ध में वरिष्ठ कवयित्री अलकनंदा साने की अध्यक्षता में मराठी कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसमें मेधा खिरे, उमेश थोरात, अरुणा व मनीष खरगोणकर, विश्वनाथ शिरढोणकर, दीपक देशपांडे, ज्ञानेश्वर तिखे, जया गाडगे, सुषमा अवधू, संदीप काले, वीणा राराविकर, गजानन तपस्वी, रोहिणी कुलकर्णी, अतुल केकरे, राधिका इंगले, वैशाली पिंगले, अर्चना शेवड़े, आभा निवसरकर, ऐश्वर्या डगावकर, डॉ.वसुधा गाडगिल, वैजयंती दाते एवं सम्मानित रचनाकारों ने काव्य–पाठ किया। संचालन किया जया गाडगे और श्रीति राशिनकर ने। आभार प्रकट किया संदीप राशिनकर ने। (समाचार सौजन्य : संदीप राशिनकर)

डा.संजीव कुमार को डा.हरिवंश राय बच्चन सम्मान

राही सहयोग संस्थान, जयपुर द्वारा 'बानगी–2' सम्मान श्रृंखला के अंतर्गत 'डॉ. हरिवंश राय बच्चन सम्मान' के लिए देश के लब्ध–प्रतिष्ठित कवि डॉ. संजीव कुमार का चयन किया गया है। एक सौ से अधिक ग्रंथों के प्रणेता डॉ. संजीव कुमार की साहित्यिक कृतियों में 'आज की मधुशाला' का विशेष शुमार है। चयन समिति के संयोजक श्री फारुक आफ़रीदी ने बताया कि यह निर्णय श्रीमती ममता कालिया, राहुल देव, बीना शर्मा, नंद भारद्वाज, प्रबोध कुमार गोविल, गिरीश पंकज एवं भूमित्र देव की सदस्यता वाली चयन समिति ने सर्वसम्मति से लिया है। डॉ. संजीव कुमार को यह सम्मान 5 जनवरी 2023 को जयपुर में आयोजित एक समारोह में प्रदान किया जाएगा। (समाचार सौजन्य : हिमांशु जोनवाल)

बेनज़ीर थे नज़ीर 'बनारसी' : प्रो. विश्वम्भरनाथ मिश्र

गंगा–जमुनी तहजीब और बनारसी मिजाज के मशहूर शायर नज़ीर 'बनारसी' की 113वीं जयंती के उपलक्ष्य में नज़ीर बनारसी एकेडमी और डॉ. अमृत लाल इशरत मेमोरियल सोसाइटी के संयुक्त तत्वाधान में नागरी नाटक मंडली, वाराणसी में आयोजित समारोह में 'नज़ीर बनारसी यादों के आईने में' पुस्तक का विमोचन संकट मोचन मंदिर के महंत प्रो.

विश्वम्भरनाथ मिश्र, मुख्य अतिथि पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव और गणमान्य अतिथियों ने किया। अध्यक्षता करते हुए प्रो. विश्वम्भरनाथ मिश्र ने कहा कि नज़ीर 'बनारसी' बेनजीर थे। वे काशी के फकीर थे। उन्होंने बनारस की रूह को समझा इसलिए इस शहर ने उन्हें स्वीकार किया। मुख्य अतिथि पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव ने कहा कि नज़ीर 'बनारसी' की सबसे बड़ी खूबी उनकी भाषा की जन–सम्प्रेषणीयता है। मुहब्बत, भाईचारा, देशप्रेम उनकी शायरी और कविताओं की धड़कन है। नज़ीर 'बनारसी' की शायरी और उनकी कविताएँ आगामी पीढ़ियों के लिए धरोहर हैं। इससे युवाओं को जोड़ने की जरुरत है। अगर हम इस मुल्क और उसके मिज़ाज को समझना चाहते हैं, तो नज़ीर 'बनारसी' को जानना और समझना होगा। मौलाना अब्दुल बातिन नोमानी ने कहा कि मोहब्बत के नाजुक एहसासों और जरूरतों को नज़ीर 'बनारसी' ने बड़े सलीके से शायरी और गजलों की शक्ल दी। वे मजहबी एकता कायम करने के फनकार थे। प्रो. आफताब अहमद आफाकी ने बीएचयू में अमृत लाल इशरत और नज़ीर 'बनारसी' के नाम पर गोल्ड मेडल की शुरुआत करने की जरूरत बताई। प्रख्यात शायर डॉ. माजिद देवबंदी ने कहा कि हम बच्चों को आधुनिक तालीम तो दें लेकिन हिंदी और उर्दू जुबान भी पढ़ाएँ। डॉ. अमृत लाल इशरत मेमोरियल के अध्यक्ष दीपक मधोक ने नज़ीर 'बनारसी' और अपने पिता अमृतलाल इशरत का संस्मरण सुनाया। प्रसिद्ध गीतकार डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र ने नज़ीर 'बनारसी' की रचनाधर्मिता पर प्रकाश डालते हुए उनसे जुड़े प्रसंगों को साझा किया। नज़ीर बनारसी एकेडमी के अध्यक्ष मो. सगीर ने नज़ीर 'बनारसी' की प्रमुख किताबों की चर्चा की। आर्यमा सान्याल ने जीवन में उत्सव नामक अपनी रचना सुनाई। स्वागत मो. सगीर, संचालन इशरत उस्मानी और धन्यवाद रेयाज अहमद ने किया। (समाचार सौजन्य : मो. सगीर)

डॉ. कविता भट्ट को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पुरस्कार

उत्तराखण्ड की चर्चित लेखिका डॉ. कविता भट्ट 'शैलपुत्री' को उनकी कृति 'भारतीय साहित्य में जीवन मूल्य' के लिए साहित्य अकादमी, म.प्र. द्वारा वर्ष 2019 का 'अखिल भारतीय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (आलोचना) पुरस्कार' प्रदान किया गया है। डॉ. कविता जी की अब तक 24 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। अनेक प्रतिष्ठित संस्थानों में उन्हें व्याख्यान हेतु आमंत्रित किया जाता है। इस पुरस्कार के अन्तर्गत उन्हें रु. एक लाख की नगद राशि प्रदान की जायेगी। (समाचार सौजन्य : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु')

सतीश राठी को 'दुष्यंत कुमार सम्मान'

सुप्रसिद्ध लघुकथाकार एवं कवि श्री सतीश राठी को उनके गज़ल संग्रह 'कोहरे में गाँव' के लिए साहित्य अकादमी, म.प्र. द्वारा वर्ष 2021 के 'दुष्यंत कुमार सम्मान' के लिए चयनित किया गया है। राठी जी साहित्य की कई विधाओं में सृजनरत हैं। संपादन के क्षेत्र में भी उनका पर्याप्त योगदान है। राठी जी को सम्मानस्वरूप रु इक्यावन हजार की राशि प्रदान की जायेगी। (समाचार सौजन्य : सतीश राठी)

संतोष सुपेकर को जैनेंद्र कुमार जैन पुरस्कार

सुप्रसिद्ध लघुकथाकार श्री संतोष सुपेकर को लघुकथा संग्रह 'सातवें पन्ने की खबर' के लिए साहित्य अकादमी, म.प्र. द्वारा वर्ष 2020 के 'जैनेंद्र कुमार जैन पुरस्कार' के लिए चयनित किया है। सुपेकर जी कविता एवं लघुकथा– दोनों विधाओं में सृजनरत हैं। उन्होंने लघुकथा–समीक्षा के क्षेत्र में भी काम आरम्भ किया है। सुपेकर जी को सम्मानस्वरूप रु. इक्यावन हजार की राशि प्रदान की जायेगी। (समाचार सौजन्य : संतोष सुपेकर) ■ ■

।।प्राप्ति स्वीकार।।

{इस अंक के बाद प्राप्त पुस्तकों/पत्रिकाओं की संक्षिप्त सूचना का प्रकाशन इण्टरनेट पर प्रकाशित ब्लॉग 'अविराम' पर ही (ब्लॉग का पुर्नप्रकाशन आरम्भ होने पर) संभव होगा। पुस्तक/पत्रिका की **एक प्रति** ही **बरेली के पते** पर भेजें।}

प्राप्त पुस्तकें

खड़ी बोली के लोकगीत : लोकगीत संकलन। संकलन : वीर बाला काम्बोज। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 80/–मात्र। सं. : 2022।

मैं तुम्हारी लहर : काव्य संग्रह : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 240/–मात्र। संस्करण : 2022।

साँझ हो गई : काव्य संग्रह : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 300/–मात्र। संस्करण : 2022।

मील का पत्थर : निबंध संग्रह : डॉ. अहिल्या मिश्र। प्रकाशक : गीता पुस्तक केन्द्र, 4–2–771, रामकोट चौरस्ता, हैदराबाद–500001, तेलंगाना। मूल्य : रु. 295/–मात्र। संस्करण : 2022।

भोर के अधर : काव्य संग्रह : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 300/–मात्र। संस्करण : 2022।

अनुत्तरित प्रश्न : लघुकथा संग्रह : नरेश कुमार 'उदास'। प्रकाशक : प्रगतिशील प्रकाशन, एन–3/25, प्रथम तल, मोहन गार्डन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली–59। मूल्य : रु. 600/–मात्र। संस्करण : 2022।

पंच पल्लव : काव्य संग्रह : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 260/–मात्र। संस्करण : 2022।

टुकड़ों में बँटा दुख–सुख : कथा संग्रह : नरेश कुमार 'उदास'। प्रकाशक : प्रगतिशील प्रकाशन, एन–3/25, प्रथम तल, मोहन गार्डन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली। मूल्य : रु. 500/–मात्र। सं. : 2022।

ऐसे–वैसे जैसे भी : जनगीत संग्रह : बृजेन्द्र कौशिक। प्रकाशक : सर्जना प्रकाशन, 2/38, बसन्त विहार, कोटा–324009, राजस्थान। मूल्य : अमूल्य। संस्करण : 2022।

प्राप्त पत्रिकाएँ

साक्षात्कार : साहित्यिक मासिकी। सम्पादन : डॉ. विकास दवे। वार्षिक मूल्य : व्यक्ति 250/– , संस्थाएँ 300/– मात्र। सम्पर्क : साहित्य अकादमी, संस्कृति भवन, बाणगंगा भोपाल–462003, म.प्र.।

दि अण्डरलाइन : साहित्यिक मासिकी। सम्पादन : डॉ. प्रेमस्वरूप त्रिपाठी। मूल्य : 15/– मात्र। सम्पर्क : 127/122, डब्ल्यू–2, जूही कलां, कानपुर, उ.प्र.।

पुष्पक साहित्यिकी : साहित्यिक पत्रिका। सम्पादन : डॉ.अहिल्या मिश्र/आशा मिश्र 'मुक्ता'। वार्षिक मूल्य : रु0 300/–। सम्पर्क : 93/सी, राजसदन, वेंगलराव नगर, हैदराबाद–500038 (आं. प्र.)।

सरस्वती सुमन : साहित्यिक मासिकी। सम्पादन : आनन्दसुमन सिंह। वार्षिक मूल्य : 500/–। सम्पर्क : 'सारस्वतम' 1–छिब्बर मार्ग, आर्यनगर, देहरादून (उ.खण्ड)।

अनन्तिम : काव्य केन्द्रित त्रैमासिकी। संपादन : सतीश गुप्ता। द्विवार्षिक शुल्क : रु. 240/– मात्र। सम्पर्क : के–221, यशोदा नगर, कानपुर–208011, उ.प्र.।

न्यू इण्डिया समाचार : समाचार पाक्षिक। सम्पादक : जयदीप भटनागर। मूल्य : निःशुल्क। सम्पर्क : कमरा सं. 278, ब्यूरो ऑफ आउटरीच एंड कम्यूनिकेशन, सूचना भवन, द्वितीय तल, नई दिल्ली–03। ■

इण्टरनेट पर अविराम ब्लॉग

इण्टरनेट पर अविराम ब्लॉग का पुनर्प्रकाशन शीघ्र ही आरम्भ किया जायेगा। ब्लॉग का लिंक इस प्रकार है– http://aviramsahitya.blogspot.com

ब्लॉग पर प्रकाशनार्थ रचनाएँ ईमेल aviramsahityaki@gmail.com पर भेजी जा सकेंगी। इस सन्दर्भ में विस्तृत सूचना ब्लॉग पर जल्दी ही पोस्ट की जाएगी।

पंजीयन : UTTHIN/2012/48352

डॉ. बलराम अग्रवाल व श्याम बिहारी श्यामल के साथ मधुदीप जी

ज्योत्स्ना कपिल, योगराज प्रभाकर, सविता मिश्रा अक्षजा, महिमा श्रीवास्तव वर्मा आदि के साथ मधुदीप जी

लक्ष्मी शंकर बाजपेयी व सुभाष नीरव के साथ मधुदीप जी

डॉ. संध्या तिवारी को युवा दिशा सम्मान से सम्मानित करती भाभीजी श्रीमती शकुन्त दीप

ज्योत्स्ना कपिल के लघुकथा संग्रह का लोकार्पण करते भोपाल सूद, बलराम अग्रवाल, सतीश राज पुष्करणा, प्रभा सूद, ज्योत्स्ना कपिल के साथ मधुदीप जी

प्रेषक

प्रधान सम्पादिका
अविराम साहित्यिकी
एफ–488/2, गली संख्या–11, राजेन्द्र नगर, रुड़की–247667, जिला हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

प्राप्तकर्ता का नाम व पता

(मुद्रित पुस्तक पैकेट/Printed Book Packet)

प्रतिष्ठा में,